UNIVERSAL
LIBRARY

OU_180386

UNIVERSAL
LIBRARY

OSMANIA UNIVERSITY LIBRARY

Call No. H83/R27D Accession No. H 2970

Author रस्तोगी, विनोद ।

Title दरार । 1956

This book should be returned on or before the date last marked below.

दरारें

दरारें

[उपन्यास]

विनोद रस्तोगी

लखनऊ
दि अपर इंडिया पब्लिशिंग हाउस लिमिटेड
१९५६

प्रथम संस्करण १६५६

© १६५६, दि अपर इंडिया पब्लिशिंग हाउस लिमिटेड,
लखनऊ

Checked 1965

Checked 1969

मुद्रक
प्रेम प्रेस, इलाहाबाद

एक

सहसा आकाश मे बिजली चमकी।

बिजली की कडक से चौक कर चार वर्षीय मुन्ना अपनी बुआ सरला से सट गया। सरला सोती रही।

तभी वर्षा प्रारम्भ हो गयी। बौछार बरामदे मे आने लगी।

जब सरला के पैर भीगने लगे तब उसकी आँख खुली। उसने दरी ऊपर खिसका ली और फिर मुन्ना के ऊपर हाथ रखकर सोने का उपक्रम करने लगी।

"सो गये क्या?" सरला के कानो मे भाभी दया की धीमी आवाज आयी।

"ऊँह! क्या है?" ललित का उत्तर भी उसने सुना।

"बहन बनिये के ब्याज की तरह दिन दूनी रात चौगुनी बढ रही है और तुम हो कि आँखो पर काला चश्मा लगाये बैठे हो।" भाभी की इस बात ने सरला की नीद भगा दी। वह कान लगाकर भैया और भाभी की बात सुनने लगी। सुनती भी क्यो न, वार्ता का विषय भी तो वही थी।

सरला का भाई ललित पच्चीस वर्ष का युवक था। किसी तरह पिता ने बी० ए० तक पढाया था। उनका सपना था कि उनका होनहार

पुत्र डिप्टी कलक्टर बनेगा, जज बनेगा; किन्तु उनका सपना सपना ही रहा । बी० ए० का परीक्षा फल प्रकाशित होने के एक सप्ताह बाद ही वे इस ससार से चल बसे । ललित साल भर सड़को की खाक छानता रहा, नौकरी दिलाने वाले दफ्तर के सैकड़ों चक्कर लगा डाले पर डिप्टी कलक्टरी और जजी तो दूर किसी ने साधारण क्लर्की भी नही दी। घर मे उपवासो की स्थिति आ गयी। सौभाग्य से एक दिन उसे मार्ग मे शकुन मिल गयी। वह उसकी सहपाठिनी रह चुकी थी और वह रायबहादुर मनोहरलाल की पुत्री थी। बातो-बातो मे उसने ललित की वास्तविक स्थिति जान ली। करुणा से उसका हृदय भर आया। उसने अपने पिताजी से कह कर ललित को सौ रुपये मासिक की नौकरी दिला दी। तब से वह रायबहादुर मनोहरलाल के मनोहर जूट मिल मे क्लर्क था। किसी प्रकार गृहस्थी का छकड़ा लचर-पचर आगे बढ रहा था।

यद्यपि ललित के परिवार मे केवल पाँच प्राणी ही थे तद्यपि आज के इस मँहगाई के युग मे सौ रुपयो मे होता ही क्या है। बीस रुपये का मकान था। मकान भी बस गुजर-बसर योग्य ही था। कमरा नाम की वस्तु एक ही था। उसी मे घर गृहस्थी का सामान रहता था और वही रात को ललित अपनी पत्नी दया और दो वर्ष की मुन्नी के साथ सोता था। कमरे के आगे एक छोटा सा बरामदा था। उसी बरामदे के एक कोने मे चुल्हा था। रात को सरला अपने भाई ललित के चार वर्ष के पुत्र मुन्ना के साथ वही सोती थी। घर में केवल दो चारपाइयाँ थी जो कमरे मे रहती थी। सरला और मुन्ना फर्श पर ही सोते थे। बीस रुपये मकान के देकर जो अस्सी रुपये शेष रहते थे उन्ही मे किसी प्रकार घर का खर्च चलता था।

ललित को अगर कोई चिन्ता थी तो वह थी सरला के ब्याह की। वह अठारह वर्ष की पूर्ण युवती हो चुकी थी। उसके हाथ पीले करने की चिन्ता मे ही बिचारा ललित दिन-रात परेशान रहता था। दो-चार

जगह उसने बात भी चलायी थी पर लड़के वालों की माँग हजारो मे थी जिसे पूरा करने की शक्ति उसमे न थी। फलस्वरूप वह मन मसोस कर रह गया था। उसने अपनी पत्नी दया को इस विषय मे कुछ भी न बताया था। दया समझती थी कि उसे सरला की फिकर नही है। इसीलिए वह जब-तब चर्चा छेड देती थी। ललित हर बार मौन धारण कर लेता था।

उस रात को भी जब दया ने बात चलायो तो ललित मौन रहा। उसने कोई उत्तर नही दिया दया की बात का।

दया ललित के मौन से चिढ गयी। पति के मौन को उसने पत्नी की उपेक्षा और बहन के प्रति उदासीनता ही समझा।

"सुना नही क्या?" दया कुछ जोर से बोली।

"मै बहरा नही हूँ जो चीख रही हो।" ललित ने कहा और फिर करवट बदल ली।

"अभी तुम्हारे कान मे जूँ नही रेंगती। जब कुछ ऊँच नीच हो जायगा तब आटा-दाल का भाव मालुम होगा। दया बोली और फिर वह उठकर बैठ गयी।

ललित फिर भी मौन रहा।

दया उसके हृदय की पीडा को न समझ सकी और न वह उसकी आँखों की कोरो मे छलकने वाली आँसू की बूँदो को ही देख सकी।

"मोहल्ले-टोले वाले तो उँगली उठाने ही लगे है!" दया ने फिर प्रहार किया।

इस बार ललित तिलमिला गया। वह उठकर बैठ गया।

"क्या कहते है मोहल्ले-टोले वाले?" उसने कम्पित स्वर मे पूछा।

"कहने वाले की जीभ किसी ने पकडी है कि तुम्ही पकडोगे!"

"मै पूछता हूँ, क्या कहते है मोहल्ले वाले?" ललित के स्वर में तेजी आ गयी।

"कहेंगे नही! घर मे सयानी बहन बैठा रक्खी है।" दया ने तेज स्वर मे कहा।

सरला ललित और दया की बाते सुन रही थी। उसके हृदय मे एक कसक उठी और आँखे छलछला आयी। 'भैया-भाभी के कष्टों की जड मै ही हूँ' उसने सोचा। उसके मुख से एक दीर्घ नि श्वास निकल गया।

"मोहल्ले वालो को बहुत चिन्ता है तो दे क्यो नही देते दस-पाँच हजार! पल भर मे हाथ पीले कर दूँ सरला के। है कोई माई का लाल ऐसा कि सब उँगलियाँ उठाने वाले ही है।" ललित का क्रुद्ध स्वर गूँज गया। आवेश के कारण वह काँपने लगा। उसकी साँसो की गति तीव्र हो गयी।

तभी मुन्नी रोने लगी। दया उसे थपथपाने लगी। वह फिर सो गयी।

"मै कहती हूँ चीखते क्यो हो?" दया धीमे स्वर मे बोली। "क्या सरला को भी जगाने का विचार है?"

ललित कुछ बोला नही।

"रही लेने-देने की बात सो कौन किसे दे देता है। जो कुछ करना है, हमे ही करना है।" दया के स्वर मे कोमलता थी।

"तुम समझती हो कि मुझे कुछ चिन्ता नही है।" इस बार ललित का स्वर धीमा था। "तुम क्या जानो कि दिन-रात मै इसी चिन्ता की आग मे जलता रहता हूँ। जहाँ-जहाँ बात चलायी वही हजारो की माँग रक्खी गयी। अब तुम्ही बताओ मै कहाँ से लाऊँ इतनी रकम?"

दया को लगा, ललित रो पडेगा। उसे आत्मग्लानि हुई कि व्यर्थ ही आधी रात को यह चर्चा चलायी।

"मुझे मालूम न था यह सब।" दया ने गीले स्वर मे कहा। "तुमने मुझे बताया भी नही कभी, नही तो मै हमेशा तुम्हे क्यो कुरेदती रहती।"

ललित मौन रहा। बेबसी के आसू पीकर वह लेट गया।

"आखिर फिर क्या सोचा है?" दया ने मीठे स्वर मे पूछा।

"कुछ समझ मे नही आता।" नि श्वास छोडकर ललित बोला। "अपनी सरला सुन्दर है, घर-गृहस्थी के कामों मे होशियार है, पढ़ी-लिखी भी है। सोचा था, कोई तो लडका ऐसा मिलेगा जिसका संकल्प पैसा नहीं, लडकी ब्याहने का होगा।"

"आजकल लड़की कौन देखता है," दया दार्शनिक भाव से बोली, "सब पैसे के भूखे हैं, पैसे के!"

"तुम ठीक कहती हो, दया, तुम ठीक कहती हो।" ललित बुदबुदाया।

"न हो तो शकुन से ही.........?"

"यह क्या कह रही हो तुम?" ललित उचक कर बैठता हुआ बोला। "बहन के ब्याह के लिए शकुन के आगे हाथ फैलाऊँ। नहीं, मुझसे यह न हो सकेगा। उसने नौकरी दिला दी यही क्या कम है।"

"तब फिर क्या बहन को जीवन भर क्वाँरी ही रक्खोगे?"

"ब्याह होना न होना भाग्य की बात है।" ललित फिर लेट गया। "लगता है उसके हाथ मे ब्याह की रेखा है ही नहीं।"

"यह तो कायरो जैसी बात कह रहे हो तुम। ब्याह तो करना ही पड़ेगा, चाहे आज करो चाहे कल। कौन जीवन भर अपनी बहन या बेटी को घर में रख सका है?" दया ने व्यवहारिक बात कही।

ललित ने करवट बदल ली।

दया ललित की चारपाई पर जाकर उसके पैर दाबने लगी।

"अब सो जाओ। आधी रात हो गयी है।"

"जल्दी क्या है?" दया पैर दाबती रही। "कल तो इतबार है।"

"इतबार है तो क्या हुआ! कल भी काम पर जाना है।"

"क्या मिल बन्द नहीं है कल?" दया ने आश्चर्य से पूछा।

"मिल तो बन्द है, मगर शैलजा की वर्ष गाँठ है कल। रायबहादुर ने सुबह ही घर पर बुलाया है।" ललित ने कहा और फिर वह अपने पैर खीचने लगा।

"रोज चार मील पैदल आते-जाते हो। थक जाते होगे। रोज तो पैर दाब नहीं पाती, आज ही दाब लेने दो।" दया के स्वर मे याचना थी।

"तुम कौन दिन भर आराम करती रहती हो? सो जाओ, दया। अगर तुम पैर दाबती रहोगी तो मुझे नीद नहीं आयेगी।"

दया भारी मन लिए अपनी चारपाई पर आ गयी। मुन्नी के पास

लेट कर सजल दृष्टि से पति की ओर देखती रही।

ललित करवटे बदलता रहा। उसे नीद नही आ रही थी।

दूर किसी रईस के चौकीदार ने एक का घन्टा बजाया।

ललित ने करवट नही बदली। वह सो गया।

दया ने गन्दे आँचल से अपने आँसू पोछे और फिर वह भी सोने की चेष्टा करने लगी।

× × ×

सरला की आँखो की नीद उड गयी। उसने ललित और दया की बातचीत का हर शब्द सुना था। वह पहले से ही यह अनुभव करती थी कि भैया की चिन्ता और उदासी का कारण वही है। वह कई बार भगवान से शिकायत कर चुकी थी कि उसने उसे लडकी क्यो बनाया और यदि लडकी ही बनाया था तो उसके भाई को धन क्यों नही दिया। वह एकान्त में कई बार अपने भाग्य को कोस चुकी थी, रो चुकी थी, मृत्यु की कामना कर चुकी थी। उसे लगता था कि जैसे लडकी होना ही पाप है। वह दिन रात इसी उधेडबुन मे रहती थी कि किस प्रकार भाई की चिन्ता दूर हो।

यही समस्या उस रात को भी विशाल रूप धारण कर उसके सामने आ खडी हुई। अँधेरी, काली रात मे वह और भी भयानक लग रही थी। यदि वह लडका होती तो वह भाई को चिन्ता, व्यथा और उदासी देने के बजाय हर्ष, उत्साह और सहायता देती। पचास-साठ रुपये महीने वह भी कमाती और तब न तो मुन्ना को छोटी-छोटी चीजों के लिए रोना पडता, न भाभी को फटी और गन्दी धोतियाँ पहननी पडती और न भैया को ही हर रोज अपने कपडे घर में धोने पडते। लडकी होकर वह कुछ नही कर सकती। वह तो भैया-भाभी के ऊपर भार है। कितना अच्छा होता यदि वह जन्म लेते ही मर गयी होती।

तभी एक विचार उसके मस्तिष्क मे बिजली की तरह कौध गया। दो दिन पहले वह परोस मे गयी थी। तब उसने अखबार में पढा था कि एक युवती ने अपने निर्धन पिता को चिन्ता के भार से मुक्त करने के लिए

आत्म-हत्या का आश्रय लिया था। उसने गले मे फासी का फन्दा लगा लिया था। सरला ने विचार किया कि वह भी आत्म-हत्या द्वारा ही भैया को चिन्ता, उदासी और दुख से मुक्त कर सकती है। आत्म-हत्या के लिए कई रास्ते उसके सामने हैं। वह नदी मे डूब सकती है, अफीम खा सकती है, फाँसी लगा सकती है, रेल की पटरी पर लेट सकती है। उसे लगा कि आत्म-हत्या के अतिरिक्त और कोई मार्ग उसके सामने नही है।

सहसा मुन्ना ने उसके ऊपर पैर रख दिया। उसकी विचार-धारा भंग हो गयी। मुन्ना का पैर धीरे से हटाकर उसने करवट बदली और वह फिर सोचने लगी।

आत्महत्या ? हाँ, वह कल ही आत्म-हत्या करेगी। कल ? हाँ, कल! और परसों ही अखबार मे उसका नाम आयेगा। अखबार वाले लिखेगे कि ललित की बहन सरला ने आत्म-हत्या की। नही! इसमे तो भैया की बदनामी भी होगी; वे कही मुह दिखाने लायक नही रहेगे। तब तो कोई और उपाय सोचना होगा! आत्म-हत्या करके तो वह भैया को और दुख ही दे जायेगी। दुखः से पागल होकर वे भी कही कुछ ऊँच-नीच न कर बैठे! तब भाभी, मुन्ना, मुन्नी का क्या हाल होगा! नही, वह आत्म-हत्या नही करेगी, नही करेगी।

कोई सपना देखते-देखते मुन्ना चौक पडा। वह डरकर घिघियाने लगा। सरला ने तुरन्त करवट बदल कर उसे हृदय से सटा लिया।

"क्यो डरता है तू ? मै तेरे पास हूँ।" सरला ने धीमे स्वर मे कहा और फिर वह मुन्ना को थपथपाने लगी।

मुन्ना का डर दूर हो गया। वह नीद मे ही मुस्करा पडा।

"मै आत्म-हत्या नही करूँगी, नही ही करूगी।" सरला दृढता से बुदबुदायी।

वर्षा थम गयी। हवा मे तेजी आ गयी। बादल छट गये और आकाश मे तारे निकल आये।

दूर के चौकीदार ने दो घन्टे बजाये।

सरला की आँखे खुली रही। वह निर्निमेष दृष्टि से एक तारे को देख रही थी जो सबसे अधिक चमक रहा था।

"आत्म-हत्या समस्या का समाधान नही है।" वह फिर बुदबुदायी। "वह स्वय एक समस्या है। समस्या से समस्या का समाधान नही हो सकता।"

बाहर का तूफान थम गया था पर सरला के हृदय और मस्तिष्क मे भावो और विचारो की जो भयकर आँधी चल रही थी उसका कोई अन्त नही था।

ऊपर आकाश मे तारे खिले थे मानो तम की लता मे ज्योति के फूल हों और नीचे सरला की आँखो मे आँसू की बूँदें थी मानो सीपो में दो अनमोल मोती कैद हो।

दो

"अभी तक ललित नही आया क्या ?" रायबहादुर मनोहरलाल ने बरामदे मे आकर शकुन से पूछा।

"अभी तो नही आये, पिता जी ! आते ही होगे।" शकुन ने हाथ का समाचार-पत्र सामने पडी छोटी मेज पर रखकर कहा।

रायबहादुर अन्दर चले गये।

रायबहादुर मनोहरलाल नगर के प्रतिष्ठित और धनी व्यक्तियों मे थे। कई कम्पनियो के शेयर्स उनके पास थे। मनोहर जूट मिल्स कम्पनी लिमिटेड के तो वे मैनेजिग डायरेक्टर ही थे। नगर मे उनकी काफी इमारतें थी जिनसे अच्छा-खासा किराया आता था। उनके रहने की कोठी काफी बडी और सुन्दर थी। बम्बई की एक कम्पनी से कोठी के लिए बहुमूल्य फर्नीचर मगाया गया था। फर्श पर बिछे हुए कालीन राय-बहादुर स्वय ईरान से लाये थे।

लाखों की सम्पदा के स्वामी थे रायबहादुर मनोहरलाल, किन्तु उस सम्पदा को भोगने वाला कोई न था। दो पुत्रियाँ थी। मगर पुत्रियों की क्या ? वे तो परायी अमानत होती है। पुत्र का अभाव उनके मन मे रह रहकर कसक उठता था।

उनकी पत्नी का देहान्त तभी हो गया था जब उनकी बडी पुत्री शकुन बारह और छोटी पुत्री शैलजा दस वर्ष की थी। तब से शकुन और शैलजा आठ बसन्त देख चुकी थी। शकुन बी० ए० कर चुकी थी और शैलजा बी० ए० प्रीयवियम मे पढ रही थी।

राम और लक्ष्मण एक पिता के पुत्र थे पर उनकी माताये भिन्न थी। अत यदि उनके स्वभाव मे आकाश-पाताल का अन्तर था तो कोई विशेष आश्चर्य की बात नही है। शकुन और शैलजा एक ही माँ के गर्भ से उत्पन्न हुई थी और एक ही पिता की पुत्री थी, फिर भी उनके स्वभाव मे पूर्व-पश्चिम की विभिन्नता थी। शकुन सरल, सीधी और भारतीय परम्पराओं मे विश्वास रखने वाली मृदुभाषिणी युवती थी, शैलजा चपल, पाश्चात्य सभ्यता की पुजारिणी तथा दिन रात फैशन मे डूबी रहने वाली कटुभाषिणी थी। माँ का अतुल सौन्दर्य दोनो के भाग मे आया था। अन्तर इतना था कि शकुन का सौन्दर्य मर्यादाबद्ध सागर की भाति गभीर था और शैलजा का सौन्दर्य मर्यादा के बन्धन को तोडकर चचल गति से बहने वाली पहाडी सरिता की भाति था।

शकुन समाज-शास्त्र मे रुचि लेती थी। उसका विचार समाज-शास्त्र मे एम० ए० करने का था। शैलजा की रुचि काव्य मे थी। वह स्वय भी गीत लिखा करती थी और कवि सम्मेलनो तथा गोष्ठियो मे जाकर अपना सिक्का जमाती थी। उसका रग कुछ तो इसलिए जम जाता था कि वह मधुर स्वर मे हाव-भाव के साथ गाती थी और कुछ इसलिए कि वह सुन्दर और युवा थी।

शैलजा ने अपनी अठारहवी वर्ष-गाँठ के उपलक्ष मे अपनी जिद से ही कवि गोष्ठी का आयोजन किया था। इस आयोजन के मूल मे काव्य-प्रेम की भावना इतनी नही थी जितना कमल के समीप आने और उसकी रचनाये सुनने का लोभ। कमल कानपुर के लिए नया ही था। पहले वह फरुखाबाद मे रहता था। परिस्थितियो ने उसे गत वर्ष वहाँ से लाकर कानपुर पटक दिया था। वह पच्चीस वर्ष का दुबला-पतला

युवक था। पहली बार शैलजा ने जब उसे एक कवि सम्मेलन में देखा था तभी वह उस खोये-खोये से रहने वाले युवक की ओर आकर्षित हो गयी थी। उसके दर्दीले गीत सुनकर तो वह सुध-बुध हो खो बैठी थी। उससे बातचीत करके उसने इतना ज्ञात कर लिया था कि वह इस संसार में अकेला ही है और बेकारी की चक्की में पिसकर, नंगा-भूखा रहकर भी वह अपनी साहित्यिक साधना में लगा हुआ है। किसी एक मित्र के यहाँ रहता है और उन्हीं की दया से पेट भर जाता है। सात महीने बीत गये थे उस प्रथम भेंट को हुए। तब से वह बहुधा पत्र-पत्रिकाओं में तो उसके गीत पढ़ लेती थी पर सुनने का अवसर कभी नहीं मिला था। अपनी वर्ष-गाँठ पर कवि-गोष्ठी का आयोजन उसने इसीलिए किया था कि वह कमल के गीत सुन सके, उसके समीप आ सके। कवियों को निमंत्रण-पत्र बाँटने का कार्य ललित को सौंपा गया था और इसीलिए उसे इतवार के दिन भी बुलाया गया था।

ठीक आठ बजे ललित रायबहादुर की कोठी में पहुँच गया। शकुन बरामदे में बैठी थी।

"आ गये तुम! अभी-अभी पिता जी पूछ रहे थे।" कुर्सी से उठकर शकुन ने कहा।

"मुझे कुछ देर हो गयी। माफी चाहता हूँ।" ललित ने नीची दृष्टि करके कहा।

"तुम कितना बदल गये हो ललित!" कह कर शकुन फिर बैठ गयी।

"मैं नहीं बदला, समय बदल गया है।" ललित ने धीमे स्वर में कहा और वह अन्दर जाने लगा।

"रुको तो?" शकुन बोली। "माफी पिताजी से माँगा करो, मुझसे नहीं। मैं अब भी तुम्हारी पूर्व सहपाठिनी शकुन ही हूँ।"

"मगर मैं तो अब आपका नौकर हूँ।"

"अगर फिर कभी ऐसी बात कही तो ठीक नहीं होगा।" कुर्सी से उठकर ललित के पास आती हुई शकुन बोली। "नौकर तुम पिताजी

के हो सकते हो, मेरे नही।"

"मगर आप.....।" ललित हकलाया।

"और यह 'आप' भी मै नही सुनना चाहती तुम्हारे मुह से। समझे ?" कह कर शकुन मुस्करा पडी।

तभी अन्दर से साज श्रृगार किये बैग लटकाये आ गयी शैलजा। उसके लिए ललित एक नौकर के अतिरिक्त और कुछ नही था।

"तुम्हे सात बजे बुलाया गया था और तुमने आठ बजा दिये।" वह डपट कर बोली।

"जी.... देर हो गयी। माफी चाहता हूँ।" ललित ने हकला कर कहा।

"कितनी देर से यहाँ खडे हो ? आते ही अन्दर क्यों नही आये मेरे कमरे मे ?" शैलजा लाल-पीली होकर बोली।

"अभी-अभी आ रहा हूँ।"

"आयन्दा अगर काम मे लापरवाही हुई तो डैडी से कहकर एक दिन मे निकलवा दूंगी। फिर सिसी भी नही बचा सकेगी तुम्हे।" कहकर उसने तिरछी दृष्टि से शकुन को ओर देखा और फिर वह अपना बैग खोलने लगी।

ललित ने शकुन की ओर देखा। शकुन की दृष्टि मे क्षमा याचना थी।

"यह लो लिस्ट। सब कवियो को कार्ड दे आना।" ललित के हाथ मे लिस्ट देकर शैलजा बोली। "कार्ड डैडी के कमरे मे रक्खे है। जाओ।"

ललित रायबहादुर के कमरे की ओर बढा।

"ठहरो।" कहकर शैलजा उसके समीप पहुँच गयी। "देखो! लिस्ट मे एक नाम के आगे लाल निशान लगा है। और कोई चाहे आये या न आये मगर उस लाल निशान वाले कवि को जरूर आना चाहिए।" वह धीमे स्वर मे बोली। उसे डर था कि कही शकुन सुन न ले।

"जी, समझ गया।" कहकर ललित आगे बढ गया।

बैग झुलाती हुई शैलजा बरामदे मे आ गयी।

"सुनो तो शैल।" शकुन ने पुकारा।

"क्या है ?" शैलजा के स्वर मे रूखापन था।

"तुमको इस तरह बात नही करनी चाहिए थी उससे।" शकुन ने मन्द स्वर मे कहा।

"और क्या मै पूछ सकती हूँ कि क्यो ?" हाथ नचाकर, मुँह बनाकर, अभिनेत्रियो की मुद्रा मे शैलजा बोली।

"क्योकि ।"

"क्योकि वह तुम्हारा क्लास फेलो था।" बीच मे ही शैलजा बोल पडी। "क्लास फेलो जब होगा तब होगा, अब तो वह नौकर है हमारा।"

"नौकर भी मनुष्य होते है, शैल।" शान्त स्वर मे शकुन ने कहा।

"तुम नौकरो को सिर पर बिठा कर नाचो, सिसी, मै नही नाच सकती। मै अपनी नेचर से मजबूर हूँ। आई एम सॉरी। आई कान्ट डू इट।" कहकर शैलजा पोर्टिको मे खडी कार पर जाकर बैठ गयी। इससे पहले कि शकुन कुछ कहे, उसने कार स्टार्ट कर दी और कार एक झटके के साथ कोठी से बाहर निकल गयी।

शकुन को जीवन मे प्रथम बार क्रोध आया, वह भी किसी दूसरे पर नही, स्वय अपने पर। वह आराम कुर्सी पर लेट गयी।

रायबहादुर के कमरे से कार्ड का बन्डल लेकर जब ललित बाहर आया तब उसने शकुन को उदास मुद्रा मे ऑखे बन्द किये हुए पाया। वह उसकी ओर बढा। उसकी आहट पाकर शकुन ने ऑखे खोल दी।

"शैलजा की तरफ से मै माफी मॉगती हूँ, ललित !" कुर्सी से उठकर शकुन ने कहा।

"यह क्या कह रही हो तुम !" अनजान मे ही ललित के मुख से 'आप' के स्थान पर 'तुम' निकल गया। फिर उसने भूल-सुधार नही किया। "तुम दोनो मे धरती-आकाश का अन्तर देखकर मुझे हँसी आती है।"

"कौन धरती है और कौन आकाश ?" मुस्कराकर शकुन ने प्रश्न किया।

"जो हमसे दूर है, जिसे हम समझ नही पाते वही आकाश है और जो हमारे पास है, जिसके स्पन्दन मे हम अपने स्पन्दन का अनुभव करते है, वही धरती है।" ललित का क्लर्क कही जा छिपा था और उसका स्वतत्र व्यक्तित्व उभर रहा था। वह कहता गया—'शून्य के अतिरिक्त आकाश और कुछ नही है। धरती ठोस है, सत्य है। अब तुम्ही समझ लो कि कौन धरती है और कौन आकाश।"

"क्या मै आकाश हूँ ?" शकुन को शरारत सूझी।

"सम्भव है कुछ लोग चापलूसी करने के लिए तुम्हे आकाश बना दे, पर मेरे लिए तो आकाश कोई प्रशसा की वस्तु नही है। प्रशसनीय धरती है जो हमे जीवन देती है। तुम आकाश नही, धरती हो, शकुन। मेरी जीवनदात्री!" कहकर ललित जाने लगा।

"सुनो तो!" शकुन आगे बढकर बोली। "सरला का सम्बन्ध कही तय किया ?"

"बात चल रही है। जल्द ही हो जायेगा।" ललित झूठ बोल गया। उसकी दृष्टि नीची थी। एक पल रुककर बोला—"अब चलता हूँ! कही शैल जी आ गयी तो लेने के देने पड़ जायेगे।"

"वह तो कार लेकर चली गयी है।"

"मगर आज तो कालेज बन्द होगा। आज इतवार है।" ललित समझता था कि कालेज के अतिरिक्त शैलजा और कही जा ही नही सकती।

"वह कालेज नही, कालेज के मित्र के यहाँ गयी होगी।" शकुन ने कहा।

ललित उसका मुह देखने लगा।

"उसका एक सहपाठी है कामेश्वर! दोनो की खूब पटती है। उसी के यहाँ गयी होगी।" शकुन ने बात स्पष्ट की और वह फिर बोली—"मुझे तो लफगा सा लगता है। शैलजा ने उसमे न जाने क्या विशेषता देखी है।"

"अपनी-अपनी पसन्द की बात है।" कहकर ललित तीव्र गति से फाटक की ओर चल दिया।

"शाम को सरला को भी ले आना।" शकुन ने ऊँचे स्वर में कहा।

ललित रुक गया। मुड़कर बोला :

"वर्ष गाँठ तुम्हारी तो है नहीं।"

"तो क्या हुआ? भूलना मत!" शकुन ने आग्रह किया।

"चेष्टा करूँगा।" कहकर ललित बाहर चला गया।

शकुन बरामदे में खड़ी रही। वह सोचने लगी कि ललित ने ठीक ही कहा है। अपनी-अपनी पसन्द की बात है। उसके स्मृति-पटल पर अतीत के वे दिन उभर आये जब वह ललित के साथ पढ़ती थी। वह ललित को पसन्द करती थी; उसकी आँखो मे भविष्य का एक सुन्दर सपना था। पर उसका सपना चूर-चूर हो गया था क्योंकि ललित ने उसका प्रेम-प्रस्ताव ठुकरा दिया था। उसने कहा था कि झोपड़ी और महल का कोई साथ नहीं। उसके प्यार को ललित ने कोरी भावुकता ही कहा था। और तभी ललित का ब्याह हो गया था। शकुन के प्यार का गला घुट गया था।

पर प्यार कभी मरता नहीं। प्यार तो अजर है, अमर है। प्यार का अन्त विवाह ही नहीं है। ललित का विवाह किसी दूसरे से हो चुका है, पर इसमे क्या! उसको प्यार करने, उसके सुख-दुख मे शामिल होने का अधिकार तो शकुन को है ही।

"शकुन बेटी! जरा यहाँ तो आना!" रायबहादुर की आवाज ने शकुन की विचार-धारा भग कर दी।

"आई पिता जी।" कहकर वह अन्दर चल दी।

तीन

"कामेश्वर बेटा! जरा यहाँ तो आना।" बाबू श्यामसुन्दर ने उपन्यास की पाण्डुलिपि मेज पर रखते हुए पुकारा।

"अभी आया, मामाजी, पाँच मिनट मे।" कामेश्वर ने अपने कमरे से उत्तर दिया।

बाबू श्यामसुन्दर फिर पाण्डुलिपि पढने लगे।

बाबू श्यामसुन्दर नगर के ही नही वरन् प्रान्त के सर्वश्रेष्ठ प्रकाशक थे। उनके "सुन्दर प्रकाशन मन्दिर" की देश भर मे धाक थी। उत्तर प्रदेश के हाई स्कूल एव इन्टरमीडियेट बोर्ड मे उनकी दर्जनो पुस्तके चलती थी। उनका प्रकाशन क्षेत्र केवल हिन्दी तक ही सीमित न था। विश्वविद्यालय मे चलने वाली कई अॅग्रेजी की पुस्तके भी उन्होने प्रकाशित की थी। अन्य प्रकाशको का कहना तो यह था कि उन्होने अपनी पुस्तके बोर्ड मे घूस देकर लगवायी है पर बाबू श्यामसुन्दर हमेशा यही कहा करते थे कि किस्मत हमारे साथ है जलने वाले जला करे।

कोर्स की पुस्तको के अतिरिक्त वे साहित्यिक पुस्तके भी छापते थे। हिन्दी के कई प्रतिष्ठित लेखको तथा कवियो की कृतियो के कापीरायट खरीद कर वे लाखो कमा चुके थे। साहित्यकारों को कैसे उल्लू बनाया

जाता है यह वे खूब जानते थे। जब बड़े-बड़े महारथियो को वे दम भर में मात दे देते थे तब नये साहित्यकारो की गिनती ही क्या? प्रथम तो वे नौसिखिये लौडो को लिफ्ट देते ही न थे और यदि कभी किसी छोकरे मे प्रतिभा का आभास उन्हे मिल जाता था तो वे उसमे कानूनी दॉव-पेच वाला ऐसा कान्ट्रैक्ट करते थे कि फिर वह बिचारा जीवन भर के लिए उनके हाथ बिक जाता था।

कोर्स की पुस्तको तथा साहित्यिको के शोषण द्वारा उन्होने काफी रुपया एकत्र कर लिया था। आधुनिकतम यत्रो से युक्त उनका प्रेस दर्शनीय था। माल रोड पर पुस्तको की जो दूकान थी उसमे हर समय कम से कम पचास हजार का स्टाक रहता था। सिविल लाइन्स मे एक आलीशान बॅगला—"सुन्दर-सदन" हाल ही मे बनवाया था। उसी मे वे अपनी विधवा बहन गोमती और भानजे कामेश्वर के साथ रहते थे।

जब बाबू श्यामसुन्दर की नि सन्तान पत्नी की मृत्यु हो गयी थी तब उन्होने अपनी बहन गोमती के पुत्र कामेश्वर को अपने पास बुला लिया था। उस समय कामेश्वर सोलह वर्ष का था। तीन वर्ष बाद गोमती विधवा हो गयी और फिर वह भी अपने भाई के यहाँ आ गयी। तब से दोनो वही रह रहे थे। गत ६ वर्षो मे कामेश्वर ने अपने अध्ययन के साथ-साथ प्रेस का भी काफी काम सीख लिया था। बाबू श्यामसुन्दर ने मन ही-मन यह निश्चय कर लिया था कि वे अपनी समस्त चल-अचल सम्पत्ति का उत्तराधिकारी कामेश्वर को ही बनायेगे। गोमती भी यही समझती थी। वह प्रसन्न थी। वह सदैव इस बात का ध्यान रखती थी कि उसके भाई को कोई कष्ट न हो। वह यह नही चाहती थी कि बाबू श्यामसुन्दर दूसरी शादी करे क्योकि तब कामेश्वर के उज्जवल भविष्य का खटाई मे पड जाने का भय था।

समय के साथ धीरे-धीरे बाबू श्यामसुन्दर के अपनी समस्त सम्पत्ति का उत्तराधिकारी कामेश्वर को बनाने के निश्चय मे शिथिलता आ रही थी। इसके दो कारण थे। पहला कारण तो यह था कि उनके

कान मे कामेश्वर की कई शिकायते आयी थी। उसकी फिजूल खर्ची से तो वे परिचित थे ही पर जिस दिन उन्हे यह मालूम हुआ था कि वह बुरी सगत मे फँसकर धूम्रपान के साथ-साथ मदिरापान भी करने लगा है, उस दिन वे ठीक से भोजन भी नही कर सके थे। उनके हृदय पर भारी चोट पहुँची थी। उन्होने उसी रात को गोमती से भी इसका जिक्र किया था। गोमती ने उत्तर दिया था--"अभी बच्चा है, भैया। सिर पर जिम्मेदारी पडते ही ठीक हो जायेगा। आप दुखी न हो। मै समझा दूँगी उसे।" उन्हे यह तो मालूम नही हो सका था कि गोमती ने उसे समझाया है या नही पर इतना वे अवश्य देख और सुन रहे थे कि कामेश्वर की हरकते बन्द नही हुई थी। उनका यह भय विश्वास मे बदलने लगा था कि कामेश्वर बिगड चुका है और उनके मरने के बाद वह साल दो साल मे ही सारी सम्पदा फूँक देगा। इसकी कल्पना ही उन्हे कपा देती थी। इतना वे पूर्ण रूप से समझ गये थे कि कामेश्वर उनका उत्तराधिकारी बनने के योग्य पात्र नही है।

दूसरे कारण का सम्बन्ध उनके हृदय से था। रहरहकर आत्मज का अभाव उनके मन मे काँटे की तरह चुभा करता था। वे सोचा करते थे कि आज अगर अपना बेटा होता तो तो क्यो दूसरे का मुह ताकना पडता। प्रारम्भ मे कामेश्वर को पुत्र रूप मे देखने की जो चेष्टाये उन्होने की थी वे अब निरर्थक सी जान पडती थी। अपना अपना ही होता है और पराया पराया......!

बाबू श्यामसुन्दर ने उपन्यास की पाण्डुलिपि फिर मेज पर रख दी और उन्होने फिर कामेश्वर को पुकारा।

"अभी आया, मामाजी!" कामेश्वर ने उत्तर दिया।

तभी दूध का गिलास लेकर गोमती आ गयी।

"दूध पी लीजिये, भैया।" उसने मीठे स्वर मे कहा।

"किसी नौकर से भेज देती। तुमने क्यो कष्ट किया?" गिलास लेकर बाबू श्यामसुन्दर बोले।

"नौकरों का क्या भरोसा आजकल! न ठीक से नहाना न धोना! जाने जूठे हाथ भी ठीक से धोते है या नही।" कहकर गोमती कुर्सी पर बैठ गयी।

बाबू श्यामसुन्दर ने दूध पीकर गिलास मेज पर रख दिया।

"क्या कर रहा है कामेश्वर? दो बार बुला चुका हूँ।"

"कोई किताब पढ रहा है। आता ही होगा।" कहकर गोमती ने गिलास उठाया और वह बाहर चली गयी।

बाबू श्यामसुन्दर उठकर टहलने लगे।

तभी कामेश्वर ने कमरे मे प्रवेश किया। वह गोरा-चिट्टा सुन्दर जवान था। शार्क स्किन का सूट पहने था। कलाई मे रोमर घडी थी और सीधे हाथ की दो उँगलियो मे बहूमूल्य अँगूठियाँ। एक हीरे की थी; दूसरी मोती की। जेब मे शेफर्स कलम लगा था। काले, मुलायम बालो मे माँग बीच से निकाली गयी थी। मुह मे मगही पान के चार बीड़े दबे थे जिससे अधर लाल हो रहे थे। पूरा अभिनेता लग रहा था वह। बगल मे फिल्म फेयर की नयी कापी भी दबी थी।

"आ गये!" अपनी कुर्सी पर बैठकर बाबू श्यामसुन्दर बोले।

"जी, मामाजी!" कहकर वह दूसरी कुर्सी पर बैठ गया।

"इस उपन्यास के दो-चार परिच्छेद पढकर बताओ कैसा है।" कहते हुए बाबू श्यामसुन्दर ने पाण्डुलिपि कामेश्वर को थमा दी।

"मै तो पढ भी नही सकूँगा, मामाजी। किसका है? रायटिंग बहुत गन्दा है।" कामेश्वर ने पहला पृष्ठ देखकर कहा।

"बडे लोगो की लिखावट ऐसी ही होती है। यह उपन्यास भारत प्रसिद्ध मधुपजी का है। कोडियो उपन्यास लिख चुके है।" बाबू श्याम सुन्दर ने बताया।

"आप न जाने क्यों बडे लेखको के वर्क्स लेते है। उनमे अब रह ही क्या गया है? राटन! ट्रैश!! नाम बडे और दर्शन थोड। मै कहता

हूं, नयी प्रतिभाओ को प्रकाश मे लाइये, मामाजी।" कामेश्वर ने पाण्डु-लिपि मेज पर रख कर कहा।

"मै उपन्यास पर तुम्हारा मत चाहता हूँ, अपनी प्रकाशन-नीति पर नही।" चिढकर बाबू श्यामसुन्दर बोले।

"जी।" कहकर कामेश्वर ने पाण्डुलिपि उठा ली। वह पढने लगा। उपन्यास गभीर और मनोविश्लेषणपूर्ण था। पहला पृष्ठ ही पढना कठिन हो गया उसके लिए। उसकी रुचि सस्ते साहित्य के प्रति थी कामुकता पूर्ण अमेरिकन उपन्यास पढकर मानसिक भोग का आनन्द लेने वाले लाखो भारतीय युवको मे से ही था वह भी। उसे हिन्दी का वह उपन्यास बोझिल लगा।

"मुझे तो बिल्कुल पसन्द नही है।" कहकर उसने पाण्डुलिपि फिर मेज पर रख दी।

"क्यो?" बाबू श्यामसुन्दर ने प्रश्न किया।

"क्यो? बस पसन्द नही है, और क्यो?" कहकर कामेश्वर उठ खडा हुआ।

"पसन्दी-नापसन्दी का कारण होता है, आधार होता है। मै कहता हूँ, अमेरिकन उपन्यास न पढा करो। तुम्हारी रुचि विकृत कर दी है उन्होने।" बाबू श्यामसुन्दर कुछ कडे स्वर मे बोले। "और न यह फिल्म-फेयर ही उद्धार करेगा तुम्हारा।"

कामेश्वर ने सोचा कि बुरा फँसा। न जाने किस मनहूस का चेहरा देखकर उठा था। फिर उसे ध्यान आया कि उठते ही उसने दर्पण मे अपना ही चेहरा देखा था। यह सोच कर उसे हँसी आ गयी।

"मेरी बात पर आज हँस रहे हो तुम! मगर याद रखना.....।"

"जी, मै आपकी बात पर नही हँस रहा था, मामाजी। मै....मै... तो......।" कामेश्वर आगे न बोल सका।

'सुन्दर-सदन' के पोर्टिको मे कोई कार आकर रुकी।

कामेश्वर द्वार की ओर बढ़ा।

"ठहरो!" बाबू श्यामसुन्दर तेज स्वर मे बोले। "यह उपन्यास ले जाओ। पूरा पढ़कर मुझे इसकी कहानी सक्षेप मे सुनाना।"

कामेश्वर पर बज्रपात हुआ। लौटकर उसने पाण्डुलिपि उठा ली। उसी समय माली अन्दर आया।

"शैलजा बिटिया आयी है।" उसने कामेश्वर से कहा।

"शैलजा? कौन शैलजा?" बाबू श्यामसुन्दर ने कामेश्वर से प्रश्न किया।

"रायबहादुर मनोहरलाल की लडकी है। मेरे साथ पढ़ती है।" कहकर कामेश्वर बाहर जाने को उद्यत हुआ।

"यही भेज दो।" बाबू श्यामसुन्दर ने माली को आज्ञा दी।

माली चला गया।

मन मार कर कामेश्वर वही बैठ गया। पाण्डुलिपि मेज पर रखकर उसने शान्ति की साँस ली।

शैलजा ने कमरे मे प्रवेश किया।

बाबू श्यामसुन्दर को देखकर वह कुछ झिझकी। वह समझती थी कि कामेश्वर अकेला ही होगा।

"आओ बेटी! यहाँ बैठो।" कहकर बाबू श्यामसुन्दर ने एक कुर्सी की ओर सकेत किया।

शैलजा सिकुडी सी बैठ गयी। विचित्र दशा थी उसकी।

"तुम कामेश्वर के साथ पढती हो?" बाबू श्याममुन्दर ने पूछा।

शैलजा ने सिर हिला दिया।

"कैसे कष्ट किया?" उन्होने फिर पूछा।

कामेश्वर मन ही मन कुढ़ रहा था।

"आज मेरा जन्म-दिन है। उसी की दावत देने आयी थी।" शैलजा धीमे स्वर मे बोली।

कामेश्वर ने सोचा कि यदि वह मौन रहता है तो मामाजी न जाने क्या-क्या प्रश्न पूछ डालेगे। उसने बीच मे बोलना ही उचित समझा।

"यह मेरे मामाजी है, शैल!" वह बोला। "चोटी के प्रकाशक है। और यह रायबहादुर मनोहरलाल जी की सुपुत्री है, मामाजी! बहुत अच्छी कविता लिखती है।"

"अच्छा! तो तुम कविता भी लिखती हो?" बाबू श्यामसुन्दर प्रसन्न होकर बोले। "यह तो बहुत अच्छी बात है। कभी सुनाना मुझे।"

बात का रुख बदलता देखकर कामेश्वर प्रसन्न हो उठा।

"कविता लिखती तो क्या, हाँ कोशिश जरूर करती हूँ।" शैलजा सकुचित होकर बोली। "आज कवि-गोष्ठी है मेरे यहाँ। शाम को सात बजे। आप भी आने का कष्ट करे।"

"जरूर आऊँगा।" हँसकर बाबू श्यामसुन्दर बोले।

"कार्ड लाना तो मै भूल.......।"

"जब तुम खुद ही कह रही हो तब कार्ड की क्या जरूरत है। मै जरूर आऊँगा। देखूंगा, हमारी नयी पीढी किधर जा रही है, क्या लिख-पढ़ रही है।" बीच मे ही बाबू श्यामसुन्दर बोल पडे।

"गोष्ठी के बाद प्रीति-भोज भी है।" दृष्टि नीची करके धीमे स्वर मे शैलजा बोली।

"यह तो और भी अच्छी बात है।" कहकर बाबू श्यामसुन्दर हँसने लगे।

"अब आज्ञा दीजिए।" कहकर वह खडी हो गयी। उसने कामेश्वर की ओर देखा।

उसकी आँखो का भाव समझकर वह भी उठ खडा हुआ।

"मुझे प्रोफेसर शर्मा के यहाँ जाना है, मामाजी।" उसने डरते-डरते धीमे स्वर मे कहा।

"अरे! उधर तो मै भी जा रही हूँ। चलो, छोड दूंगी तुम्हे वहाँ।" शैलजा बोली।

"चलो।" कहकर कामेश्वर शैलजा के साथ चल दिया।

बाबू श्यामसुन्दर के अधरो पर एक मधुर मुस्कान खेल गयी।

बाहर से कार स्टार्ट होने की आवाज आयी। कार बाहर गयी और चौकीदार अन्दर आया। उसके पीछे 'राम ऐण्ड श्याम क०' का मैनेजर था। बाबू श्यामसुन्दर समझ गये कि वह कामेश्वर के बिल वसूलने आया है।

"आइए, बैठिए।" उन्होंने पास वाली कुर्सी की ओर संकेत किया।

मैनेजर बैठ गया।

चौकीदार बाहर चला गया।

"कहिये, कैसे कष्ट किया?" बाबू श्यामसुन्दर ने पूछा।

"काफी लम्बा बिल हो गया है छोटे बाबू का। उसी सिलसिले में आया था।" मैनेजर ने कहा।

"मगर दो महिने पहले तो हिसाब साफ कर दिया गया था। करीब पाँच हजार रुपये दिये थे। अब कितना है?" बाबू श्यामसुन्दर ने आश्चर्य से पूछा।

"साढे सात हजार।" कहकर मैनेजर ने बिलो की कापियाँ उनकी ओर बढा दी।

साढे सात हजार! बाबू श्यामसुन्दर का सिर चकरा गया। यह लडका तो रुपया बहाने पर तुला है। दो महीने मे साढे सात हजार का सामान!!

बिल देखकर वे चक्कर मे पड गये। एक-एक हजार की दो अँगूठियाँ! ढाई हजार का एक जड़ाऊ हार!! पाँच-पाँच सौ की दो जनानी घडियाँ!!! चार-चार सौ की पाँच साडियाँ!!! और यह सब सामान हवा मे उड गया। घर मे कोई भी चीज नही आयी।

"आप जानते है कि उसकी अभी शादी नही हुई है। फिर आप ऐसा सामान उसे देते क्यो है?" क्रुद्ध होकर बाबू श्यामसुन्दर बोले। उनका खून खौलने लगा था।

"जी. . . ।"

"मै आपको पहले भी मना कर चुका था। मै कुछ नही जानता।

जो सामान लाया है उसी से दाम वसूल करो।" आवेश मे आकर बाबू श्यामसुन्दर टहलने लगे।

"जी हम लोग तो मना करते है मगर छोटे बाबू लड़ने को तैयार हो जाते है।" मैनेजर विनम्र स्वर मे बोला।

"आप जानते है यह सब सामान कहाँ जाता है?"

"जी ....।"

"आवारा छोकरियो के घर। यह लडका मुझे मिटाने पर तुला है।" कहकर वे फिर बैठ गये। दोनो हाथो से वे अपना मस्तक दबाने लगे। उनके मस्तक की नसे फूल आयी थी।

मैनेजर चुपचाप बैठा रहा। उसे विश्वास था कि पैसा डूबेगा नही।

"कान खोल कर सुन लो," एक क्षण बाद बाबू श्यामसुन्दर बोले। "अगर अब आपने एक पाई का भी सामान उसे दिया तो मै जिम्मेदार नही हूँ। समझे! अब जाइए आप! कल साढ़े सात हजार का चेक पहूँच जायेगा।

मैनेजर चला गया।

बाबू श्यामसुन्दर की बेचैनी बढती गयी। काश! आज अपनी सन्तान होती! एक टीस सी उठी उनके हृदय मे! अब भी समय है। अभी कुछ नही बिगडा है। कुछ करना चाहिये। अपनी सन्तान! अपना बेटा!! अपना खून!!!

पलक मारते ही उन्होने निश्चय कर लिया। अपनी सन्तान! अपना बेटा!! अपना खून!!!

उठकर वे उस कोने मे गये जहाँ फोन रक्खा था। फोन उठाकर उन्होंने नम्बर मिलया।

"दैनिक विश्वमित्र कार्यालय।" उधर से स्वर आया।

"अवस्थी जी से बात कराओ।" बाबू श्यामसुन्दर ने कहा।

उनके स्वर मे सकल्प की दृढता थी।

चार

रायबहादुर की कोठी के बाहर आकर ललित ने रिक्शे के लिए इधर-उधर दृष्टि दौडायी। उसे कही रिक्शा न दिखायी दिया। प्रतीक्षा करना व्यर्थ समझ वह पैदल ही चल दिया। उसके हाथ मे कार्डों का बन्डल था, जेब मे शैलजा की दी हुई लिस्ट और रायबहादुर द्वारा दिये गये एक-एक रुपये के तीस नये नोटो की गड्डी थी, मस्तिष्क मे विचारो का बवडर था। वह सोच रहा था शकुन के बारे मे, बीते हुए विद्यार्थी जीवन के बारे मे। विचारो के सागर मे डूबता-उतराता वह सिर झुकाये मन्द गति से चला जा रहा था।

रिक्शे की घटी सुनकर वह चौक पडा। एक खाली रिक्शा उसकी बगल से निकला। रिक्शा रोककर वह उस पर सवार हो गया। रिक्शा आगे बढा।

ललित ने सोचा कि पहले उसी भाग्यशाली कवि के यहाँ चलना चाहिए जिसके नाम के आगे शैलजा ने लाल निशान लगाया है। जेब से लिस्ट निकाल कर उसने देखा। जिस नाम के आगे लाल निशान लगा था वह था—'कमल जी, द्वारा राममोहन मिश्र, ५५।८, राममोहन का हाता।'

"राममोहन के हाते चलो।" ललित ने रिक्शे वाले को आदेश दिया।

"यह किधर है, मालिक?" रिक्शे वाले ने पूछा।

"तुम्हे यह भी नही मालूम! कैसा रिक्शा चलाते हो?" हँसकर ललित बोला।

"अभी नया हूँ, मालिक।" कहकर रिक्शे वाले ने घटी बजादी।

"प्रयाग नरायन का शिवालय जानते हो?" ललित ने पूछा।

"वही, जहाँ औरतो का बाजार है।"

रिक्शे वाले की बात सुनकर हँसी आ गयी ललित को। बोला—"हाँ भाई वही। बस उसी के आगे है राममोहन का हाता।"

"समझ गया, मालिक।" कहकर रिक्शे वाला तेजी से पैर चलाने लगा।

ललित फिर अपने विचारो मे डूब गया।

इस बार उसकी विचार-धारा अतीत और वर्तमान के तटों से टकराती हुई बह रही थी। अतीत की सुखद स्मृति को वर्तमान का वैषम्य रह रह कर झकझोर देता था।

अतीत की स्मृति का आधार थी शकुन और वर्तमान की विषमता, बेबसी और पीडा का आधार थी सरला।

शकुन और सरला!

सरला और शकुन!!

"अन्दर चलूँ, मालिक?" रिक्शेवाले के प्रश्न से ललित चौक पड़ा।

रिक्शा राममोहन के हाते के फाटक पर खडा था।

ललित उतर पडा। उसने रिक्शेवाले को एक रुपये का नोट दिया।

"कितना लौटा दूँ, मालिक?" रिक्शेवाले ने बडी की जेब से रेजगारी निकालते हुए पूछा।

"अठन्नी।"

अठन्नी लेकर ललित हाते के अन्दर घुसा। जेब से लिस्ट निकाल

कर एक बार उसने फिर कमल का पता देखा और फिर मकानो के नम्बरो को देखता हुआ आगे बढने लगा।

पाँच मिनट बाद ही उसे अभीष्ट मकान मिल गया।

"कमल जो है क्या?" उसने आवाज दी।

एक क्षण बाद एक नवयुवक बाहर आया।

"कमल जी आप ही है क्या?" ललित ने पूछा।

"नही भाई!" नवयु ाक बोला। "वे आपको खन्ना पार्क मे मिलेगे।"

ललित ने प्रश्न भरी दृष्टि से नवयुवक की ओर देखा।

"इस गली के छोर पर एक छोटा सा पार्क है। वही मिल जायेगे।" कह कर नवयुवक अन्दर जाने लगा।

"सुनिये तो।" ललित ने पुकारा। "मै उन्हे पहचानूँगा कैसे? पार्क मे तो बहुत से लोग होगे।"

"आप उन्हे पहचान लेगे। तहमद और गजी पहने है। बाल बडे-बडे है। किसी एकान्त कोने मे बैठे या लेटे कविता गुनगुना रहे होगे।" हँसकर नवयुवक ने कहा और फिर वह अन्दर चला गया।

ललित आगे बढ गया।

गली के छोर पर पार्क था। वह अन्दर गया। मोहल्ले के बच्चे वहाँ खेल रहे थे।

उसने चारो ओर दृष्टि दौडायी।

एक बेंच पर तहमद ओर गर्जी पहने, बडे-बडे बालो वाला एक गौरवर्ण युवक आखे बन्द किये बैठा था।

ललित उसकी ओर बढा।

"क्षमा कीजियेगा," ललित बेंच के समीप पहुँचकर बोला। "क्या आपका ही नाम कमल जी है?"

"जी हाँ!" आँखे खोल कर ललित को ध्यान से देखता हुआ कमल बोला। "आपको कुछ आपत्ति है?"

"मुझे क्या आपत्ति हो सकती है !" कहकर वह बेंच पर बैठ गया। उसने देखा कि कमल की गजी फटी है और तहमद गन्दा है।

"आपका कार्ड है।" कहकर ललित ने कार्ड कमल की ओर बढा दिया। कार्ड लेकर कमल ने पढा। उसमे लिखा था :—

"प्रिय महोदय,

परमपिता परमेश्वर की अनुकम्पा से आज मेरी छोटी पुत्री शैलजा की अठारहवी वर्षगाँठ है। इसी उपलक्ष मे मैंने अपने निवास-स्थान, मनोहर विला, न्यू सिविल लाइन्स, मे सन्ध्या को सात बजे एक कवि-गोष्ठी का आयोजन किया है। गोष्ठी के पश्चात् प्रीति-भोज होगा। आप सादर निमन्त्रित हैं। आशा है आप अपनी उपस्थिति से मुझे अनुग्रहित करेंगे।

भवदीय

रायबहादुर मनोहरलाल"

कार्ड पढकर कमल ने फिर आँखे बन्द कर ली।

"आप आयेंगे न ?" ललित ने पूछा।

कमल ने आँखे खोलकर ललित की ओर देखा, फिर तहमद की टेंट से बीडी का बन्डल और दियासलाई निकालकर एक बीडी जलायी। एक कश खींचकर धुआ छोडता हुआ वह अनमने भाव से बोला:— "नही।"

"जी !" घबरा गया ललित।

"मैं नही आ सकूँगा।" कमल ने कहा और फिर एक कश खींचा।

"मगर... मगर आप कवि-सम्मेलनो मे जाते तो है।"

"जाता तो हूं, मगर उन्ही मे जो ढग के होते है। शादी-ब्याह, टीका, जनेऊ, जन्म-दिन आदि के उपलक्ष मे आयोजित सम्मेलनो मे मैं भाग नही लेता।" कमल ने कुछ तेज स्वर मे कहा।

"मगर क्यो ?" ललित ने प्रश्न किया।

"आप लोगो ने कवियो को भाड समझ रक्खा है क्या ? घर मे

कोई काम-काज हुआ और बुला लिया कवियो को। अगर मनोरजन ही करना है तो मुजरा क्यो नही कराते ?" आवेश मे आकर कमल का स्वर क्रुद्ध हो गया।

ललित को कोई उत्तर नही सूझा। वह चुपचाप सिर नीचा किये बैठा रहा।

"कह देना रायबहादुर से जाकर कि प्रीति-भोज के लालच मे आने वाले लोगो मे मै नही हूँ। समझे! अब आप जा सकते है।" कहकर कमल ने फिर आँखे मूद ली और वह कुछ गुनगुनाने लगा। बीडी उसने दूर फेक दी।

ललित को पार्क घूमता सा दिखाई दिया। उसे लगा जैसे बेच हिल रही है, बच्चे हवा मे उड रहे है। वह जानता था कि यदि कमल न गया तो शैलजा उसपर बहुत बिगडेगी और फलस्वरूप उसकी नौकरी खटाई मे पड जायेगी। एक ओर कमल को अवश्य लाने के लिये शैलजा की कठोर आज्ञा थी, तो दूसरी ओर वहाँ न जाने का कमल का दृढ सकल्प था। वह क्या, करे, क्या न करे!

"अगर आप न आये तो .. तो मुझे नौकरी से निकाल दिया जायेगा।" ललित ने कुछ सोचकर धीमे और उदास स्वर मे कहा।

कमल ने गुनगनाना बन्द कर दिया। आँखे खोलकर उसने प्रश्न भरी दृष्टि ललित पर डाली।

"शैलजा जी चाहती है कि आप अवश्य आये। यह देखिये। उन्होने आपके नाम के आगे लाल निशान भी लगा दिया है।" कह कर ललित ने लिस्ट कमल को थमा दी।

कमल ने लिस्ट बिना देखे ही लौटा दी। उसकी स्मृति-पट पर एक कवि सम्मेलन का वह दृश्य उभर आया जब उसका शैलजा से प्रथम परिचय हुआ था और जब प्रथम परिचय मे ही शैलजा ने उसके निकट—बहुत निकट आने की असफल चेष्टा की थी। उसी दिन वह समझ गया था कि शैलजा तितली है—चचल, शोख और स्वच्छन्द!

"अगर आप न आये तो वे मुझे नाकरी से निकाल देगी। मै बेकार हो जाऊँगा; मेरे बाल-बच्चे भूखो मर जायेगे।" ललित का स्वर भावी की आशका से काँप गया।

कमल ने ललित की ओर देखा आर फिर कुछ देर तक देखता ही रहा।

ललित को आशा की किरण दिखाई दी।

"बेकारी और भूख की ज्वाला को तपन का अनुभव मुझे है।" रुक-रुक कर कमल बोला। "मै किसी को भी उस आग मे झोकने का अपराध नही कर सकता।"

"तो आप. .।"

"मै आऊँगा! अवश्य आऊँगा!!" कहकर कमल ने दूसरी बीडी जलाई।

"बहुत-बहुत धन्यवाद।" कृतज्ञता के स्वर मे ललित बोला और फिर उठकर पूछा—"आपके लिए कार भज दूँ या आप रिक्शे-ताँगे से आयेगे?"

कमल ने दृष्टि उठायी।

"अगर रिक्शे-ताँगे से आये तो किराया दे दूँ।" कहकर ललित ने जेब से नोटो की गड्डी निकाल ली।

"गड्डी जेब मे रख लीजिये।" कमल का स्वर कठोर हो गया। "मै पैदल ही आऊँगा।"

"जी .. ?"

"अब जाइये आप।" कमल ने कहा। वह फिर आँखे बन्द करके गुनगुनाने लगा।

ललित ने गड्डी जेब मे रख ली। वह पार्क के फाटक की ओर चला।

फाटक पर पहुँच कर उसने मुड़कर देखा।

कमल तीसरी बीड़ी जला रहा था।

ललित को लगा जैसे वह गोष्ठी मे सम्मिलित होकर अपने आदर्शों ौर सिद्धान्तो का गला घोट रहा है। उसी की पीड़ा और व्यथा उसकी ात्मा को कोच रही है। और वह उस पीडा एव व्यथा को भस्म रने के लिये बीडी की आग का आश्रय ले रहा है।

कमल के प्रति अपार श्रद्धा लेकर ललित पार्क से बाहर निकल ाया। 'गरीबी स्वाभिमान का गला नही घोट सकती।" वह बडबडाया।

हाते से बाहर निकल कर उसने फिर रिक्शा किया और वह न्य कवियो को कार्ड देने चल पडा। वैसे तो कानपुर के हर मोहल्ले दर्जनो युग प्रवर्तक-आचार्य और युग निर्माता कवि रहते है और यदि बको आमत्रित किया जाये तो सख्या सैकडो पर पहुँचे, किन्तु शैलजा चुने-चुने कवियो को ही बुलाया था। कमल के अतिरिक्त लिस्ट दस नाम और थे। उन्हे काड देने के लिए घन्टे भर का समय पर्याप्त ा।

दस मे से प्रत्येक कवि ने पहले तो स्वाभाववश नखरे दिखाये पर ाद मे आने के लिए राजी हो गये। वास्तविकता तो यह थी कि वे ायबहादुर का निमत्रण पाकर प्रसन्न थे। रायबहादुर को कोठी मे ायोजित कवि-गोष्ठी मे सम्मिलित होना उनके लिये परम सौभाग्य ी बात थी। कवि को सुनाने का रोग तो होता ही है। सुनने ाला चाहिए। फिर सुनने वाले के कान भले थक जाये मगर मजाल कि कवि महोदय का मुह थके। हाँ, बीच-बीच मे दाद, चाहे वह झूठी ी क्यो न हो, मिलती रहनी चाहिए।

ललित ने सवारी के बारे मे पूछा तब हर एक ने रिक्शे-ताँगे से ही ाने की इच्छा प्रकट की। कार से जाने मे किराये का ढग तो था ही। ललित ने हर एक को दो-दो रुपये दे दिये। ललित समझ गया क इन दो रुपयो से लान्ड्री मे 'अरजेन्ट' कपडे धुलाये जायेगे, शेव कराया ायेगा, जूतो पर पालिश करायी जायेगी। गरज यह कि रायबहादुर े यहाँ जाने योग्य चोला बनाया जायेगा।

निमत्रण-पत्र बाँटकर ललित ने सन्तोष की साँस ली। 'मेघ पुष्प' में जाकर उसने एक प्याली चाय का आर्डर दिया और फिर एक खाली कुर्सी पर बैठकर कमल तथा अन्य कवियो के बारे मे सोचने लगा। उसे लगा कि परिस्थितिओ की आँधी मे भी अडिग रहने वाला कमल ही है; अन्य कवि झुक गये है, वे अपने को समय के हाथो बेच चुके है। अपने अस्तित्व को सुरक्षित रखने के लिए हर एक ने किसी न किसी गुट से अपना नाता कर लिया है जब कि कमल गुटबाजी से दूर रहकर साधना कर रहा है। उसकी रचनाओ मे किसी वाद की मोहर नही है, वह भी वही लिखता है जो उसका हृदय अनुभव करता है।

वेटर चाय का प्याला मेज पर रख गया। गर्म चाय से धुए की नागिन बल खाती, इठलाती निकल रही थी।

"और सब तो धुये के बादल की तरह मिट जायेंगे पर कमल जिन्दा रहेगा।" ललित के मुख से निकल गया।

चाय की प्याली उठाकर उसने मुख से लगा ली।

पाँच

जैसे ही कार बँगले से निकलकर सड़क पर आयी, शैलजा बोली —

"तुम्हारे मामा तो अजीब आदमी हैं।"

शैलजा कार चला रही थी। उसके काले-घुघराले बाल हवा में लहरा रहे थे। हल्के धानी रंग की रेशमी 'साड़ी में वह परी सी लग रही थी। आँखों पर बहुमूल्य चश्मा लगा था। धूप के चश्मे का प्रयोग वह आँखों को धूप की तेजी से बचाने के लिए कम, अपने सौन्दर्य में चार चाँद लगाने के लिए अधिक करती थी।

कामेश्वर उसके पास ही बैठा था। शैलजा की बात सुनकर बोला —

"लाखों में एक हैं मेरे मामाजी।"

"तभी तो उन पर फूलते हो तुम।" कहकर शैलजा हँस पड़ी।

शैलजा के व्यंग्य को कामेश्वर ने समझ तो लिया पर वह बात को घुमा कर बोला —

"मैं अगर फूलता हूँ तो सिर्फ एक चीज पर।"

शैलजा ने प्रश्न भरी दृष्टि से उसकी ओर देखा।

"मैं अपने दिल पर फूलता हूँ।" कामेश्वर अपने हृदय पर हाथ रखकर बोला। "प्यार को किसी सहारे की जरूरत नहीं होती। सहारा

तो सौन्दर्य लेता है।"

कामेश्वर ने अपना हाथ शैलजा के कन्धे पर रख दिया।

"प्यार किसी का सहारा नही लेता?"

"नही।" कामेश्वर के हाथ का दबाव बढ़ गया।

"माई गाड! क्या एक्सीडेन्ट कराने का इरादा है? हाथ तो हटाओ।" कहकर शैलजा ने हार्न बजाया।

कामेश्वर ने मुस्कराकर हाथ हटा लिया।

"और सौन्दर्य किसका सहारा लेता है?" शैलजा ने हँसकर पूछा।

"मेक-अप का। बिना पाउडर और लिप-स्टिक के रूप दो कदम भी नही चल सकता।"

शैलजा ने कार मे लगे हुए दर्पण मे अपना मुख देखा। पाउडर तो ठीक था पर लिप-स्टिक गहरी हो गयी थी। मुस्करा कर बोली:—

"जल्दी मे थी इसी से लिप-स्टिक गहरी हो गयी।" और फिर कामेश्वर के बालों की ओर देखते हुए उसने कहा—"और तुम्हारे बालो में भी तो तेल बुरी तरह चमक रहा है।"

कामेश्वर ने बालो पर हाथ फेरा। हाथ मे तेल की स्निग्धता आ गयी। क्षण भर के लिए लज्जा से उसका मुख लाल हो गया। फिर हृदय पर हाथ रखकर, नि श्वास छोडते हुए, अजब अन्दाज मे बोला.—

"शैल! यह तेल की चिकनाई नही, मेरे प्यार की चिकनाई है। तुम्हे पास पाकर मेरे दिल का प्यार बह चला है।"

"प्यार की इस बाढ़ मे कही दुनिया डूब न जाये।" कहकर शैलजा हँस पडी।

कामेश्वर ने भी हँसने का प्रयास किया पर हँसी अधरो मे उलझ कर रह गयी। अपनी पराजय पर वह खिन्न हो उठा।

कार तीव्र गति से माल रोड की ओर बढी चली जा रही थी।

"कहाँ चलना है?" कामेश्वर ने कुछ देर बाद पूछा।

"रीगल?" कहकर शैलजा ने हार्न बजाया।

बीच सडक पर मस्ती से सायकिल चलाने वाले एक विद्यार्थी ने जैसे हार्न सुना ही न हो। वह अपनी धुन मे मग्न रहा।

पास आकर शैलजा ने इतनी जोर से हार्न बजाया कि विद्यार्थी चौक पडा और सायकिल किनारे ले जाने के बजाय हडबड़ा कर गिर पडा। शैलजा ने हँसकर कार आगे बढा दी।

"अन्धे होकर चलते है लोग।" वह बोली।

"वे जान-बूझ कर मरना चाहते है।" कहकर कामेश्वर ने सिगरेट सुलगायी और फिर धुये का गोला बनाता हुआ बोला—"अगर मेरा बस चले तो मै लडकियो और खास तौर से सुन्दर लड़कियों को ड्राइविग-लायसेन्स ही न दूँ। लडकियो की कार के नीचे आकर मरने वालो की कमी नही है आजकल।"

"और मेरा बस चले तो लड़को को और खास तौर से रोमियो टायप के लड़को को लायसेन्स कभी न दूँ।" शैलजा ने कृत्रिम गभीरता से कहा।

"क्यो ?"

"क्योकि वे चलाते तो कार है पर उनकी आँखे लगी रहती है सडक पर चलने वाली लडकियो की तरफ। इसीलिए सैकड़ो एक्सी-डेन्ट रोज होते है।" कहकर शैलजा हँस पडी।

"और अगर कार पर रोमियो और जूलियट दोनो हुये तो ?" शरारतपूर्ण मुस्कान के साथ शैलजा की ओर देखते हुये कामेश्वर ने प्रश्न किया।

"तो .. तो मे गाड हेल्प दी पेडेस्ट्रियन्स।"

कार तब तक रीगल के सामने पहुँच चुकी थी। रविवार होने के कारण उसमे मार्निग-शो था। चित्र था—रोमन हालीडे।

"रोमन हालीडे अच्छा पिक्चर है। मैने इसका रिव्यू फिल्म-फेयर मे पढ़ा है।" कामेश्वर बोला।

शैलजा ने कार किनारे लगा दी।

कामेश्वर ने उतर कर बालकनी के दो टिकट ले लिये।

दोनों ऊपर पहुँचे और एक एकान्त कोने मे जाकर बैठ गये।

चित्र प्रारम्भ होने मे देर थी।

"क्या प्रेजेन्ट दे रहे हो मुझे ?" शैलजा ने पूछा।

"मेरे पास है ही क्या देने को ?" हँसकर कामेश्वर बोला। "एक दिल था वह कभी का दे चुका हूँ।"

"अच्छा ! मुझे तो मिला नही अब तक ! क्या उसकी रसीद है तुम्हारे पास ?" शैलजा के स्वर मे शरारत थी।

"रसीद पाने की ही आशा मे जी रहा हूँ।" कहकर कामेश्वर ने उसके हाथ पर अपना हाथ रख दिया।

शैलजा ने अपना हाथ नही खींचा।

तभी हाल की बत्तिया बुझ गयी और सामने वाले बडे सफेद पर्दे पर काली-सफेद तस्वीरे आने-जाने लगी।

शैलजा पूरे मनोयोग से न्यूज-रील्स देख रही थी, किन्तु कामेश्वर का ध्यान कही और था। वह सोच रहा था अपने विषय मे, शैलजा के विषय मे, उसके और अपने सम्बन्ध के विषय मे।

कामेश्वर प्रारम्भ से ही स्वच्छन्द प्रकृति का था। बन्धनो से उसे चिढ थी। और तो और, ब्याह को भी वह व्यर्थ का बन्धन और अनावश्यक उत्तरदायित्व समझता था। प्यार के क्षेत्र मे भी वह स्वच्छन्दता का पक्षपाती था। वह अनेक युवतियों को प्यार के रगीन स्वप्न दिखाकर पथभ्रष्ट कर चुका था, शादी का प्रलोभन देकर उनका जीवन नष्ट कर चुका था। जहाँ प्यार की रगीनियाँ और शादी के प्रलोभन असफल रहे थे वहाँ उसने पैसे से काम लिया था। उसके लिए प्यार का अर्थ था वासना, नारी की उपयोगिता थी काम-तृप्ति।

शैलजा को जिस दिन प्रथम बार कालेज मे देखा था उसी दिन से वह उसकी ओर आकृष्ट हो गया था। जब उसे ज्ञात हुआ कि शैलजा भी आधुनिक विचारो की लडकी है तब उसे अपार हर्ष हुआ

था और उसने समझ लिया था कि उसपर विजय पाना अत्यन्त सरल है, किन्तु उसकी वह धारणा निर्मूल सिद्ध हुई थी। शैलजा स्वतत्र विचारो की थी और इसीलिए वह उसमे घुल-मिल भी गयी थी, परन्तु उसने कामेश्वर को सीमा का उल्लघन कभी नही करने दिया था। कामेश्वर इसे अपनी करारी हार मानता था। कालेज के अधिकाँश विद्यार्थी यही समझते थे कि उसने शैलजा को जीत लिया है; उसके कुछ अतरग मित्रो ने उसे बधाई भी दी थी और उसने मौन रहकर उनकी बधाइयो को स्वीकार भी कर लिया था, किन्तु वास्तव मे मित्रो की बधाइयाँ उसके गालो पर तमाचो की तरह थी।

कामेश्वर यदि कभी किसी लडकी से पराजित हुआ था तो शैलजा से। इस पराजय को जय मे परिवर्तित करने के लिए वह मन-ही-मन नाना योजनाये बनाया करता था, परन्तु शैलजा न जाने किस मिट्टी की बनी थी कि उसका कोई रग उसपर चढता ही न था। वैसे वह उससे हँसती-बोलती थी; उसके साथ घूमती-फिरती थी, कभी-कभी प्यार की बाते भी कर लेती थी; परन्तु इससे आगे एक ऐसी लक्ष्मण-रेखा थी जिसे पार करने की न तो कभी उसी ने उत्सुकता दिखाई थी और न कामेश्वर को ही ऐसा प्रोत्साहन दिया था कि वह उस रेखा को पार करने का दुसाहस कर सके। समीप की यह दूरी कामेश्वर की रग-रग मे विष बनकर समा चुकी थी और वह उसके प्रभाव से पागल सा हो उठा था। शैलजा को पाना, उसका मान-मर्दन करना ही उसके जीवन का ध्येय बन चुका था।

मध्यान्तर होने पर जब हाल पुन. प्रकाशित हो उठा तब कहीं जाकर कामेश्वर की विचार-धारा भग हुई।

"कैसा लग रहा है पिक्चर?"

शैलजा के प्रश्न से वह चौक सा पडा।

"बहुत अच्छा।" उसने धीमे स्वर मे उत्तर दिया। फिर एक क्षण रुक कर बोला—"बाहर चल रही हो?"

"नही ! तुम्हे जाना है क्या ?'

"यहाँ तो सिगरेट पी नही सकता।" कहकर उठ खडा हुआ और फिर मुस्कराने की चेष्टा करता हुआ बोला—"तुम्हारे लिए कोई कोल्ड-ड्रिंक भेज दूँ ?"

"कोल्ड-ड्रिंक्स तुम्हे ही मुबारक हो।" कहकर शैलजा हँस पडी।

कामेश्वर बाहर चला गया।

शैलजा उसके विषय मे सोचने लगी।

शैलजा प्रकृति से उतनी स्वतत्र नही थी जितनी फैशन से। स्वतत्र होना, मित्रो के साथ हँसना-बोलना, घूमना-फिरना वह नये फैशन का एक प्रमुख अग समझती थी। इसीलिए वह अपनी ही जिद से ऐसे कालेज मे गयी थी जिसमे सहशिक्षा थी। कामेश्वर सुन्दर था, शिष्ट था, वाक्यपटु था। फलस्वरूप वह बहुत शीघ्र उसकी मित्र बन गयी थी। कामेश्वर जब प्यार की बाते करता था तब उसे बुरा लगता हो ऐसी बात नही थी। वह प्यार को जीवन का अनिवार्य अग मानती थी; परन्तु उसके लिए प्यार शरीर की भूख के लिए नही, मन की तुष्टि के लिए था। वह 'प्लेटोनिक लव' मे विश्वास करती थी। कभी-कभी जब कामेश्वर कोई अनाधिकार चेष्टा करता था तब वह क्रुद्ध होकर उसे डाँट देती थी। फिर भी वह उससे बिना मिले रह नही सकती थी। यही उसकी एक सबसे बडी दुर्बलता थी।

कामेश्वर आकर अपने स्थान पर बैठ गया। जो लोग धूम्रपान के विचार से बाहर चले गये थे वे धीरे-धीरे आने लगे। हाल की बत्तियाँ बुझ गयी और रगीन स्लाइडे दिखाई जाने लगी।

"तुम्हारा नाम किसी पडित ने बहुत सोच-समझ कर रक्खा है।" शैलजा का हाथ अपने हाथ मे लेकर कामेश्वर बोला।

"अच्छा वह कैसे ?"

"तुम सचमुच पत्थर हो। कोई मरता है या जीता है, तुम्हे इसकी चिन्ता नही।" कामेश्वर ने भावुकता से कहा।

"कौन मर गया?" शैलजा के स्वर मे कृत्रिम आश्चर्य था।

"यह भी खूब रही। कोई तुम्हारे प्यार मे मरा जा रहा है और तुम्हे पता ही नही।" कामेश्वर बोला और फिर शैलजा का हाथ तनिक जोर से दबा कर कहा—"शैल! अब मै तुम्हारे बिना एक पल भी जिन्दा नही रह सकता।"

"यह तो कई बार कह चुके हो तुम।"

"मेरी बात को हँसी मे न उडाओ, शैल। आज तुम्हारा बर्थ-डे है! क्यों न हम आज ही अपना एन्गेजमेन्ट भी अनाउन्स कर दे।" कामेश्वर के स्वर मे आग्रह था।

"माई गॉड! मैने तो कभी सोचा ही नही था इस बारे मे। आर यू सीरियस अबाउट दिस?" शैलजा ने अपना हाथ खीच कर पूछा।

"हाँ, डियर! बोलो, मेरा प्रपोजल मजूर है?"

"दिस इज अ सीरियस मैटर? सोचने के लिए टायम दो।" कुछ गभीर होकर शैलजा बोली—"और फिर अभी जल्दी ही क्या है? लेट अस बी ग्रेजुयेट्स फर्स्ट।"

"ग्रेजुयेट होने मे महीनों की देर है और मेरे लिए एक-एक पल भारी है।" आतुर होकर कामेश्वर ने कहा।

"बट आई मस्ट थिक अबाउट इट। मुझे सोचने का मौका दो, कामेश्वर। मै जल्द ही अपना जवाब दे दूँगी।"

शैलजा का वाक्य समाप्त होते ही चित्र प्रारम्भ हो गया। फिर कामेश्वर कुछ नही बोला।

शैलजा का मन फिर चित्र देखने मे नही लगा। वह कामेश्वर के प्रस्ताव पर ही सोचती रही। उसने सोचा—प्रस्ताव बुरा नही है। कामेश्वर को वह पसन्द करती थी। उसे विश्वास था कि वह उसे सुखी और प्रसन्न रखने के लिए आकाश-पाताल एक कर देगा। तभी उसके हृदय ने शका की। उसने कही पढा था कि एक अच्छा प्रेमी अच्छा पति नही बन सकता। कामेश्वर अच्छा प्रेमी तो है पर अच्छा

पति ..। और यह प्रश्न दीर्घ आकार का होकर उसकी आँखो के सामने घूमने लगा।

कामेश्वर की आँखे तो पर्दे पर थी पर वह अपनी समस्त चेतना शैलजा के मनोभावो को पढने मे लगाये था। उसे यह समझने मे देर नही लगी कि शैलजा का ध्यान चित्र ओर की नही है। विश्वास और आशा की लहर उसके अग-अग मे दौड गयी। उसने सोचा—इस अमोघ अस्त्र की चोट शैलजा नही सह सकेगी। उसे झुकना पडेगा—बहुत शीघ्र झुकना पडेगा। और फिर . .। एक विचित्र मुस्कान उसके अधरो पर खेल गयी।

चित्र समाप्त हो गया। हाल की तरह कामेश्वर का मस्तिष्क भी प्रकाश से पूर्ण हो उठा। उसने शैलजा की ओर देखा। शैलजा के नेत्र स्वत. झुक गये।

कामेश्वर झूम उठा। मकडी के रेशमी जाल मे मक्खी आखिर फँस ही गयी, उसने मन-ही-मन सोचा।

कार जब फूल बाग को पीछे छोडकर आगे बढने लगी तब कामेश्वर बोला—

"मुझे घर छोड दो।"

"वाह! यह कैसे हो सकता है। लच लेकर जाना।" शैलजा के स्वर मे आग्रह था।

"डिनर तो तुम्हारे यहाँ लेना ही है।"

"डिनर तो मेरे बर्थ-डे के सिलसिले मे है।"

"और लच ?"

शैलजा कोई उत्तर न दे सकी। उसने अकारण ही हार्न बजा दिया।

"क्या .. क्या मै समझू कि मेरे सवाल का जवाब मिल गया ?" कहकर कामेश्वर ने उसके कन्धे पर हाथ रख दिया।

कार सिविल लाइन्स की ओर मुड गयी।

"नही, अभी नही।" झिझकते हुये शैलजा बोली। "मुझे अच्छी

तरह सोच लेने दो। मैं बहुत जल्द ही जवाब दे दूंगी।"

"क्या मैं आशा रक्खूँ ?"

"आशा पर दुनिया कायम है।" कहकर शैलजा मुस्करा पड़ी।

कामेश्वर को अपनी विजय में कोई सन्देह नहीं रह गया।

कार 'मनोहर विला' के पोर्टिको में पहुँचकर रुक गयी। चौकीदार ने द्वार खोला। दोनों उतर पड़े।

"ललित आया ?" शैलजा ने चौकीदार से पूछा।

"अभी तो नहीं आये, सरकार!" हाथ जोड़कर चौकीदार बोला।

"जैसे ही आये उसे मेरे कमरे में भेज देना।" कहकर शैलजा बैग झुलाती हुई अपने कमरे की ओर बढ़ गयी।

कामेश्वर पीछे-पीछे चल दिया।

कमरे में पहुँचकर शैलजा ने बैग मेज पर पटक दिया और वह अपने गुदगुदे पलँग पर गिर सी पड़ी मानो वह बहुत—बहुत थक गयी हो। फिर वह पेट के बल लेट कर, पैर ऊँचे करके उन्हें हिलाने लगी।

कामेश्वर एक आराम कुर्सी पर बैठ गया।

"तुम्हारा यह पोज तो रीता हेवर्थ को भी मात दे रहा है।" कामेश्वर ने मीठे स्वर में कहा।

शैलजा मौन रही। हाँ, उसने कामेश्वर की ओर अजीब दृष्टि से देखा।

नारी की सबसे बड़ी दुर्बलता यही है कि वह प्रशंसा की भूखी रहती है। उसकी चापलूसी करके उससे कोई भी काम लिया जा सकता है। कामेश्वर ने इसी दुर्बलता पर आघात करने के उद्देश्य से एक क्षण बाद फिर कहा—"तुम्हारा रियल चार्म मैं आज ही देख रहा हूँ।"

शैलजा ने आँखें बन्द कर लीं।

कामेश्वर ने अपनी कुर्सी पलँग के समीप खिसका कर उसका हाथ अपने हाथ में लेते हुये कहा—"वेरी लवली! वेरी चार्मिंग!!" और फिर उसने साहस करके उसके हाथ पर अपने जलते हुये अधर रख दिये।

शैलजा ने चौककर आँखे खोल दी और अपना हाथ खीच कर बोली--"बहुत लोभी हो तुम।"

"लोभी!" आश्चर्य से कामेश्वर ने पूछा।

"हा। और इम्पैशेन्ट भी!"

उसी समय द्वार पर कुछ आहट हुई।

शैलजा उठकर बैठ गयी।

कामेश्वर सिगरेट सुलगाने लगा।

छः

रिक्शे से उतरकर जैसे ही ललित कोठी के अन्दर पहुँचा वैसे ही चौकीदार ने आगे बढकर उसे शैलजा का आदेश सुना दिया। वह तत्काल ही शैलजा के कमरे की ओर बढा। कमरे के द्वार पर पर्दा पड़ा था। पल भर के लिए वह ठिठका, फिर खासकर पर्दा हटाया और अन्दर चला गया। शैलजा पलँग पर बैठी रही और समीप ही कुर्सी पर एक नवयुवक बैठा हुआ दीखा वह सिगरेट पी रहा था। ललित तुरन्त समझ गया कि कामेश्वर ही हो सकता है।

"बहुत बदतमीज हो तुम।" शैलजा का तेज स्वर ललित के कानों मे गर्म सीसे की तरह उतरता चला गया। "आवाज देकर क्यो नही आये।"

ललित अपमान से तिलमिला उठा। इस प्रकार की बाते सुनने का वह अभ्यस्त नही था। शैलजा मालिक की बेटी है पर इसका यह अर्थ नही कि वह गाली दे, अपमान करे। आखिर नौकर भी मनुष्य ही होते है और उनसे भी बात तरीके से ही करनी चाहिए। ललित की इच्छा हुई कि वह लिस्ट फर्श पर पटक कर और ईट का जवाब पत्थर से देकर तुरन्त बाहर चला जाये परन्तु तभी पत्नी की करुण आखो, बच्चो की मौन आकृतियो और बहन के उदास चेहरे ने उसके हाथो मे ताला जड दिया;

उसके अधरो का भी दिया। नौकरी छूट जाने के बाद बाल-बच्चो की जो दशा होगी उसकी कल्पना से ही वह कॉप उठा। खून का घूट पीकर वह दृष्टि नीची करके बोला --

"जी मुझे मालूम नही ।"

"बकवास बन्द करो अब! कार्ड बॉट आये?"

"जी हॉ!" ललित का सिर झुका ही रहा।

"सब?"

शैलजा का आशय समझ कर ललित ने सिर हिला दिया।

"सब लोग आयेगे?" शैलजा ने गूढ दृष्टि से ललित की ओर देखकर प्रश्न किया।

ललित ने फिर सिर हिला दिया।

"जाओ। मगर याद रखना अगर सब लोग न आये तो तुम्हे नौकरी मे हाथ धोने पडेगे। नाउ गेट आउट।" शैलजा तीव्र स्वर मे आदेश देकर फिर लेट गयी।

नाउ गेट आउट! ललित के गाल पर तमाचा सा पडा! 'समझ क्या रक्खा है अपने को छोकरी ने' वह मन मे भुनभुनाया और फिर सिर नीचा करके बाहर आ गया।

गैलरी मे पहुँचते ही शैलजा और कामेश्वर की हँसी की आवाज उसके कानो मे पडी। वह तेज गति से रायबहादुर के कमरे की ओर बढा।

रायबहादुर के कमरे का द्वार खुला था। ललित को देखते ही उन्होने उसे अन्दर बुला लिया।

"कार्ड बॉट आये?" उन्होने पूछा।

"जी हा।" धीमे स्वर मे ललित ने उत्तर दिया और फिर जेब मे बचे हुये आठ रुपये निकालकर उनकी ओर बढा कर कहा, "जी, आठ रुपये बचे है।"

"अभी रक्खे रहो।"

ललित ने रुपये जेब मे रख लिये। लिस्ट मेज पर रख कर वह द्वार

की ओर बढा।

"सुनो।" रायबहादुर की आवाज सुनकर वह रुक गया और उनके पास जाकर सिर झुकाकर खडा हो गया।

"शैलजा की बातो का बुरा न मानना, ललित!" रायबहादुर धीमे स्वर मे बोले। "उसकी आदत ही ऐसी है?"

"जी .।" ललित हकलाया।

"मुझे शकुन ने सब कुछ बता दिया है। बस, यही कहना था। अब जाओ! और हाँ, दो-तीन बजे तक आ जाना। सब प्रबन्ध तुम्ही लोगो को करना है।"

"जी।" कहकर ललित बाहर आ गया।

उसे शकुन पर क्रोध आ रहा था। भला इसमे रायबहादुर से कहने की क्या बात थी! शैलजा को मालूम होगा तो वह यही समझेगी कि उसी ने शिकायत की है। अभी नाराज रहती है, तब तो और भी आग बबूला हो जायेगी। उसके मस्तिष्क मे विचार आ-जा रहे थे। उसके पैर स्वत शकुन के कमरे की ओर मुड गये। शकुन के द्वार पर पहुँच कर उसे होश आया।

द्वार बन्द था। कम्पित हाथ से उसने दस्तक दी।

'कौन है?" अन्दर से शकुन का स्वर आया।

"मै हूँ, ललित।" ललित का स्वर काप रहा था।

"आ जाओ।"

द्वार खोलकर ललित अन्दर चला गया।

कमरे मे फरनीचर वैसा ही था जैसा शैलजा के कमरे मे था। पर इस कमरे मे हर चीज व्यवस्थित ढग से रक्खी थी जब कि शैलजा के कमरे मे चीजे इधर-उधर बिखरी पडी थी। यह कमरा स्वच्छ था; शैलजा का कमरा गन्दा था। दोनो के कमरो से कोई भी दोनो बहनो के स्वभाव का अनुमान लगा सकता था। शैलजा का कमरा तो ललित को ऐसा लगा था मानो उसमे मनुष्य नही बन्दर रहता हो।

शकुन आराम कुर्सी पर लेटी कोई पुस्तक पढ़ रही थी। जैसे ही ललित अन्दर पहुँचा, उसने पुस्तक मेज पर रख दी और उठकर सहज स्वर मे बोली —

"आओ, बैठो!"

"मै बैठने नही आया हूँ।"

"तो फिर खडे रहो।" शकुन ने मुस्करा कर कहा।

"मै यह पूछने आया हूँ कि तुमने बाबूजी से शैलजा की शिकायत क्यो की?" ललित का स्वर रूखा था।

"और मै यह पूछना चाहती हूँ कि तुम्हारे प्रश्न का उत्तर देना क्या मेरे लिए अनिवार्य है?" शकुन हँस रही थी।

शकुन की हँसी से ललित चिढ गया।

"तुम हँस रही हो और मेरी जान निकली जा रही है।" वह बोला। "तुम दोनो के बीच मे मै एक दिन निश्चय ही उसी तरह पिस जाऊँगा जैसे चक्की के पाटो के बीच मे बिचारा गेहूँ का दाना पिस जाता है।"

शकुन को तुलना कुछ बुरी नही लगी। कुर्सी पर बैठती हुई बोली :—

"बैठ जाओ। काफी थके हुये मालूम पडते हो।"

ललित आज्ञाकारी बालक की भाति बैठ गया।

"तो हम दोनो को पत्थर के टुकडे समझते हो तुम?" शकुन ने मुस्करा कर पूछा।

"मेरा. मेरा मतलब यह नही था।" ललित हकला कर बोला। "मगर सोचो तो कि तुम दोनो की नोक-झोक मे मेरा क्या हाल होगा। अगर नौकरी से निकाल दिया गया तो ।" और उसने अपना वाक्य अपूर्ण ही छोड दिया।

"जब तक काम ठीक से करते रहोगे तब तक नौकरी छूटने का प्रश्न ही नही है। हाँ, अगर काम मे असावधानी करोगे तब दूसरी बात है।" शकुन ने इस ढग से कहा कि मानो वही रायबहादुर हो।

ललित को हँसी आ गयी।

"चलो क्रोध के बादल हटे तो।" कहकर शकुन खिलाखिला कर हँस पड़ी।

"लेकिन तुम्हे बाबू जी से शिकायत नही करनी चाहिए थी।" ललित ने एक क्षण बाद फिर कहा। "नौकरी मे मानापमान तो होता ही रहता है। और फिर जितना अपमान छोटी बहन करती है उससे कही अधिक मान बडी बहन से मिल जाता है।"

शकुन कुछ बोली नही; उसकी ओर केवल देखती रही।

"अब चलता हूँ। खा-पीकर फिर आना है।" कहकर ललित खड़ा हो गया।

"दोपहर मे इतनी दूर घर जाओगे और थोडी देर बाद फिर आओगे! यही क्यो नही खा लेते? मैने भी अभी नही खाया है।" शकुन के स्वर मे आग्रह था।

"अत्यधिक मान कभी-कभी अपमान का कारण भी हो जाता है।"

"क्या मतलब?" शकुन उठकर खडी हो गयी।

"छोडो भी! मै घर जा रहा हूँ।" कहकर ललित द्वार की ओर बढा।

"तुम्हारी इच्छा। मगर हाँ, सरला से शाम को आने के लिए कह देना।" शकुन ने आगे बढकर कहा।

ललित रुक गया। मुडकर बोला —

"क्या सरला का लाना जरूरी है?"

"मेरी इच्छा है उससे मिलने की।" शकुन बोली।

"कभी और मिल सकती हो।"

"आज क्या बाधा है?" शकुन ने उत्सुकता से पूछा।

"बात यह है कि सरला सीधी-सादी लड़की है। बड़े आदमियो के तौर-तरीको से एकदम अपरिचित। यहाँ के वातावरण मे वह शायद खुलकर साँस भी न ले सकेगी।" ललित ने साफ बात कहना ही उचित समझा। शकुन से कोई भेद-भाव तो था नही।

"तुम लाना तो! एक मिनट में ही वह अभ्यस्त हो जायेगी। तुम नहीं जानते कि नारी में परिस्थितियों के अनुसार अपने को परिवर्तित करने की कितनी अद्भुत क्षमता होती है।" शकुन ने आग्रह भरे स्वर में कहा।

"और कहीं उसकी हँसी हुई तो? अगर शैलजा ने उसका अपमान किया तो? मैं अपना अपमान सह सकता हूँ पर उसका नहीं।" ललित को वास्तव में डर भी यही था। शैलजा मुँहफट लड़की थी और उसके लिए ऐसी-वैसी बात मुँह से निकाल देना कोई असम्भव बात नहीं थी।

शकुन भी इस सम्भावना के प्रति अन्धी नहीं थी, किन्तु वह जानती थी कि यदि वह सदैव सरला के साथ रहेगी तो कोई भी अप्रिय घटना न घट सकेगी।

"सरला का अपमान मेरा अपमान होगा। इससे अधिक और क्या आश्वासन दे सकती हूँ मैं!" कहकर शकुन अपने दोनों हाथ मलने लगी।

ललित ने शकुन की ओर देखा। शकुन के दृगों की कोर कुछ भीगी सी लगी।

"इससे बड़ा आश्वासन और हो ही क्या सकता है?" ललित शकुन की ओर चल कर बोला। "सरला अवश्य आयेगी। मगर एक मुश्किल है। मैं तो खा-पीकर अभी चला आऊँगा। फिर शाम को घर जाने का अवकाश मिले, न मिले। वह किसके साथ आयेगी शाम को?"

शकुन के लिए यह समस्या साधारण थी। तत्काल ही बोली —

"तुम सरला से तैयार रहने के लिए कह आना। शाम को कार भेज दूँगी। उसी पर चली आयेगी।"

"अकेली?"

"क्या हुआ? मुन्ना को साथ ले लेगी।" शकुन बोली।

ललित चिन्ता में पड़ गया। उसके संस्कार शकायें उठा रहे थे।

"कोई बात नही," शकुन उसकी परेशानी समझ कर बोली। "तुम चिन्ता न करो। मै स्वय जाकर ले आऊँगी। बस, अब तो ठीक है ?"

"तुम जाओगी ?" आश्चर्य भरे स्वर मे ललित ने पूछा।

"क्या हुआ! इसी बहाने तुम्हारी श्रीमती जी के भी दर्शन हो जायेगे।" कहकर शकुन मुस्कराने लगी।

उस मुस्कान के अचल मे छिपी अनन्त पीडाये ललित की तीव्र दृष्टि से छिपी न रह सकी। किसी अज्ञात वेदना मे उसका भी मन भारी हो गया। वह उसी प्रकार मूर्तिवत खड़ा रहा।

ललित को देखकर शकुन धीमे स्वर मे बोली :—

"कोई आपत्ति है तुम्हे ?"

"आपत्ति!" चौककर ललित बोला। 'नही, नही! मै कह दूँगा सरला से।" कहकर वह तीव्र गति से बाहर निकल गया।

गैलरी मे पहुँचकर उसने आँसू की बूँदो को कमीज के कफ से पोछ डाला।

अन्दर शकुन के मुख से एक दीर्घ नि श्वास निकल गया। अतीत की स्मृतियाँ जाग गयी थी। वह तकिये मे मुह छिपा कर पलँग पर लेट गयी।

सात

सबेरे से ही मुन्नी को ज्वर था। वह वैसे ही दुर्बल थी; ज्वर ने और भी तोड दिया था। दया उसे लिए हुये कमरे मे लेटी थी। मुन्ना खा-पी कर बाहर खेलने चला गया था। घर मे एक दम सन्नाटा था।

बरामदे मे कोयले की काली लकीर से घिरा हुआ छोटा से चौका था। चूल्हे के पास ही बैठी हुई सरला रात की समस्या पर सोच रही थी। रात की चिन्ता और जागरण के चिन्ह उसके मुख और नेत्रो मे स्पष्ट रूप से दिखाई दे रहे थे।

आँगन मे एक कुत्ता घुस आया। सरला चौक पडी। 'हट' उसके मुख से जोर से निकल गया। कुत्ता भाग गया।

"क्या है, सरला?" दया ने कमरे के अन्दर से पूछा।

"कुछ नही, भाभी! कुत्ता था।" कहकर सरला ने सजग होकर अपने चारों ओर देखा। धूप काफी चढ आयी थी। सरला ने अनुमान लगाया कि बारह से कम का समय नही है।

"भैया तो न जाने कब तब आयेगे। तुम तब तक खा लो, भाभी!" सरला ने पुकारा।

"मुझे भूख नही है अभी। तुम रोटी सेक कर रख दो। कब तक आटा लिए बैठी रहोगी।" दया ने उत्तर दिया।

"सेक लूँगी। अभी जल्दी क्या है!" कहकर सरला मौन हो गयी। वह जानती थी कि ललित को ठडी रोटी अच्छी नही लगती।

"तो तुम तो खालो। सबेरे से लघन किये बैठी हो।" दया ने कुछ देर रुककर कहा। "मै आकर सेके देती हूँ।"

"तुम मुन्नी के पास ही रहो, भाभी! मुझे भी अभी भूख नही लगी है। भैया भी आते ही होगे।" सरला बोली।

दया जानती थी कि सरला के मुख से जो बात एक बार निकल गयी वह पत्थर की लकीर हो जाती है। इसलिए वह मौन हो गयी। फिर उसने जोर नही दिया।

सरला की थकान उसकी सजगता पर विजयी हो गयी। उसकी आँखें झपकने लगी। दीवार का सहारा लेकर वह ऊँघने लगी।

ललित जब घर पहुँचा तो उसने सरला को चौके मे सोते हुये पाया। दबे पाँव वह कमरे मे गया। मुन्नी को पास लिटाकर दया भी ऊँघ गयी थी। उसे हँसी आ गयी।

हँसी का स्वर सुनकर सरला और दया दोनो चौक पडी। दया हडबडा कर उठ बैठी। सरला ने हुरसा-बेलन सँभाला।

"तुम लोग रात मे तो जागती हो और दिन मे सोती हो।" हँसकर ललित बोला। "अगर कोई घुस आता तो?"

"घर मे ऐसी कौन सी सम्पदा रक्खी है जिसे ले जाता।" दया ने चिढकर कहा और फिर वह मुन्नी को थपथपाने लगी।

"हमारे लिए ये दो-चार बर्तन ही कुबेर का कोष है। अगर इन्ही को उठा ले जाता तो हमे करपात्री बनना पडता।" कहकर ललित नल के पास जाकर हाथ-मुह धोने लगा।

सरला चूल्हा फूंकने लगी। गीली लकडी का कड़वा धुआ उसकी आँखों मे आँसू ले आया।

"धुआ के मारे तो नाक मे दम है।" बरामदे मे बैठकर ललित बोला।

"अभी कम हो जायेगा।" कहकर सरला और जोर से चूल्हा फूंकने लगी।

"यह धुआ कम होने वाला नही है, सरला। कन्ट्रोल की लकडियाँ गीली होती ही है और गीली लकडियो की रग-रग मे धुआ उसी प्रकार समाया होता है जैसे हम बेबसो के जीवन मे पीडा और आँसू।"

ललित की बात ने सरला के मन को कचोट लिया। उसने सघर्ष की आडी-तिरछी रेखाओ से युक्त ललित के मुख की ओर देखा और फिर वह दृष्टि नीची करके थाली परोसने लगी।

भोजन के बाद ललित ने सरला से कहा :—

"शकुन ने तुम्हे भी बुलाया है।"

"मुझे ?" चौककर सरला बोली। वेदना और बेबसी के चिन्ह उसके मलीन मुख पर उभर आये। 'लेकिन . लेकिन मै कैसे जा सकती हूँ ?"

"मैने कहा तो था मगर शकुन मानती ही नही। मुन्ना को भी तैयार कर लेना। शकुन शाम को तुम्हे लेने आयेगी।" ललित ने कहा और फिर वह कमरे के अन्दर चला गया।

सरला सोच मे पड गयी। साडी तो दूर, उसके पास कोई साफ इकलाई भी नही थी जिसे पहन कर वह वहाँ जा सकती।

तभी भाभी का स्वर उसके कानो मे पडा। दया ललित से कह रही थी :—"तुम्हारी समझ को न जाने क्या होता जा रहा है। शकुन से कह तो दिया है सरला को ले जाने के लिए, मगर यह भी सोचा है कि वह क्या पहनकर जायेगी!"

ललित मौन रहा।

"साल-दो साल से कभी कोई अच्छी इकलाई भी लाये हो घर मे ?" दया के स्वर मे स्वाभाविक असन्तोष की झलक आ गयी।

'घर मे इकलाई नही लाया तो मैने ही कौन सूट बनवा लिये है ?" चिढ़कर ललित बोला और फिर जूते पहनकर आँगन मे आ गया।

सरला सिर नीचा किये रोटी बेल रही थी। ललित ने देखा कि जो धोती वह पहने है वह गन्दी और फटी है। अपनी सीमाओं पर क्रोध आ गया उसे। फिर सयत होकर गभीर स्वर मे बोला :—

"सरला! मनुष्य का मान वस्त्रो से नही, उसके गुणो से होता है। पिताजी भी यही कहते थे और मै भी यही कहता हूँ।"

सरला कुछ बोली नही। उसने ललित की ओर देखा भी नही। वह उसी प्रकार रोटी बेलती रही।

ललित बाहर चला गया।

"पहले कपडे देखे जाते है और बाद मे गुण।" कहती हुई दया बरामदे मे आ गयी। जब उसने देखा कि ललित चला गया है तब सरला से बोली :—

"सरला! अगर जाना है तो ढग से जाना नही तो जाने की कोई जरूरत नही है। वे समझते है कि जैसे हम फटा-पुराना पहन कर सब जगह घूमते-फिरते है वैसे ही औरते भी कर सकती है।"

"जैसा तुम कहोगी वैसा ही करूँगी मै।" रोटी तवे पर डालती हुई सरला धीमे स्वर मे बोली।

"मै जाती हूँ परोस मे। अगर कोई अच्छी साडी और ब्लाउज माँगे से मिल गया तो ठीक है।" कहकर दया द्वार की ओर अग्रसर हुई।

"मगर भैया नाराज होगे।"

"होने दो! दुनिया भर के लोग होगे वहाँ। फटा-पुराना पहनकर जाना ठीक नही।" कहकर वह बाहर चली गयी।

सरला सोचने लगो। भाभी ठीक कहती है। ससार पहले तो मनुष्य के वस्त्र ही देखता है; बाद मे गुणो की बारी आती है। आज के युग मे अच्छा मनुष्य वही है जिसके पास समाज मे घुलने-मिलने के लिए अच्छे वस्त्र है। गुदडी मे छिपे लाल पर भी आजकल किसी की दृष्टि नही जाती।

तभी उसे मुन्ना का ध्यान आ गया। भैया मुन्ना को भी ले जाने के

लिए कह गये है। उसके लिए भी नेकर और कमीज धोनी पड़ेगी; जूतों पर खड़िया लगानी पडेगी।

मुन्ना के जूतों के बाद उसे अपनी फटी चप्पल का ध्यान आया। भाभी साडी-ब्लाउज ले भी आयी तो सैन्डिल कहाँ से आयेगी। फटी चप्पल पहनकर जाना तो ठीक नहीं।

उसी समय रोता हुआ मुन्ना घर आया।

"क्या हुआ ?" सरला ने पूछा।

"राम ने मुझे मारा है, बुआ।" सिसकते हुये मुन्ना ने बताया।

"तू उसके साथ न खेला कर। अब चुप हो जा। बडा राजा बेटा है तू। और देख, शाम को मै तुझे घुमाने ले चलूँगी।"

"सच! कहाँ ?" रोना बन्द करके मुन्ना ने उत्सुक स्वर मे पूछा।

"बहुत अच्छी जगह। वहाँ मेला होगा। खूब राशनी होगी।"

"और अच्छी-अच्छी चीजे खाने को मिलेगी ?"

"हाँ! अब जाकर मुन्नी के पास बैठ जा।"

मुन्ना कमरे मे चला गया।

बाहर से दया आयी। उसके अधरो पर मुस्कान था और बगल मे रेशमी साडी और ब्लाउज।

"मिल गयी ?" सरला ने पूछा।

"अब जाना तुम। अपने हाथ से सजाकर भेजूंगी तुम्हे। जरा वे लोग भी देख ले कि सुन्दरता महलो मे ही नही, झोपडी मे भी होती है।" कहकर दया खिलखिलाकर हँस पडी।

सरला के कपोलों पर लज्जा की गुलाबी कूची फिर गयी।

"बहुत वैसी हो तुम, भाभी।" उसने अपनी धोती का छोर उँगलियो मे फँसाते हुये कहा।

"जानती हो क्या बहाना करके लायी हूँ ?"

'मै क्या जानूँ ?"

"मैने कहा सरला की बात तय हो रही है। उसके देखने वाले आ

रहे हैं।" दया ने मुस्कराते हुये कहा।

दया की बात सुनकर उसे लज्जा नही आयी और न उसके मन में गुदगुदी ही हुई। एक तरल पीडा ने उसके तन-मन को भिगो दिया; एक कसक सी उसके प्राणो मे अँगड़ाई ले उठी।

"तुम्हे ऐसा सफेद झूठ नही बोलना चाहिए था, भाभी।" उसके मुख से निकल गया।

"इसमे झूठ क्या है? तमाम लोग आयेगे वहाँ। हो सकता है किसी की आँखो मे समा जाओ और वह तुम्हे तुम्हारे भैया से हमेशा के लिए माँग बैठे।" दया ने कहा और फिर वह कमरे मे चली गयी।

सरला के मन मे आया कि वह जाने के लिए मना कर दे। भाभी उसे बना-सँवार कर इसलिए भेजना चाहती है कि कोई उसे पसन्द कर ले और. ....! नही, यह ठीक नही है...यह ठीक नही है।

"यह लो। मै सैन्डिल के लिए तो भूल ही गयी।" कहते हुये दया फिर बाहर निकल आयी। "अभी लाती हूँ। मालती की सैन्डिल एकदम फिट आयेगी तुम्हारे।"

इससे पहले कि सरला कुछ कह सके, दया बाहर चली गयी।

"हम भी अच्छे-अच्छे कपड़े पहनेगे, बुआ।" कहता हुआ मुन्ना भी बाहर आ गया।

"हाँ, हाँ बेटा! तुम भी पहनना," कहकर सरला चौके के बाहर आ गयी।

× × ×

शाम को जब शकुन ने ललित के घर का द्वार खटखटाया तब सरला तैयार हो चुकी थी। उसी ने द्वार खोला। शकुन सरला को रेशमी साडी और ब्लाउज मे देखकर चौक पडी। उसे लगा, सरला सुन्दर ही नही, बहुत सुन्दर है। वास्तव मे वह उस समय लग भी बहुत सुन्दर रही थी। शृंगार ने सरल मूक सौन्दर्य को जैसे वाणी दे दी हो।

सरला ने शकुन को ले जाकर कमरे मे बिठाया। दया भी वही थी।

उसने हाथ जोडकर शकुन से नमस्ते की। शकुन ने भी हाथ जोड दिये।

शकुन ने दया को ध्यान से देखा। वह घर की धुली साधारण धोती में भी आकर्षक लग रही थी। गृहस्थी की चक्की मे पिसकर और अभावो के कठोर थपेडो को सहकर भी वह पराजित नही हुई थी मस्तक पर चिन्ता की रेखाये होते हुये भी उसके अधरो पर मुस्कान थी, नयनो मे उत्साह की ज्योति थी।

"बहुत दिनो से आपसे मिलने को जी करता था पर कभी आ ही न सकी। आज जाकर कही भेट हो सकी।" शकुन ने दया से कहा।

"हमारे अहोभाग्य जो आपने दर्शन दिये।" दया ने गभीरता से कहा और फिर एक क्षण रुककर बोली, "हमारी कुटिया पवित्र हो गयी।"

"कैसी बाते करती हो बहन!" कहकर शकुन रुक गयी। उसकी समझ मे न आया कि आगे क्या कहे।

तभी बाहर से मुन्ना आ गया। वह साफ नेकर और कमीज पहने था।

"कहाँ चला गया था तू? बुआ जी को नमस्ते कर।" दया डॉटकर बोली।

मुन्ना ने सहम कर हाथ जोड दिये।

बुआजी शब्द सुनकर शकुन की छाती पर भारी घूँसा सा पडा। बहुत प्रयत्न करने के बाद वह अपने निश्वास को रोक सकी।

"सरला की बात कही तय हुई?" शकुन ने दया से पूछा।

सरला लजाकर बाहर चली गयी।

"अभी कहाँ तय हुई है।" दया दुखी स्वर मे बोली। "कई जगह बात चलायी पर वे हजारो का दहेज चाहते है। दहेज देने के लिए हम रुपया कहाँ से लाये!"

शकुन को ललित पर क्रोध आ गया। ललित उससे झूठ बोला था।

"आप की नजर मे कोई ऐसा लडका हो जो रुपया-पैसा न देखकर अच्छी लडकी चाहता हो तो बताना।" दया बोली।

"हुँ, बताऊँगी; जरूर बताऊँगी।" शकुन ने चौककर कहा। एक

क्षण रुककर फिर बोली—"अच्छा, अब चलती हूँ। फिर कभी आऊँगी।" फिर मुन्ना कि उँगली पकड़कर उठते हुये कहा—"हमारे घर चलोगे, मुन्ना?"

"हाँ! हम तो बहुत देर से तैयार हैं।"

"बहुत दुष्ट हो गया है तू।" दया ने फिर डाँटा।

"क्यो डाँट रही हैं उसे? बहुत प्यारा बच्चा है!" शकुन ने स्नेह से कहा। फिर सोती हुई मुन्नी की ओर देखकर बोली—"मुन्नी सो रही है। नही तो उसे गोद मे लेकर खिलाती।"

"आज सबेरे मे हरारत है उसे।" दया ने बताया।

शकुन ने मुन्नी की नाड़ी देखकर कहा—"इस समय तो कम है। दवा दे रही हो?"

"मोहल्ले मे एक वैद्य जी हैं। उन्ही की दवा दे रही हूँ।" कहकर दया भी खड़ी हो गयी।

शकुन मुन्ना की उंगली पकड़े हुये बरामदे मे आ गया। सरला आंगन मे टहल रही थी।

"चलो, सरला।" कहकर शकुन द्वार की ओर बढ गयी।

सरला और मुन्नाके जानेके बाद दयाने द्वार अन्दर से बन्द कर लिया।

गली के बाहर कार खड़ी थी। कार का द्वार खोलकर शकुन ने मीठे स्वर मे सरला से कहा—"बैठो।"

सरला बैठ गयी। मुन्ना भी बैठ गया। वह बहुत प्रसन्न था।

"ड्राइवर नही लाईं क्या?" ड्राइवर न देखकर सरला ने धीमे और सकुचित स्वर मे पूछा।

"मै स्वय ड्राइवर हूं।" कहकर शकुन हँस पड़ी।

कार तीव्र गति से 'मनोहर-विला' की ओर दौड़ने लगी।

मुन्ना प्रसन्न होकर तालियाँ बजाने लगा।

सरला को लगा, जैसे वह हवा मे उड़ी जा रही है, उड़ी जा रही है धरती से दूर, सितारों की ओर!

आठ

कमल के अतिरिक्त अन्य आमत्रित कवि-गण समय से पहले ही आ गये। सभी बन सँवर कर आये थे। रायबहादुर मनोहरलाल ने सबका स्वागत हाथ जोड कर किया। कामेश्वर भी समय से पहले ही आ गया। बाबू श्यामसुन्दर उसके साथ थे। शैलजा ने उनका परिचय रायबहादुर से कराया। कामेश्वर शैलजा के साथ दूसरी ओर चला गया। बाबू श्यामसुन्दर रायबहादुर से बाते करते रहे।

धीरे-धीरे रायबहादुर की मित्र-मडली भी आ गयी। उस मित्र-मडली मे डाक्टर, वकील तथा पूँजीपतियो के अतिरिक्त नगर के उच्चाधिकारी भी थे। उनके बचपन के मित्र प्रोफेसर इन्द्र भी आ गये। वे एक स्थानीय कालेज मे हिन्दी के प्रोफेसर थे और समालोचक के रूप मे हिन्दी-साहित्य मे अपना स्थान भी बना चुके थे।

शैलजा की आँखे फाटक की ओर लगी थी। वह बात तो कर रही थी कामेश्वर से पर उसका हृदय प्रतीक्षा कर रहा था कमल की। क्या कमल नही आयेगा? पर ललित तो कहता था कि वह अवश्य आयेगा। क्यो नही आया अभी तक? क्या बात हो गयी? शैलजा झुझला पडी। उसने सोचा कि यदि कमल नही आयेगा तो वह कल ही ललित को नौकरी

से जवाब दिलवा देगी।

"यू आर लुकिग लायक अ फेरी फ्रॉम सम डिस्टैन्ट फेरीलैन्ड।" शैलजा को अनमनी देखकर कामेश्वर ने उसे प्रसन्न करने के उद्देश्य से कहा।

"सच ? क्या मै परी लग रही हूँ ?" शैलजा ने पूछा, किन्तु उसकी दृष्टि फाटक की ही ओर रही।

"अगर मुझे झूठा समझती हो तो शीशा देख लो। मिरर्स नेवर टेल अ लाई।" कामेश्वर ने मुस्करा कर उत्तर दिया।

शैलजा मौन रही। उसकी व्याकुलता बढती जा रही थी।

"मीना, लीला, कम्मो, निम्मी, शीला सभी तो आ गयी है। फिर इस बेचैनी से किसका इन्तजार है ?" कामेश्वर अन्त मे पूछ ही बैठा।

"इन्तजार! किसी का भी तो नही।" चौककर शैलजा बोली। "सिसी न जाने कहाँ चली गयी है। उन्ही की राह देख रही हूँ।"

कामेश्वर को शैलजा का यह असत्य भी सत्य लगा। उसने खुलकर साँस ली।

तभी एक फाटक से कमल और दूसरे से शकुन की कार ने प्रवेश किया। शैलजा का मुख कमल की तरह खिल पडा।

कमल साधारण धोती-कुर्त्ता पहने था। पैरो मे फटी चप्पल थी जो धूल से सनी थी। शैलजा तेजी से उसकी ओर बढी। कामेश्वर ने एक बार कमल की ओर देखा और फिर कार से उतरती हुई सरला को। शकुन से अभिवादन करके वह तेजी से शैलजा की ओर बढ गया।

"मेरे अहोभाग्य जो आपने आने की कृपा की। मै तो निराश हो गयी थी।" शैलजा ने हाथ जोडकर अभिवादन करने के बाद कमल से सहज स्वर मे कहा।

"वचन देकर उसे पूरा न करने का अभ्यस्त मै नही हूँ।" कहकर कमल उस ओर बढने को अग्रसर हुआ जिधर अन्य कविगण खडे थे।

उसी समय कामेश्वर आ पहुँचा।

"रुकिये तो।" शैलजा के मुख से निकल गया।

कमल के उठते हुये पैर रुक गये।

"इनसे आपका परिचय करा दूँ। यह है मेरे सहपाठी मिस्टर कामेश्वर और आप है हिन्दी के सुप्रसिद्ध तरुण कवि श्री कमल जी। बहुत पीडा रहती है आपके गीतों में।"

"अच्छा।" कामेश्वर ने अजीब मुद्रा मे कहा। "निराश प्रेमी मालूम होते है आप।"

कामेश्वर की बात ने कमल की नस-नस मे पिघली आग भर दी। वह रूखे और तेज स्वर मे बोला —

"कुछ पीडाये ऐसी होती है जिनकी तीव्रता की तुलना मे प्यार की पीडा कुछ भी नही। पर पर आपका कदाचित प्यार की पीडा के अतिरिक्त अन्य किसी पीड़ा से परिचय है ही नही।"

क्रोध से कामेश्वर का चेहरा लाल हो गया। अपमान से तिलमिला कर वह कुछ कहना ही चाहता था कि शैलजा बीच मे बोल पडी :—

"कमल जी ठीक कहते है।"

"आप कदाचित मेरी बात का बुरा मान गये है, कामेश्वर जी ! मेरा उद्देश्य व्यक्तिगत आक्षेप का नही था। मेरा तात्पर्य तो आपके वर्ग के सभी लोगो से था। प्यार की पीडा आप लोग ही मोल ले सकते है। हम लोगो के लिए प्यार अधिकार नही, पावन कर्त्तव्य है और कर्त्तव्य-पालन से पीडा नही, शान्ति मिलती है।" कहकर कमल तीव्र गति से अन्य कवियो की ओर बढ गया।

"सनकी मालूम होता है।" कामेश्वर बडबडाया।

शैलजा ने सुनकर भी नही सुना।

"हाफ मैड।" कामेश्वर फिर बुदबुदाया।

कामेश्वर को अकेला छोडकर शैलजा उस ओर बढ गयी जिधर शकुन के साथ सरला खडी था।

"यह कौन है?" शैलजा ने शकुन से सरला के विषय मे पूछा। उसने न तो कभी सरला को देखा ही था और न उसे यह ही ज्ञात

था कि शकुन ललित की बहन को लेने गयी थी।

"मेरी सहेली है।" शकुन ने सक्षिप्त सा उत्तर दे दिया और फिर सरला से बोली—"यह मेरी छोटी बहन शैल है। इसी का जन्म-दिन है आज।

सरला ने हाथ जोडकर अभिवादन किया, किन्तु शैलजा बिना उत्तर दिये ही आगे बढ गयी।

सरला को बहुत अटपटा सा लगा। उसके मन का भाव समझ कर शकुन ने कहा—"शैल की किसी बात का बुरा न मानना। उसका स्वभाव ही ऐसा है।

सरला मौन रही। उसे चहल-पहल पूर्ण उस वातावरण मे अजीब सा लग रहा था। हर ओर लोग हँस रहे थे, बोल रहे थे। जिधर उसकी दृष्टि जाती थी उधर उल्लास और उत्साह दिखाई देता थ।। उल्लास और उत्साह के उन हल्के-फुल्के क्षणो के साथ अपना सामजस्य करने मे वह अपने को एकदम असमर्थ पाती थी। यद्यपि उसके वस्त्र बुरे नही थे तद्यपि वह अपने हृदय मे हीन-भाव पा रही थी। शकुन के अतिरिक्त वहाँ और कोई भी तो ऐसा नही था जिससे वह बाते कर सकती। वह अनुभव कर रही थी कि उसने वहाँ आकर भूल की है—बहुत भारी भूल की है। उसके लिए खुलकर साँस लेना भी कठिन हो रहा था।

बच्चो का ससार निराला ही होता है। वहाँ न कोई छोटा होता है न बडा। जहाँ सरला अपने को उस समाज के सर्वथा अनुपयुक्त पाती थी वही मुन्ना पल भर मे ही अपने समवयस्क बच्चो मे घुल-मिल गया था। सरला की भाति उसके हृदय मे कोई हीन भाव न था। वह बच्चो के साथ हँस रहा था, खेल रहा था।

धीरे-धीरे लोग बडे हाल मे एकत्रित होने लगे। वही एक बडी मेज पर बर्थ-डे केक सजाकर रक्खा गया था। उसके आसपास अठारह बड़ी मोमबत्तियाँ चाँदी के पात्रों मे जल रही थी। हर्ष पूर्ण करतल ध्वनि

एव बधाइयो के मध्य शैलजा ने धीरे-धीरे सभी मोमबत्तियां बुझा दी और फिर मुस्कराते हुये उसने केक काटा। हाल हँसी-कहकहों से गूँज उठा।

कुछ लोगो ने उपहार दिये जिन्हे शैलजा ने सधन्यवाद स्वीकार किया। वह उपहार ले-लेकर मेज पर रखती जाती थी। उसकी दृष्टि कमल को खोज रही थी पर हाल मे उसे कही भी कमल न दिखाई दिया। उसका मुख मलीन हो गया।

कामेश्वर उसके पास ही खडा था। उसे समझते देर न लगी कि शैलजा की दृष्टि किसे खोज रही है। ईर्ष्या से उसका चेहरा विकृत हो उठा। शैलजा की दृष्टि बचा कर वह हाल के बाहर आ गया। उसने देखा, कमल लान मे अकेले ही टहल रहा है। उसके पूरे पागल होने मे कामेश्वर को अब कोई सन्देह न रहा।

सरला ने हाल मे एकत्र लोगो को ध्यान से देखा पर उसे ललित कही भी नही दिखाई दिया। उसने शकुन से पूछ ही लिया।—"भैया नही दिखाई देते!"

'वे प्रीति-भोज के प्रबन्ध मे लगे है। आते ही होगे।" शकुन ने धीमे स्वर मे कहा।

"अब कवि-गोष्ठी की कार्यवाही प्रारम्भ होगी।" तब तक प्रोफेसर इन्द्र ने अपनी गजी चाँद को दाहिने हाथ से सहलाते हुये कहा। "आप लोग बगल वाले हाल मे आने का कष्ट करे!"

बगल वाले हाल की ओर बढने वालो मे कवि-गण सबसे आगे थे।

हाल काफी बडा था। फर्श पर दरी, चाँदनी और कालीन बिछे हुये थे। बीच-बीच मे मोटे गावदार तकिये पडे थे। कवि-गण लपककर मुख्य स्थान पर बैठ गये। थोडी देर मे ही हाल भर गया।

कमल भी अनमना सा आकर एक कोने मे बैठ गया।

"आप उधर कहाँ बैठ गये, कमल जी? इधर आइये।" शैलजा ने मुख्य स्थान की ओर सकेत किया।

"मै यही ठीक हूँ।" कमल ने उत्तर दिया।

चाँदी के दो बडे थालो मे चाँदी के वर्क लगे पान लाकर ललित ने बीच मे रख दिये। उसके पीछे एक नौकर था जिसके हाथ में सिगरेट के दो डिब्बे थे। उससे डिब्बे लेकर उसने वही रख दिये और फिर जेब से दियासलाई की डिब्बी भी निकाल कर रख दी। नौकर चला गया। ललित वही एक किनारे बैठ गया। उसने देखा लडकियों के झुड के बीच मे शकुन के साथ सरला भी बैठी है। मुन्ना उसकी गोद में है सरला को रेशमी साडी-ब्लाउज पहने देखकर उसे आश्चर्य हुआ। उसने समझा कि शकुन ने ही उसे रेशमी वस्त्र दिये होगे।

कवि-गोष्ठी प्रारम्भ होनी चाहिए। प्रोफेसर इन्द्र स्वय-निर्वाचित सभापति की भाति बोल पडे।

'गोष्ठी के सभापतित्व के लिए मै प्रोफेसर इन्द्र का नाम प्रस्तावित करता हूँ।" बाबू श्यामसुन्दर का स्वर गूँज उठा।

"मै अनुमोदन करता हूँ।" प्रोफेसर इन्द्र के एक विशेष कृपापात्र कवि महोदय ने गभीरता से कहा।

प्रोफेसर इन्द्र ने हँसकर स्वीकृति दे दी। वे उठकर सभापति का आसन ग्रहण करने ही वाले थे कि कमल बोल पडा.—

"धृष्टता के लिए क्षमा चाहता हूँ। पर मेरे विचार से गोष्ठी के लिए सभापति चुनने की कोई आवश्यकता नही है।"

प्रोफेसर इन्द्र उठते-उठते फिर बैठ गये।

"कमल जी ठीक कहते है। यह इन्फार्मल गोष्ठी है। इसमे सभापति की क्या आवश्यकता है?" शैलजा बोल पडी।

शैलजा की बात का कौन विरोध करे?

"मगर बेटी, गोष्ठी के सचालन के लिए कोई आदमी तो होना ही चाहिए।" रायबहादुर ने पान का बीडा मुह मे दबा कर कहा।

"प्रोफेसर साहब से अच्छा सचालक और कौन मिलेगा, डैडी।" शैलजा बोली और फिर बैग से कवियो की सूची निकाल कर प्रोफेसर इन्द्र को देकर कहा—"यह लिस्ट है कवियों की।"

प्रोफेसर इन्द्र ने सूची को देखकर मुस्कराते हुये कहा —"एक नाम तो छूट ही गया है।"

"किसका ?" शैलजा के मुख पर सहज आश्चर्य था।

"तुम्हारा।" कहकर प्रोफेसर इन्द्र ने जेब से कलम निकाला और सूची में शैलजा का नाम बढ़ा दिया।

गोष्ठी प्रारम्भ हो गयी।

कवि गणों में जागृति की लहर दौड़ गयी।

कविता-पाठ के साथ-साथ 'वाह!' 'बहुत सुन्दर!' 'क्या बात है!' के स्वर हाल में गूंज उठे।

कुछ कवियों ने सस्ते शृंगारी गीत सुनाये जिन्हें सुनकर बाबू श्याम सुन्दर ने नाक-भौं सिकोड़ी, प्रोफेसर इन्द्र हाल के बाहर देखने लगे और महिला-समाज ने सिर झुका लिया। एक कवि महोदय ने ब्रज-भाषा के सवैये सुनाये। उनका रंग खूब जमा। जब वे उठकर अपने स्थान पर गये तब उनका सीना फूलकर दूना हो गया था। और एक सज्जन ने तो रायबहादुर का कृपा-पात्र बनने के लिए और भविष्य की गोष्ठियों में अपना स्थान सुरक्षित रखने के लिए रायबहादुर तथा शैलजा का प्रशस्ति-गान ही सुना डाला। उनकी रचना की समाप्ति पर जब शैलजा ने उनकी ओर मधुर मुस्कान से देखा तब वे फूलकर कुप्पा हो गये। अन्य कवियों पर विजय की गर्व पूर्ण दृष्टि डालकर वे अपने स्थान पर बैठ गये।

"अब आपके सामने कमल जी कविता-पाठ करेंगे। आइये, कमल जी!" प्रोफेसर इन्द्र ने कमल की ओर देखा।

शैलजा का हृदय उछलने लगा।

कामेश्वर की साँसों की गति तीव्र हो गयी।

ललित सँभलकर बैठ गया।

कमल ने जो गीत सुनाया वह भाषा, शैली और भावों की दृष्टि से सब से भिन्न था। उसके गीत में सस्ती शृंगारी भावना नहीं थी; अतृप्ति

का क्रन्दन नही था। फिर भी उसमे एक ऐसा दर्द था जो सब पर छा गया। रचना की समाप्ति पर श्रोता गण मत्र-मुग्ध से रह गये । वाह वाही करने या तालियाँ बजाने तक का होश नही रहा।

गीत सुनाकर कमल अपने स्थान पर बैठ गया।

"एक गीत और सुनाइये कमल जी।" शैलजा ने आग्रह किया।

"अब मै क्षमा चाहता हूँ।" कमल का उत्तर था।

"एक गीत और! एक गीत और!!" कई कठो का समवेत स्वर हाल मे गूँज उठा।

मगर कमल अपने स्थान से न उठा।

"कमल जी अस्वस्थ होते हुये भी आ गये है यह उनकी महान कृपा है। अब उन्हे और परेशान न कीजिये।" ललित को खडे होकर कहना ही पडा।

हाल मे शान्ति छा गयी।

कमल ने आँखो ही आँखो मे ललित को धन्यवाद दिया।

ललित फिर अपने स्थान पर बैठ गया।

"अब शैलजा जी आपको अपना मधुर गीत सुनायेगी।" प्रोफेसर इन्द्र ने शैलजा की ओर देखकर कहा।

"मुझे क्षमा नही मिल सकती, प्रोफेसर साहब?" शैलजा धीमे स्वर मे बोली। उसका उत्साह कमल की अस्वस्थता का समाचार सुनकर न जाने कहाँ विलुप्त हो गया था।

"यह कैसे हो सकता है? हम तो आपका गीत सुनने के लिए ही आये है।" कई कवि-गण एक साथ बोल पडे।

विवश होकर उसने एक छोटा सा गीत अनमने भाव से सुना दिया। कवि गणो ने झूम-झूम कर दाद दी।

"तुम तो बहुत अच्छा लिखती हो।" बाबू श्यामसुन्दर ने भी प्रशंसा की।

"सब आपकी कृपा है।" कहकर शैलजा ने सिर झुका लिया।

कामेश्वर ने कानो से अधिक उपयोग अपनी आँखो का किया था। वह कवितायें न सुनकर सरला की ओर देखता रहा था। एक बार शैलजा ने देख भी लिया था पर उसने सरला की ओर से दृष्टि न हटायी थी। उसका विचार था कि जिस प्रकार कमल को अपना प्रतिद्वन्दी मानकर वह ईर्ष्या की आग मे जल रहा है उसी प्रकार सरला को अपनी प्रतिद्वन्दिनी मानकर शैलजा भी ईर्ष्या की आग मे जलेगी।

सरला को कामेश्वर की लोलुप दृष्टि तीखे तीर सी चुभ रही थी। उसे लगा कि वह उसे आँखो ही आँखो से खा जाना चाहता था। वह मन-ही-मन उसे कोसने लगी। कितना धृष्ट और लम्पट है यह युवक, उसने सोचा। कमल का गीत सुनकर वह अपनी सुधि भूल बैठी। उसके गीत के दर्द का भीगा नशा उसकी रग-रग मे बिध गया। उसके हृदय मे एक कसक सी उठी और आँखो मे आँसू भर आये।

शैलजा के गीत के बाद गोष्ठी समाप्त हो गयी।

"अब आप लोग पीछे वाले लान मे चलकर रूखा-सूखा ग्रहण करने की कृपा करें।" रायबहादुर ने खडे होकर हाथ जोडते हुये कहा।

"मीठे-मीठे गीत सुनने के बाद यदि मीठे-मीठे पदार्थ भी खाने को मिले तो इससे बढकर और सौभाग्य क्या हो सकता है!" बाबू श्याम सुन्दर ने अपनी सहज मुस्कान के साथ कहा।

सब लोग पीछे वाले लान की ओर चल दिये।

कमल ललित का हाथ पकड कर उसे बाहर बरामदे मे ले गया।

नौ

"तुम जानते हो कि यहाँ आकर मैंने अपनी आत्मा का हनन किया है।" बाहर आकर कमल गभीर स्वर में बोला।

"जानता हूँ। आपको धन्यवाद देने के लिए मेरे पास शब्द नही है। यदि आप न आते तो मेरी नौकरी अवश्य चली जाती।" ललित ने कृतज्ञता से कहा।

"जब कोई मुझसे 'आप' कहता है तो मै एक दूरी का अनुभव करता हूँ। अच्छा हो यदि तुम 'तुम' का ही प्रयोग करो।" कहकर कमल ने कुर्त्ते की जेब से बीड़ी का बन्डल निकाला और एक बीड़ी अधरों के बीच दबाकर बोला, "दियासलाई है तुम्हारे पास ?"

ललित हाल से दियासलाई ले आया।

बीडी जलाकार कमल बोला, "अब मै जा रहा हूँ।"

"यह कैसे हो सकता है। प्रीत-भोज.....।"

"मै प्रीत-भोज के लालच से नही आया हूँ।" कमल के स्वर मे दृढ़ता थी।

"मै शैलजा जी को बुलाये लाता हूँ। अच्छा हो यदि उन्हीं से बात कर लो।"

कमल मौन रहा।

ललित चला गया और शीघ्र ही शैलजा को बुला कर आ गया।

"अब मैं आज्ञा चाहता हूँ।" कमल ने शैलजा को देख कर कहा।

"अभी से! प्रीत-भोज के बाद जाइयेगा।" शैलजा के स्वर मे अगाध आग्रह था।

"प्रीत-भोज मे सम्मिलित न हो सकने के लिए क्षमा चाहता हूँ। मुझे अभी जाना है।" कहकर कमल ने हाथ जोडकर अभिवादन किया।

"यदि आपने भोजन नही किया तो तो...।" आगे शैलजा कुछ न कह सकी। उसकी वाणी अवरुद्ध हो गयी।

कमल ठिठक गया।

"तो क्या होगा?" कमल ने पूछा।

"यदि आप चाहते है कि मै अपने जन्म-दिन पर रोऊँ तो आप जा सकते है।" रुद्ध कठ से शैलजा ने कहा।

कमल उसकी ओर देखता रहा।

"शैलजा जी के आग्रह को न टालो।" ललित ने कमल का हाथ पकडकर कहा। "आओ! सब लोग हमारी प्रतीक्षा कर रहे होगे।"

कमल सिर झुकाकर ललित के साथ चल दिया।

शैलजा की आँखो की गहरी झीलो मे मुस्कान के हँस तैरने लगे।

ललित ने कमल को एक रिक्त स्थान पर बिठा दिया। शैलजा उसी के समीप बैठ गयी।

कामेश्वर ने यह सब देखा तो उसका रक्त खौल उठा। क्रोध के कारण वह काँपने लगा। उसकी इच्छा हुई कि वह जाकर कमल का गला दबा दे पर किसी प्रकार वह क्रोध के तीखे घूँट को पी गया। देख लूँगा तुम्हे बच्चू, उसने मन-ही-मन कहा।

कमल और शैलजा के सामने ही शकुन और सरला बैठी थी। कमल को अपने सामने देखकर सरला का हृदय जोर से धडकने लगा।

"कमल जी! आपने एक गीत सुनाकर तो हमारी प्यास को बढा

दिया है।" भोजन के बीच मे शकुन ने कहा।

कमल ने दृष्टि उठाकर शकुन की ओर देखा और फिर उसकी दृष्टि सरला की ओर गयी। सरला को पसीना आ गया। उसका हाथ काँपने लगा, ग्रास गले मे फँस गया।

"यह मेरी बड़ी बहन शकुन है।" शैलजा ने परिचय कराते हुये कहा। "और यह इनकी सहेली है।"

"आप लोगो के दर्शन करके वास्तव मे बहुत प्रसन्नता हुई। मेरा सौभाग्य है जो आपको हमारी रचना पसन्द आयी।" कमल ने विनम्रता से कहा और फिर दृष्टि झुकाकर भोजन करने लगा।

"तुम्हारी सहेली का नाम क्या है, सिसी ?" शैलजा ने अचानक ही शकुन से पूछ लिया।

"सरला।" शकुन ने छोटा सा उत्तर दे दिया।

"नामो की भी सार्थकता होती है।" कमल ने दृष्टि उठाकर धीमे स्वर मे कहा।

सरला को लगा जैसे उसके नीचे की धरती फट गयी है और वह विद्युत वेग से रसातल की ओर धँसती चली जा रही है।

तभी पास बैठा हुआ मुन्ना बोल पडा—"बुआ जी पानी।"

सरला ने गिलास उठाकर उसे पानी पिलाना चाहा पर उसका हाथ इतना अधिक काँप रहा था कि शैलजा को हँसी आ गयी। सरला और भी हडबडा गयी और फलस्वरूप गिलास का अधिकाँश जल छलककर मेज पर आ गिरा। सरला ने समहल कर गिलास मेज पर रख दिया।

"कुछ लोगो को टेबिल-मैनर्स भी नही आते।" शैलजा ने व्यग्य किया।

"शैल!" कठोर स्वर मे शकुन ने कहा।

शैलजा चुप हो गयी।

शकुन ने उठकर मुन्ना को पानी पिला दिया।

"टेबिल-मेनर्स जानना ही जीवन की सार्थकता नही है।" कमल ने गभीर स्वर मे कहा।

सरला की दृष्टि स्वतः ही ऊपर उठ गयी।

"इनकी ओर से मै क्षमा माँगता हूँ।" कहकर कमल फिर खाने गा।

शैलजा का शरीर इस प्रकार जलने लगा मानो उसे तीव्र ज्वर हो। ईर्ष्या की आग की चिनगारियाँ उसकी आँखों से निकलने लगी। उसने आग्नेय नेत्रों से सरला की ओर देखा। वह सहम कर और भी सिकुड गयी। फिर उससे खाना न खाया गया।

प्रीत-भोज के बाद अतिथि लोग जाने लगे। कवि गणो को बिदाई के रूप मे ग्यारह-ग्यारह रुपये दे दिये गये। कमल ने रुपये लेने से स्पष्ट इन्कार कर दिया। शैलजा ने उससे कुछ देर और रुकने का आग्रह किया। वह रुक गया। शैलजा ने इसे अपनी जीत समझी।

कामेश्वर भी रुक गया और उसने अपने मामा को भी रोक लिया। प्रोफेसर इन्द्र को रायबहादुर ने रोक लिया।

सब लोग कमरे मे बैठ गये।

कमल के आग्रह और शकुन की आँखों के मौन निमत्रण के कारण ललित भी जाकर एक कुर्सी पर बैठ गया। उसका बैठना शैलजा को अच्छा नही लगा। पर वह कुछ बोली नही।

"आपके गीत का जादू अब तक मेरे सिर पर है।" बाबू श्यामसुन्दर ने कमल की ओर मुडकर कहा।

कमल हाथ मलता रहा, कुछ बोला नही।

"गीत तो अच्छा था परन्तु उसमे निहित पराजय और निराशा का भाव मुझे पसन्द नही।" प्रोफेसर इन्द्र का समालोचक जागरुक होकर बोला।

"आपने यदि मेरे गीत मे पराजय और निराशा के भाव देखे है तो मुझे यह कहना पडेगा कि आपने उसे समझा ही नही।" आवेश मे आकर कमल बोला। "उसमे पराजय और निराशा की नही, सघर्ष और आशा की भावना थी।"

कमल की बात सुनकर प्रोफेसर इन्द्र भडक उठे। क्रुद्ध स्वर मे बोले.–

"तुम्हारे कहने का आशय यह है कि गीत समझने की भी बुद्धि नही है मझमे। वर्षो से बी० ए०, एम० ए० वालों को पढा रहा हूँ; सूर-तुलसी से लेकर निराला-पत तक के साहित्य पर दर्जनो समालोचनायें लिख डाली है और मै तुम्हारे जैसे नौसिखियो का साधारण सा गीत नही समझ सकता। तुम्हारा गीत न हुआ, कबीर की उल्टवासी हो गयी।"

वातावरण मे अजीब सा तनाव आ गया। रायबहादुर ने कम्पित हाथो से पान के दो बीडे मुह मे दबा लिये। बाबू श्यामसुन्दर अपने पैर जोर से हिलाने लगे। कामेश्वर की आँखो मे चमक आ गयी। शैलजा का हृदय धडकने लगा। शकुन ऊँघते हुये मुन्ना को गोद मे लेकर अपने कमरे की ओर चली गयी। ललित का गला सूखने लगा। सरला के रक्तचाप की गति तीव्र हो गयी।

"अशिष्टता के लिए क्षमा चाहता हूँ।" कमल ने गभीर स्वर में कहना शुरू किया। "आपने जो कुछ कहा उसके उत्तर मे मुझे केवल यही निवेदन करना है कि समय के साथ मूल्य भी बदलते है। अपनी पुरानी कसौटी पर आज की नयी कविता को कसकर आप साहित्य का उपकार नही, अपकार ही करेंगे।"

"कल से लेखनी पकडी है और आज ही उन्हे चुनौती देते हो जिन्होने साहित्य-सेवा मे अपना जीवन खपा दिया है।" प्रोफेसर इन्द्र ने तेजी से कहा। "फुटकर गीतो के लिख लेने से कोई महाकवि नही बन जाता। कितनी कृतियाँ आयी है तुम्हारी प्रकाश मे?"

"कई वर्ष पूर्व एक कृति प्रकाशित हुई थी। साहित्य के तथा कथित ठेकेदारो ने उसका गला घोट दिया। तब से मैने निश्चय कर लिया है कि तब तक कोई सग्रह प्रकाशित न कराऊँगा जब तक नयी मान्यताओ को समझने की बुद्धि हमारे दकियानूसी समालोचको में नही आ जायेगी। कमल ने दृढ़ स्वर मे उत्तर दिया।

शकुन आकर फिर अपने स्थान पर बैठ गयी।

"यह क्यो नही कहते कि तुम्हारी टकैयल चीजो को छापने के लिए कोई प्रकाशक तैयार ही नही है।" प्रोफेसर इन्द्र ने तीखा प्रहार किया।

"आप यही समझ सकते है यदि आपको इस विचार से सन्तोष मिलता है तो।" कहकर कमल मुस्करा पडा।

उसकी मुस्कान से प्रोफेसर इन्द्र जल गये।

"मै समझती हूँ अब किसी दूसरे विषय पर बात की जाये।" शैलजा ने साहस करके कहा।

"अच्छा, अब मै तो चलता हूँ। कल सबेरे ही कालेज जाना है।" कहकर प्रोफेसर इन्द्र उठ खडे हुये। रायबहादुर उन्हे फाटक तक छोड़ आये।

"यदि कोई आपत्ति न हो तो एक गीत और सुना दीजिये।" शकुन ने कमल से आग्रह किया।

"आज तो क्षमा कीजिये। फिर कभी सुना दूँगा।"

"अब न जाने कब भेट हो!" शकुन बोली।

"विश्वास रखिये। आप जब भी स्मरण करेगी, आ जाऊँगा।" कमल ने हँसकर कहा। फिर रायबहादुर की ओर मुडकर बोला—"अब आज्ञा दीजिये। बहुत दूर जाना है मुझे।"

"आप चिन्ता न करे। कार छोड आयेगी।" रायबहादुर ने सहज स्वर मे कहा।

"मै पैदल जाना ही पसन्द करूँगा।" कहकर कमल उठ खडा हुआ।

कमल ने ललित की ओर देखा। वह उठकर कमल के साथ बरामदे मे आ गया।

"तुम नही जाओगे घर?" कमल ने पूछा।

"बस मै भी चलता हूँ। सरला और मुन्ना को बुला लूँ।" कहकर ललित अन्दर चला गया।

कमल बीडी जलाकर बरामदे मे टहलने लगा।

"कोई अपराध हो गया हो तो क्षमा कीजियेगा।" अन्दर से आकर शैलजा ने कहा। "अस्वस्थ होते हुये भी आप आये इसके लिए धन्यवाद।"

"क्षमा तो मुझे माँगनी चाहिए। मैंने अकारण ही प्रोफेसर साहब को रुष्ट कर दिया।"

"आपने ठीक ही किया। आज उन्हे छठी का दूध याद आ गया होगा।" कहकर शैलजा खिलखिलाकर हँस पड़ी।

तभी अन्दर से ललित आ गया। उसके पीछे गोद मे मुन्ना को लिए सरला थी। शकुन भी साथ थी। बरामदे मे आकर शकुन ने ड्रायवर को कार लाने का आदेश दिया। कार आकर पोर्टिको मे लग गयी।

"अगर पैदल ही चलने की शपथ न खाई हो तो एक बात कहूँ।" हँसकर शकुन ने कमल से कहा।

"कहिये।"

"ललित को छोडने कार जा रही है। आप भी उसी मे चले जाइये।" शकुन ने सहज स्वर मे कहा।

कमल ने ललित की ओर देखा।

"शकुन जी की आज्ञा तो माननी ही पडेगी। आओ।" ललित बोला और कार मे बैठ गया।

सरला भी बैठ गयी।

कमल खडा रहा।

"आओ भी।" ललित ने पुकारा।

कमल झिझकता हुआ कार तक गया और फिर अगली सीट पर बैठने लगा।

"अरे, वहाँ कहाँ बैठ रहे हो। पीछे आओ।" ललित ने बुलाया।

कमल पीछे जाकर बैठ गया।

ललित और कमल के बीच मे बैठी सरला कुछ और सिकुड गयी।

शैलजा खडी न रह सकी। वह डगमगाते डगों मे अन्दर चली गयी। कामेश्वर ने कुछ पूछना चाहा पर वह तेजी से अपने कमरे की ओर बढ़

गयी। कामेश्वर चिढ गया। रूखे स्वर मे अपने मामा से बोला :—
"अब चलिये, मामा जी।"

"यह मेरी बहन सरला है।" कुछ देर बाद ललित बोला।

"छल, आडम्बर और असत्य के समाज में इन्हे देखकर मुझे आश्चर्य हो रहा था। अब मेरी समझ मे सब कुछ आ गया।" कहकर कमल तेजी से पीछे छूटने वाले बिजली के खम्भो को देखने लगा।

ललित और सरला के कार से उतर जाने के बाद कमल ने ललित से सस्नेह कहा—"कभी-कभी आ जाया करो।" और फिर हँसकर बोला, "मै देखने मे जितना बुरा लगता हूँ उतना बुरा हूँ नही।"

"अवश्य आया करूँगा, मित्र! पराजय और निराशा के क्षणो में मुझे तुमसे बहुत बल मिलेगा।"

"और मुझे तुमसे।" कमल का उत्तर था।

गली मे पहुँचकर ललित ने सरला की गोद से मुन्ना को ले लिया और धीमे स्वर मे रुकते-रुकते पूछा —"ये साडी-ब्लाउज और सैन्डिल क्या शकुन . ?"

"भाभी परोस से माँग लायी थी।" सरला ने बीच मे ही धीमे और उदास स्वर मे कहा।

ललित कुछ बोला नही। सिर झुकाये चुपचाप चलता रहा।

ड्रायवर को राममोहन के हाते का पता देकर कमल अपने विचारो मे खो गया। वह सोच रहा था शकुन के बारे मे, सरला के बारे मे, शैलजा के बारे मे। शकुन और शैलजा के स्वभाव तथा उनकी सहज प्रकृति मे पूर्व-पश्चिम का अन्तर पाकर वह आश्चर्य कर रहा था।

और सरला?

सरला की आँखो मे जिस गहन वेदना और विषम परिस्थितियो से उत्पन्न निराशा का भाव उसने देखा था उसके स्मरण से उसका मन भी भारी हो गया। उसके मुख से एक दीर्घ नि श्वास निकल गया।

दस

उस रात सरला को बहुत देर तक नींद नहीं आयी। तरह-तरह के विचार उसके मस्तिष्क मे आते रहे। वह शकुन के बारे में सोचती रही। शकुन कितनी अच्छी है! पैसे का गर्व उसे छू तक नही गया है। स्वयं मुझे लेने आयी, सहेली बता कर परिचय दिया और हर समय साथ रही। यदि वह साथ न रहती तो मेरी क्या दशा हुई होती! और सरला अनुभव करने लगी कि वास्तव मे शकुन ही उसकी एक मात्र ऐसी सहेली है जिससे वह सुख-दुख की बाते कर सकती है, जिसके सामने वह नि सकोच अपना हृदय खोलकर रख सकती है!

शकुन के बाद वह शैलजा के बारे मे सोचने लगी। कितनी अकड है उसमे! सीधे मुह बात भी नही कर सकती। मेरे अभिवादन का उत्तर नही दिया; मुझमे टेबिल-मैनर्स की कमी बता कर मेरा अपमान करने की चेष्टा की। कमल ने करारा उत्तर देकर उसे लज्जित कर दिया नही तो और न जाने क्या-क्या बकती।

कमल! कितना सीधा और सरल युवक है! कितनी पीडा है उसके स्वर मे! फिर भी सघर्ष के प्रति जागरुक रहता है! प्रोफेसर इन्द्र को कितने करारे उत्तर दिये! बोलती बन्द हो गयी उनकी। अपने को

बहुत विद्वान समझते थे।

और कामेश्वर! कितना अशिष्ट और धृष्ट था वह! ऐसे घूर रहा था जैसे कच्चा ही चबा जायेगा। मनुष्य के वेश मे भयकर भेडिया था वह जिसके जीवन का उद्देश्य भोली भेडो के मॉस से अपनी तुष्टि करना ही है! सोचते-सोचते उसका हृदय घृणा से भर गया।

सुबह वह मालती की साडी-ब्लाउज और सैन्डिले लौटाने गयी, परन्तु मालती के द्वार से ही लौट आयी। उसे याद आ गया कि भाभी ने एक बहाना बनाकर चीजे मॉगी थी। यदि मालती या उसकी मॉ कुछ पूछ बैठी तो वह क्या उत्तर देगी!

घर लौटकर उसने भाभी से कहा, "तुम्ही लौटा आओ ये चीजे।"

ललित गुड की चाय पीकर और दोपहर के लिए खाना लेकर मील चला गया था। मुन्ना अपने साथियों को पिछली रात के मजे सुनाने के लिए बाहर गली मे निकल गया था। मुन्नी का ज्वर उतर गया था। वह बरामदे मे खेल रही थी।

"तुम्ही दे आओ न!" दया ने हँसकर कहा।

"मै नही जाती। मुझे शर्म लगती है।" सरला बोली।

"शर्म? काहे की शर्म!" दया ने आश्चर्य से पूछा। वह कदाचित भूल गयी थी कि उन चीजो को मॉगने के लिए उसने क्या बहाना बनाया था।

"तुम कह ही ऐसी बात आयी हो।" कहकर सरला कमरे मे भाग गयी।

दया को हॅसी आ गयी। वह साडी-ब्लाउज और सैन्डिले लेकर द्वार की ओर बढी।

"जरा अखबार भी लेती आना, भाभी।" सरला ने अन्दर से ही कहा।

दया जानती है कि सरला को समाचार-पत्र पढने का चाव है। घर मे तो कोई पत्र आता नही था। अत वह मालती के यहाँ जाकर नित्य 'विश्वमित्र' पढ लिया करती थी।

कुछ देर बाद जब दया लौट कर आयी तो उसके हाथ में 'विश्वमित्र' था।

सरला ने झपट कर अखबार ले लिया।

समाचार पढते-पढते उसकी दृष्टि एक विज्ञापन पर पडी। गिवज्ञापन के ऊपर मोटे-मोटे शब्दो मे लिखा था—'लडकी चाहिए।'

सरला पूरा विज्ञापन एक साँस मे ही पढ गयी। उसमे लिखा था —

"पैतालीस वर्षीय एक धनी नि सन्तान विधुर के लिए एक नि सन्तान विधवा की आवश्यकता है। जाति-पाँति का कोई बन्धन नही। दहेज का भी कोई प्रश्न नही है। तत्काल ही ब्याह करने की इच्छा रखने वाल पत्र-व्यवहार करे। ब्याह आर्य-समाज की रीति से होगा।"

पत्र-व्यवहार के लिए एक पोस्ट-बाक्स का पता दिया हुआ था।

विज्ञापन पढ कर सरला को लगा कि उसे समस्या का समाधान मिल गया है। जो मार्ग अभी तक अधकार से आच्छादित था वही प्रकाश की किरणो मे आलोकित हो उठा। उसने सोचा कि भाई की चिन्ताओ को दूर करने का यही सर्वोत्तम उपाय है। निश्चय की दृढता उसके नेत्रो मे चमक बनकर प्रकाशित हो उठी।

दोपहर को जब दया सो गयी तब उसने विज्ञापन के उत्तर मे लिखा —

"प्रिय महोदय,

आपका विज्ञापन 'विश्वमित्र' मे देखा। मै विधवा नही, एक कुमारी कन्या हूँ। अवस्था अठारह वर्ष की है। देखने मे भी अच्छी हूँ। घर-गृहस्थी के कामो मे भी निपुण हूँ। मै विश्वास दिलाती हूँ कि आप यदि मुझसे शादी करेगे तो आपको निराश नही होना पडेगा।

यह जानकर हर्ष हुआ कि आप दहेज नही चाहते। हमारे पास देने के नाम पर कुछ है भी नही। हम तो आपसे कुछ लेना ही चाहते है। क्या आप दस हजार रुपये मेरे भाई को दे सकते है?

आप यह न सोचे कि मेरे भाई मुझे बेच रहे है। यह पत्र मै अपनी ओर से लिख रही हूँ। भैया-भाभी को मैने कुछ नही बताया है। दस हजार

रुपये मैं भैया के लिए नही, अपनी दो साल की भतीजी के लिए माँग रही हूँ।

आप मुझे पागल न समझेगे। पर मैं विश्वास दिलाती हूँ कि मैं पागल हूँ नही। मैं जो कुछ लिख रही हूँ उसे भली प्रकार समझती हूँ। आप पूछेगे कि दो साल की बच्ची इतना रुपया लेकर करेगी क्या? मैं बताती हूँ।

हम लोग निर्धन प्राणी है। मेरी चिन्ता भैया को दिन-रात सताती रहती है। जिससे बात चलाते है वह लम्बी-चौडी माँग करता है। भैया का यह दुख मुझसे देखा नही जाता। उन्हे चिन्ता से मुक्त करने के लिए ही मैंने यह कदम उठाया है। किन्तु यह समस्या मुझी तक सीमित नही है। जो स्थिति आज है वही तब भी होगी जब वह दो साल की बच्ची युवती हो जायेगी। इसीलिए मैं दस हजार रुपये की माँग कर रही हूँ। ये रुपये बच्ची के नाम से किसी भी बैंक मे आप जमा कर सकते है।

इस प्रकार आप देखेगे कि आप मुझे अपनाकर केवल मेरा ही उद्धार नही करेगे किन्तु उस भावी युवती का भी करेगे जो आज केवल दो साल की भोली-भाली बच्ची है। मुझे आपकी सहृदयता मे विश्वास है। मैं अपना पता नीचे दे रही हूँ। आप किसी भी दिन शाम को आकर मेरे भाई से बात कर सकते है।"

और पत्र के नीचे उसने अपना नाम तथा पता लिख दिया।

उसने पत्र एकबार प्रारम्भ से अन्त तक पढा और फिर सन्तोष की साँस लेकर पत्र मोडकर लिफाफे मे रख दिया। लिफाफे पर पता लिखकर उसे चिपका दिया और फिर द्वार भेडकर दबे पाँव घर से बाहर निकल गयी।

गली के नुक्कड़ पर लगे लेटर-बाक्स मे लिफाफा छोडकर जब सरला घर आयी तब भी दया सो रही थी।

सरला ने अनुभव किया कि उसकी छाती पर रक्खा हुआ बोझ बहुत कम हो गया है। उसे अपना तन-मन फूल की तरह हल्का ही लगा।

दया जब सोकर उठी तब उसने सरला में बहुत बडा परिवर्तन पाया। सदैव शान्त और उदास रहने वाली सरला की आँखो मे एक विचित्र चमक थी और वह बरामदे मे बैठी किसी गीत की पक्तियाँ गुनगुना रही थी।

"क्या बात है ? बहुत प्रसन्न दिखाई दे रही हो।" दया ने सरला के पास बैठकर पूछा।

"कोई खास बात तो नही है।" सरला ने मुस्करा कर कहा।

"आँखे तो कमल की तरह खिली जा रही है।" दया ने चुटकी ली।

"तुम्हारे कल वाले बहाने के बारे मे ही सोच-सोचकर हँसी आ रही है, भाभी।" कहकर सरला फिर मुस्करा पडी।

दया ने आश्चर्य से उसकी ओर देखा। उसकी समझ मे न आया कि सरला को हो क्या गया है।

"तुम तो मुझे ऐसे देख रही हो जैसे कभी देखा ही न हो।" सरला ने आँखे नचाकर कहा।

"सोच रही हूँ कही कल का झूठा बहाना सच न हो गया हो।" दया ने गूढ दृष्टि से उसके मुख की ओर देख कर कहा। "क्या किसी मोहन ने पसन्द कर लिया है मेरी राधा को ?"

"तुम्हे तो हर समय हँसी ही सूझती है, भाभी ! मुझ काली-कलूटी, बैगन लूटी को कौन पसद करेगा ?" सरला ने मुँह को तिकोना बनाकर कहा।

दया की गभीरता हास्य के स्वच्छन्द प्रवाह मे बह गयी।

धूप आँगन से खिसक कर दीवार पर चढ़ गयी थी। दिन का दूसरा प्रहर समाप्त हो कर तीसरा लग चुका था। स्कूल से लौटने वाले बच्चों की तेज आवाज सुनाई पडने लगी थी।

"मुन्ना क्या दोपहर भर बाहर ही रहा ?" दया अचानक ही पूछ बैठी।

"खेल रहा होगा। क्या बुलाऊँ ?"

"इतना कहती हूँ कि दोपहर को घर मे ही रहा कर। मगर वह सुनता ही नहीं। आने दो आज। ऐसी मरम्मत करूँगी कि......।"

दया का वाक्य अपूर्ण ही रह गया। हँसता-कूदता मुन्ना अन्दर आया।

"बुआ की गोद मे आजा, राजा बेटे !" सरला ने दोनो हाथ फैलाकर प्यार भरे स्वर मे मुन्ना को बुलाया।

वह आकर उसकी गोद मे बैठ गया।

"बहुत शैतान हो गया है तू !" दया ने उसका कान पकडकर कडे स्वर मे कहा। "बोल कहाँ था अब तक ?"

मुन्ना रोने लगा।

"यह क्या आदत है तुम्हारी। जब देखो तब डाँटती ही रहती हो मुन्ना को।" सरला ने दया से कहा और फिर मुन्ना को चुपाने लगी।

दया चूल्हा जलाने की तैयारी करती हुई बोली —"तुम्ही ने तो सिर पर चढा-चढा कर बिगाड दिया। तुम तो चली जाओगी ससुराल और उमर भर भुगतना पडेगा हमे।"

"अगर कहो तो मुन्ना को भी अपने साथ ले जाऊँ।" सरला ने कृत्रिम गभीरता से कहा।

उसकी बात सुनकर दया मुस्करा पडी।

मुन्ना सरला की गोद से उतरकर आँगन मे खेलने लगा।

"तुम अभी गीत कौन सा गुनगुना रही थी ?" सहसा दया को जैसे भूली बात याद आ गयी हो ऐसे ढग से वह पूछ बैठी।

"कल की गोष्ठी मे एक गीत सुना था, भाभी ! उसी की कुछ पक्तियाँ याद हो गयी है।" सरला ने सहज स्वर मे कहा।

"बहुत पसन्द आया वह गीत ?"

"हाँ, भाभी ! उस गीत मे बहुत दर्द था। पर . पर वह दर्द ऐसा नही था जो हमे आहे भरने के लिए छोड दे। उसमे चुनौती थी, जूझने की, दर्द और दुख का अन्त करने के लिए मर-मिटने की। आशा और विश्वास के स्वर उस गीत मे मुखरित हो उठे थे।" सरला ने आँखे बन्द करके भावावेश मे आकर कहा।

दया उसके मुख की ओर निर्निमेष दृष्टि से देखने के अतिरिक्त और कुछ न कर सकी। उसे लगा कि सरला इस वास्तविक जगत से दूर—

बहुत दूर किसी काल्पनिक लोक मे पहुँच गयी है।

चूल्हा जला कर दया ने बटलोई मे अदहन चढा दिया और फिर वह पीतल की फूटी थाली मे अरहर की दाल निकालकर उसे बीनने लगी।

कमरे से मुन्नी के रोने की आवाज आयी। वह जाग गयी थी।

सरला ने उसे गोद मे ले लिया और उसे प्यार से चूमने लगी।

अचानक सरला की इच्छा हुई कि वह मुन्ना-मुन्नी को जी भर कर प्यार करे भाभी के गले लगकर जी भरकर रोये। उसे पूरा विश्वास था कि विज्ञापन कर्त्ता विधुर उसका पत्र पढकर उसकी दशा पर तरस खायेंगे और और उसे शीघ्र ही ससुराल जाना पडेगा। जिस घर मे खेल-खेलकर वह सयानी हुई, जिस घर की ईंट ईंट से उसका स्नेह-नाता है उसी घर से बिछुडने का ध्यान आते ही अजीब सी उदासी उसके प्राणो पर छा गयी और वह मुन्नी को कलेजे मे लगाकर रोने लगी।

सिसकियो का स्वर सुनकर दया कमरे मे गयी। सरला को रोता देख कर उसने घबराये स्वर मे पूछा —"क्या हुआ ?"

"कुछ नही, भाभी !" सरला ने सयत होकर कहा। "तुम्हारे कल वाले बहाने को याद करके रोने लगी थी।"

दया को सन्देह हुआ कि कही सरला पागल तो नही हो गयी है। वह उसकी ओर ध्यान से देखने लगी। फिर एक विचार सहसा उसके मस्तिष्क मे बिजली की तरह कौध गया। वह झपट कर दो लाल मिर्चे ले आयी और उन्हे सरला के ऊपर घुमाकर शीघ्रता से फिर बरामदे मे चली गयी।

सरला ने बाहर आकर देखा कि दया उन मिर्चो को चूल्हे मे डाल रही है।

"यह क्या तमाशा किया, भाभी ?" सरला ने हँसकर पूछा।

"नजर उतारी थी। लगता है कल तुम्हे किसी मन चले की नजर लग गयी है। तभी तो बहकी-बहकी बाते कर रही हो आज।" दया के स्वर मे सहज गभीरता थी।

चूल्हे की तेज आग मे जलकर मिर्चे राख हो गयी।

"देखो, जरा भी भस नही उडी। तुम्हें जरूर नजर लगी है।" दया ने विश्वास के साथ कहा और फिर एक क्षण रुककर बोली, "और लगती भी क्यो न? इन्द्रलोक की अप्सरा लग रही थी। मेरे मन मे तो आया कि तुम्हारे गाल मे एक छोटा सा काला तिल बना दूँ मगर जल्दी मे काजल की डिबिया मिली ही नही।"

"तिल से क्या होता, भाभी?"

"फिर मजाल थी कि किसी की नजर लग जाती!" कहकर दया आटा गूँथने लगी।

सरला के मुख से मुक्त हास्य की मृदु लहरियाँ निकल कर वायुमडल में तैरने लगी।

× × ×

शाम को जब ललित मील से लौट कर आया तब काफी थका हुआ और उदास था। वह आँगन मे पडी चारपाई पर कटे हुये वृक्ष की भाति गिर पड़ा। दया चौके से निकलकर उसके पास गयी और धीमे स्वर मे पूछा—"तबियत तो ठीक है?"

ललित मौन रहा।

"क्या बात है?" दया घबरा गयी।

"तुम्हारी अकल को रो रहा हूँ।" उठकर बैठते हुये ललित बोला। "मील मे शकुन का फोन आया था। झूठ बोलने के लिये मुझे डाँट रही थी।"

दया की समझ में कुछ नही आया।

"मैंने उसे कह दिया था कि सरला की बात चल रही है और जल्द ही सम्बन्ध तय हो जायेगा, मगर तुमने सब गुड-गोबर कर दिया।" ललित ने चिढ़ कर कहा।

"मुझे क्या मालूम था कि तुमने क्या कहा है! मुझसे उन्होंने पूछा और मैंने सच्ची बात बता दी।" कह कर दया फिर चौके मे आ गयी।

"सत्य की देवी एक तुम्हीं तो हो दुनिया मे।" ललित ने रूखे स्वर में कहा और फिर वह उठकर आगन मे बेचैनी से टहलने लगा।

ग्यारह

शैलजा के व्यवहार से कामेश्वर बहुत चिढ़ गया था। वह उस पर क्रुद्ध हो उठा था। और उसने मन-ही-मन निश्चय कर लिया था कि उसे अधिक छूट देना ठीक नहीं है। शीघ्र से शीघ्र अपना उल्लू सीधा करने के लिए भांति-भांति की योजनाओ का निर्माण वह रातभर करता रहा था। वह इसे भली भांति जानता था कि यदि उसकी पकड़ कही पर जरा सी भी ढीली रही तो वह मछली की तरह फिसल कर निकल जायगी। इससे पहले कि चिड़िया के परो मे उड़ने की शक्ति आये उसे घने जाल मे जकड़ लेने की आवश्यकता का अनुभव उसका रोम-रोम करने लगा। काफी सोच-विचार के बाद अन्त मे उसने एक योजना बना ही डाली। उसे विश्वास था कि यदि उसने सावधानी और बुद्धिमानी से काम लिया तो योजना अवश्य सफल हो जायेगी।

जब वह कालेज मे शैलजा से मिला तो उसके अधरो पर रोज से अधिक मधुर मुस्कान थी। उसकी मुख-मुद्रा देखकर कोई भी यह अनुमान नही लगा सकता था कि वह शैलजा के किसी व्यवहार से कभी भी खिन्न हुआ होगा। उसका रुख देखकर शैलजा को आश्चर्य हुआ। वह समझती थी कि कामेश्वर उससे रुष्ट हो गया होगा और वह रूखा व्यवहार करेगा।

"बहुत खुश दिखाई दे रहे हो! क्या बात है?" शैलजा ने पूछा।

"आज हमारे नये जीवन का नया दिन है। इससे ज्यादा खुशी की बात और क्या हो सकती है?" कामेश्वर ने मुस्करा कर कहा।

शैलजा की समझ मे उसका तात्पर्य नही आया, फिर भी वह मुस्करा दी।

"कल की गोष्ठी कैसी लगी?" उसने पूछा।

"स्प्लेन्डिड! कमल के गीत ने तो कमाल ही कर दिया। ही इज इनडीड अ जीनियेस!" कामेश्वर ने सहज स्वर मे कहा।

उसके मुख से कमल की प्रशसा सुनकर शैलजा को आश्चर्य भी हुआ और हर्ष भी।

"कमल का गीत तुम्हे पसन्द आया?" उसने कामेश्वर की आँखो मे अपनी दृष्टि गडाकर पूछा।

यह क्षण बहुत खतरनाक था। कामेश्वर जानता था कि शैलजा उसके आन्तरिक भावो को पढने की चेष्टा कर रही है। शायद उसे उसकी बात पर विश्वास नही हुआ है। यदि उसकी मुख-मुद्रा मे तनिक भी परिवर्तन हुआ तो वह उसके हृदय मे कमल के प्रति पनपने वाली घोर घृणा का भाव जान लेगी।

"जिसे उसका गीत पसन्द न आये वह इन्सान नही, पत्थर है।" कामेश्वर ने अपने आन्तरिक भावो को मुस्कान के आवरण मे छिपा कर कहा। "जैसे प्रोफेसर इन्द्र।"

शैलजा ने अपनी दृष्टि कामेश्वर की ओर से हटा ली। उसे लगा कि उसने कामेश्वर को समझने मे भूल की है। वह वास्तव मे कमल का प्रशसक है यह जानकर वह प्रसन्न हो उठी।

"तुम्हे कमल की प्रतिभा मे विश्वास है?" शैलजा ने धीमे स्वर मे पूछा और वह सामने मैदान की ओर देखने लगी।

"हाँ। एक दिन वह इन्डिया का टापमोस्ट पोइट हो जायेगा।" कामेश्वर ने पूरे विश्वास के साथ कहा।

"आई टू थिंक सो।" शैलजा धीमे स्वर मे बोली। कुछ देर रुक कर उसने कहा—"तुम अपने मामा से कहकर उसका सग्रह प्रकाशित क्यो नही करा देते ?"

कामेश्वर ने गूढ दृष्टि से शैलजा की ओर देखा।

शैलजा ने मुख दूसरी ओर कर लिया। उसे भय था कि कही कामेश्वर उसके हृदय के एकान्त कोने मे अकुरित कमल के प्रति आकर्षण को देख न ले। वह यह नही चाहती थी कि कामेश्वर को वास्तविकता का ज्ञान हो। वह चाहती थी कि कामेश्वर यही समझे कि जो कुछ वह कह या कर रही है वह केवल सहानुभूतिवश ही है; साधनो के अभाव मे कुठित होने वाली प्रतिभा को प्रकाश मे लाकर और उसे विकसित होने का अवसर देकर वह मानवीय धर्म का पालन भर कर रही है।

कामेश्वर को धोखा देने की चेष्टा व्यर्थ थी। वह वास्तविकता का आभास पहले ही पा चुका था। फिर भी उसे तो ऐसा ही अभिनय करना था मानो वह धोखा खा गया है, असत्य के रेशमी जाल मे फँस गया है।

"कल ही विचार मेरे दिमाग मे भी आया था।" कामेश्वर ने स्वर मे सत्य की झलक लाकर कहा। "मगर जो कुछ कमल ने कहा उससे तो मैंने यही नतीजा निकाला है कि वह अभी कोई कलेक्शन छपाना ही नही चाहता।"

"उन्हे मै समझा लूँगी। तुम मामा जी को तो राजी कर लोगे ?"

"ह्वाई नॉट ! मै जरूर राजी कर लूँगा।" कामेश्वर ने विश्वास दिलाया।

"ओह ! आई एम सो ग्रेटफुल टू यू ! शैलजा ने प्रसन्न स्वर मे कहा।

"मेरी बात पर कुछ सोचा ?" कामेश्वर ने सहसा बात का रुख बदल कर पूछा।

शैलजा कठिनाई मे पड गयी। सच तो यह था कि उसने कामेश्वर के प्रस्ताव पर गभीरता से सोचा ही न था। कामेश्वर को प्रसन्न करने के लिए उसने असत्य का आश्रय लेकर मधुर स्वर मे कहा—"कल से उसी

पर सोच रही हूँ। मगर.. मगर अभी तक माइन्ड मेक अप नही कर पायी हूँ।"

"मै जल्द से जल्द तुम्हारा जवाब चाहता हूँ, शैल! तुम जानती हो, मेरे लिए यह जिन्दगी और मौत का सवाल है।" कामेश्वर के स्वर में आद्रता आ गयी।

"जानती हूँ।" शैलजा ने मादक मुस्कान छोडते हुये तिरछी दृष्टि से उसकी ओर देखकर कहा। "रेस्ट अश्योर्ड! फैसला जिन्दगी के ही पक्ष मे होगा।"

कामेश्वर समझ गया कि उसे लासा दिया जा रहा है, किन्तु फिर भी दृष्टि और स्वर मे परम कृतज्ञता और प्रसन्नता का भाव भर कर बोला—"थैंक्स! मेनी मेनी थैंक्स!!"

शैलजा ने कोई उत्तर देना उचित न समझा!

तभी घंटी बज उठी।

दोनो क्लास-रूम की ओर चल दिये।

पीरियड भर दोनो एक दूसरे की ओर तिरछी दृष्टियो से देखते रहे।

दोनो मे मानो एक दूसरे को धोखा देने, छलने की होड लगी थी।

नारी पुरुष को छलने की चेष्टा कर रही थी।

पुरुष नारी को छलकर उसकी दुर्बलता पर कटु आघात करने की घात मे बैठा था।

पीरियड समाप्त होने के बाद शैलजा 'गर्ल्स रिटायरिंग रूम' की ओर बढ़ी।

"जरा सुनना तो।" कहकर कामेश्वर उसके पीछे चल दिया।

शैलजा रुक गयी।

"कल शरद पूर्णिमा है। बोटिंग करने चलोगी?" कामेश्वर ने पूछा।

शैलजा सोच मे पड गयी।

"मुझे पानी से डर लगता है।" एक क्षण बाद उसने धीमे स्वर में दृष्टि नीची करके कहा।

"अगर नही चलना है तो साफ इन्कार कर दो। बहाना बनाने से क्या फायदा ?" रूखे स्वर मे कामेश्वर ने कहा और फिर वह जाने का उपक्रम करने लगा।

शैलजा को लगा कि उसका बना-बनाया खेल बिगड़ा जा रहा है। वह कामेश्वर को रुष्ट करके कमल के निकट नही आ सकती थी। कमल को जीतने के लिए उसने जो उपाय सोचा था उसका एक अनिवार्य अग था उसके सग्रह का प्रकाशन और यह कार्य कामेश्वर की सहायता से ही भली प्रकार हो सकता था।

"तुम तो नाराज हो गये।" मुस्कराते हुये शैलजा बोली। "इतनी छोटी-छोटी बातो पर बिगडोगे तो कैसे काम चलेगा ?"

कामेश्वर ने सोचा कि उसका तीर निशाने पर पडा है। वह रुक गया और कृत्रिम रोष से बोला—"इसे तुम छोटी बात कहती हो ? खैर ! मै कल सात बजे आऊँगा। तैयार रहना।"

"मै तुम्हारा वेट करूँगी।" कहकर झूमती हुई शैलजा रिटायरिंग रूम की ओर बढ गयी।

जब कामेश्वर कालेज से घर पहुँचा तब वह बहुत प्रसन्न था। उसके पैर जमीन पर नही पड रहे थे। उसका फैलाया हुआ जाल शैलजा को चारो ओर से जकड चुका था। उसे विश्वास हो गया था कि बहुत शीघ्र ही वह पछी के पर तोडकर उसे हमेशा-हमेशा के लिए तडपने के लिए छोड देगा।

सीटी बजाता हुआ जैसे ही वह अपने कमरे की ओर बढा वैसे ही गोमती ने हर्षित होकर कहा—"आ गया, बेटा ! झटपट कपडे बदल ! मै अभी चाय लाती हूँ।"

वह कपडे बदल भी न पाया था कि गोमती चाय और नाश्ता लेकर आ गयी।

"तुमसे कई बार कह चुका हूँ, माँ कि तुम तकलीफ न किया करो।" कामेश्वर कमीज उतारकर कुर्त्ता पहनते हुये बोला। "मगर तुम सुनती

ही कहा हो।"

"बेटे का काम करने मे मा को जो सुख होता है उसे तू क्या जाने!" गोमती स्नेह से उसके सिर पर हाथ फेरती हुई बोली। "मै तो अब तभी आराम से बैठूँगी जब तेरी सेवा करने के लिए बहू आ जायेगी।"

कामेश्वर चाय पीने लगा।

"बेटा! मैने तेरे लिए एक बहुत अच्छी लडकी देखी है। पढी-लिखी भी है और सुन्दर भी।" गोमती उसके पास बैठकर मीठे स्वर मे बोली। "दहेज भी काफी मिलेगा। बोल, उनसे हाँ कर दूँ?"

कामेश्वर ने चाय का प्याला मेज पर रख दिया और फिर गोमती की ओर बचपन भरी दृष्टि से देखकर बोला—"माँ! मै ब्याह-शादी के झझट मे पडना नही चाहता।"

"ब्याह-शादी झझट है?" गोमती के स्वर मे कडाई आ गयी। "यह कह क्या रहा है तू?"

"ठीक कह रहा हूँ, माँ! मै शादी नही करूँगा।"

"शादी नही करेगा तो क्या जिन्दगी भर आवारा छोकरियो के पीछे डोलता रहेगा?" गोमती क्रुद्ध होकर बोली। "तू समझता है मै कुछ जानती नही। तेरी इन्ही हरकतो से भय्या नाराज है। अगर.... ।"

"मै किसी की नाराजी की परवाह नही करता।" कामेश्वर बीच मे ही आवेश से बोला। "किसी को खुश करने के लिए मै अपनी आजादी नही बेच सकता।"

क्रोध से गोमती का चेहरा तमतमा गया। इतना सयाना होकर भी कामेश्वर बच्चो जैसी बाते करता है; स्थिति की गभीरता भी नही समझता। उसकी इच्छा हुई कि उठकर बाहर चली जाये। उसका क्या है? दो-चार बरस की जिन्दगी है। भैया रोटी तो दे ही देगे! अपनी मूर्खता का फल कामेश्वर स्वय भुगतेगा। किन्तु माँ की ममता ने फिर अँगडाई ली। नही, उसे कामेश्वर के हित की रक्षा करनी चाहिए, उसे समझा-बुझा कर ठीक करना ही चाहिए।

"बेटा !" गोमती ममता भरे मधुर स्वर में बोली। "भैया तुझसे बहुत नाराज हैं। अगर उन्होंने तेरे लिए कुछ भी न किया तो . . . तो क्या होगा ? सोच तो जरा।"

"मैं तुम्हारा मतलब नहीं समझा।" कामेश्वर चौकन्ना हो गया।

"अगर उन्होंने अपनी वसीयत में तेरे नाम कुछ भी न छोड़ा तो क्या होगा ?" गोमती के स्वर में पीड़ा बोल उठी।

"मगर . . . मगर यह कैसे हो सकता है ?" कामेश्वर हकला कर बोला। "मेरे सिवाय उनका और है ही कौन ?"

"बहुत भोला है तू।" गोमती ने धीमे स्वर में कहा। "अगर वे सारी सम्पत्ति दान कर दें तो क्या तू उन्हें रोक सकता है ?"

कामेश्वर ने इस बारे में कभी कुछ सोचा ही न था। वह अपने को मामा की समस्त सम्पत्ति का उत्तराधिकारी समझता है। वह उत्तराधिकार से वंचित भी किया जा सकता है ऐसा विचार कभी स्वप्न में भी उसके मन में न आया था। गोमती की बात सुनकर वह काँप उठा। उसके माथे पर पसीने की बूँदें झलकने लगीं।

"क्या . . क्या मामाजी मुझसे बहुत नाराज हैं ?" उसने भर्राये स्वर में गोमती से प्रश्न किया।

"होंगे नहीं। तेरे बिल चुकाते-चुकाते परेशान हो गये हैं। और इन सब झगड़ों की जड़ हैं वे लड़कियाँ जिनके पीछे दीवाना होकर तू पैसा पानी की तरह बहाता फिरता है।" गोमती ने दुखी होकर कहा और फिर कामेश्वर की ओर स्नेहपूर्ण दृष्टि डालकर बोली—'अगर तेरी शादी हो जाये तो सब बखेड़ा खतम हो जाये। नाक में नकेल पड़ते ही तेरा इधर-उधर घूमना बन्द हो जाये और फिर भैया को भी शिकायत का कोई मौका ही न मिले।"

कामेश्वर चिन्तामग्न हो गया।

"क्या कहता है तू ?" गोमती ने आशा भरे स्वर में पूछा।

"शायद तुम ठीक कहती हो, माँ ! लगता है शादी करनी ही

पड़ेगी।"

कामेश्वर का उत्तर सुनकर गोमती की बाछें खिल गयीं। हर्ष के आवेग में उसकी धूमिल आँखों में ज्योति आ गयी। आगे झुककर उसने पुत्र का मस्तक चूम लिया।

"बड़ा राजा बेटा है तू।" प्रसन्न स्वर में गोमती बोली। "तू चिन्ता न कर। मैं सब ठीक कर लूंगी।"

और फिर वह चाय की ट्रे उठाकर कमरे से बाहर चली गयी।

कामेश्वर की उद्विग्नता बढ़ गयी। बेचैन होकर वह कमरे में टहलने लगा।

और वह तब तक टहलता रहा जब तक बाबू श्यामसुन्दर न आ गये। जब बाबू श्यामसुन्दर ने उसे अपने कमरे से पुकारा तब वह जाकर विनीत भाव से खड़ा हो गया।

"बैठ जाओ।" बाबू श्यामसुन्दर ने आदेश दिया।

वह कोच पर बैठ गया। उसे लगा कि कमरा घूम रहा है, कमरे की हर वस्तु घूम रही है।

"शायद तुम ठीक कहते थे। पुराने साहित्यकारों में अब कुछ नवीनता नहीं रह गयी है।" बाबू श्यामसुन्दर ने शेरवानी के बटन खोलते हुये कहा।

"जी!" बड़ी कठिनाई से कामेश्वर के मुख से निकला।

"आज मैंने उपन्यास की पाण्डुलिपि पढ़ी।" बाबू श्यामसुन्दर आराम से पैर फैलाकर बैठते हुये बोले। "बोझिल होने के साथ-साथ उसमें कोई नयी बात भी नहीं है। लगता है या तो पुराने लोगों का कोष समाप्त हो गया है या फिर प्रसिद्धि और प्रतिष्ठा ने उन्हें पागल कर दिया है। वे समझने लगे हैं कि हम जो कुछ भी लिख देंगे वह अमर हो जायेगा।"

कामेश्वर की समझ में नहीं आया कि क्या बोले। हाँ, साँस लेने में जो कठिनाई उसे पहले हो रही थी वह दूर हो गयी। वह आराम से बैठ गया और खुलकर साँस लेने लगा।

"मैंने पाण्डुलिपि लौटा दी है।" बाबू श्यामसुन्दर फिर बोले।

"आपने ठीक किया, मामाजी।" इस बार कामेश्वर बोला। "पुराने लोगो का खून ठडा हो गया है। समय के साथ वे चल नही सकते; आज की माँगे उनसे पूरी नही हो सकती।"

"कल कमल ने ठीक ही कहा था। समय के साथ मूल्य भी बदलते है। आज पुरानी मान्यताये समाप्त हो रही है, नयी बन रही है। यह युग क्रान्ति का युग है। नयी प्रतिभाओ को प्रोत्साहन देना आज का युग-धर्म है।" बाबू श्यामसुन्दर ने कहा।

"आप ठीक कहते है। नये खून मे गर्मी है, रवानी है।"

"नये खून मे जोश तो बहुत है मगर सयम का अभाव है। फिर भी हमे नये विचारो, नयी मान्यताओ, नयी सम्भावनाओ को प्रकाश मे तो लाना ही है।" कहकर बाबू श्यामसुन्दर गभीर हो गये।

"कमल के बारे मे आपकी क्या ओपीनियन है?" कामेश्वर ने डरते-डरते पूछा।

"तुमसे सैकडो बार कह चुका हूँ कि मुझसे खिचडी भाषा न बोला करो।" बाबू श्यामसुन्दर क्रुद्ध होकर बोले। "न जाने क्या हो गया है तुम लोगो को कि ठीक से बोल भी नही सकते।

कामेश्वर ने सहम कर सिर झुका लिया।

"क्या पूछ रहे थे तुम?" बाबू श्यामसुन्दर ने जोर से पूछा।

"जी, कमल के बारे मे आपका क्या विचार है?" कामेश्वर ने धीमे स्वर मे पूछा।

"मुझे उसके अतिरिक्त और कोई जँचा ही नही? वही घिसी-पिटी शृगारी भावनाये, वही शब्द-विन्यास, वही शैली, वही अलकार! कमल मे नवीनता है। प्रतिभाशाली तरुण है वह!" बाबू श्यामसुन्दर ने निर्णय दिया।

"तो क्यो नही आप उसका कोई सग्रह निकालते है?"

बाबू श्यामसुन्दर के मुख पर चमक आ गयी। उत्साह से बोले—"अवश्य निकालूँगा।" फिर दूसरे ही क्षण उदास होकर धीमे स्वर मे

कहा—"मगर वह देगा भी ?"

"आप उसकी चिन्ता न करें, मामाजी! संग्रह मैं ले आऊँगा।"

"तब ठीक है। मुझे जिस दिन पाण्डुलिपि मिल जायेगी उसी दिन प्रेस में दे दूंगा।" कहकर बाबू श्यामसुन्दर उठकर टहलने लगे।

कामेश्वर उठकर बाहर चला गया।

बारह

शारीरिक क्रियाओ का सचालक मस्तिष्क होता है। हमारे अग मस्तिष्क के आदेश से ही समस्त क्रियाये करते है। हमारी सचेष्ट क्रियाये चेतन मस्तिष्क के आदेशो का परिणाम होती है। कुछ क्रियाये ऐसी भी होती है जिनका सम्बन्ध मस्तिष्क से नही होता। वे अपने आदेश उपचेतना मस्तिष्क से प्राप्त करती है। हमारा उपचेतन मस्तिष्क भी कभी-कभी विचित्र कौतुको की सृष्टि करता है।

शैलजा ने कालेज जाने के लिए जब कार स्टार्ट की तब उसने स्वप्न मे भी न सोचा था कि कार कालेज की ओर न जाकर राममोहन हाते की ओर मुड जायेगी। उसके उपचेतन मस्तिष्क मे कमल से मिलने, उससे सग्रह देने के विषय मे बात करने की बलवती इच्छा थी अवश्य, पर घर से निकलते समय उसने उसके घर जाने का विचार तक नही किया था। पुस्तके लेकर वह कालेज के लिए ही चली थी परन्तु जैसे ही कार उस चौराहे पर पहुँची जहाँ से एक मार्ग कालेज की ओर जाता था और दूसरा कमल के घर की ओर वैसे ही उसके उपचेतन मस्तिष्क ने अपनी लीला दिखा दी। फलस्वरूप उसके हाथो ने कार का स्टियरिंग ह्वील कमल के घर की ओर मोड दिया और वह पाँच मिनट बाद ही राममोहन के हाते पहुँच गयी।

कार फाटक के पास छोड़कर वह पैदल ही अन्दर गयी। उसे आश्चर्य हो रहा था कि वह कालेज न जाकर यहाँ क्यो आ गयी और साथ ही साथ इस विचित्र घटना पर हँसी भी आ रही थी।

शैलजा कुछ दूर ही चली थी कि उसे सामने से आता हुआ कमल दिखाई दिया। वह प्रसन्न हो उठी। कमल ने भी उसे देख लिया था। उसके मुख पर आश्चर्य के चिन्ह थे।

"कोई परिचित रहता है आपका यहाँ?" कमल ने पास आकर विस्मय से पूछा।

"जी हाँ!" कहकर शैलजा ने मुक्त हास्य बिखेर दिया और फिर कटाक्ष करती हुई बोली। "क्या आप मेरे परिचित नही है?"

कमल की परेशानी देखकर शैलजा को हँसी आ गयी। कितना भोला है यह सीधी सी बात भी नही समझता!

"मै आपके पास ही आयी हूँ।" शैलजा ने उसकी परेशानी दूर करने के अभिप्राय से कहा।

किन्तु कमल की परेशानी कम होने के बजाय और बढ गयी। उसकी समझ मे न आया कि उसके पास आने की शैलजा को क्या आवश्यकता पड गया।

"मेरे पास ...? आप परिहास कर रही है।" कमल ने अपने लम्बे बालो पर हाथ फेरते हुए कहा।

"आपसे परिहास करने की धृष्टता कैसे कर सकती हूँ? मै आपके पास ही आयी हूँ।" शैलजा ने गम्भीरता से कहा। "यहाँ खडे-खडे बात करने से अच्छा तो यह है कि आप फाटक के बाहर चले चले। वहाँ मेरी कार खडी है। किसी अच्छी जगह चलकर बाते होगी।"

कमल घबरा गया। वह ऐसी स्थिति के लिए तैयार नही था। बचने की चेष्टा करता हुआ बोला—"देखिये, इस समय मै बहुत आवश्यक कार्य से जा रहा हूँ। क्षमा कीजिये। फिर कभी बाते कर लेना।"

आपतो इस तरह घबरा रहे है जैसे आप लड़की हो और मै लड़का

कहकर शैलजा खुल कर हँस पड़ी।

कमल सकपका गया। घबराया दृष्टि से उसने गली में इधर-उधर देखा कि कहीं कोई देख तो नहीं रहा है। गली में उस समय कोई नहीं था। उसने सन्तोष की साँस ली।

"चलिये, देवी जी, बाहर चलिये।" कहकर वह तीव्र गति से फाटक की ओर बढ़ा।

शैलजा मुस्करा कर उसके पीछे चल दी।

"कहिये, क्या काम है आपको?" कार के पास रुककर कमल ने पूछा।

"आप बैठिये तो।" कार का द्वार खोलकर शैलजा बोली। "अभी बताती हूँ सब।"

कमल बैठ गया।

शैलजा ने अपने स्थान पर बैठकर कार स्टार्ट कर दी।

"कहाँ ले जा रही हो मुझे?" कमल पूछ बैठा।

"आप तो लड़कियों से भी ज्यादा डरपोक हैं।" शैलजा ने शरारत भरे स्वर में कहा और फिर रुककर बोली। "मुझे बहुत जोर से भूख लगी है। पहले कुछ खा-पी लें, फिर बातें होंगी।"

कमल अपने दुर्भाग्य पर अदृश्य आँसू बहाता चुपचाप बैठा रहा।

कार "क्वालिटी" के सामने जाकर रुक गयी।

"आइये।" नीचे उतर कर शैलजा बोली।

"आप जलपान कर आइये। मैं यहीं बैठा हूँ।" कमल कार के अन्दर से ही बोला।

"जी।"

"मैं भागूँगा नहीं।" कमल ने विश्वास दिलाया।

"आइये भी।" शैलजा ने कमल का हाथ पकड़ कर खींचते हुये कहा। "सीधी तरह नहीं आइयेगा तो गोद में ले जाना पड़ेगा।"

कमल ने हल्का झटका देकर हाथ छुड़ा लिया। वह सिर झुका कर उतर

आया और धीमे स्वर मे बोला—"आप क्या कर रही है, देवी जी ! पहले मेरे वस्त्रो को देखिये और फिर सोचिये कि मुझे अन्दर ले जाना कहाँ तक ठीक है।"

"उन्हे वस्त्रो से नही, पैसो से मतलब है। आप आइये तो।"

"एक बार फिर सोच लीजिये। मेरा कुछ नही बिगडेगा। आपको मुझ जैसे लगूर के साथ देखकर लोग आपकी हँसी उडायेगे।"

"आप मेरी चिन्ता न करे। मेरी हँसी उडाने का साहस किसी मे नही है।" कहकर शैलजा आगे बढ गयी।

कमल भी झिझकता हुआ साथ चल दिया।

'क्वालिटी' जैसा रेस्ट्रां जनसाधारण की पहुँच के बाहर था। वहाँ तो वही जा सकते थे जो चाय या काफी के बजाय पैसा पीने की सामर्थ्य रखते थे। और पैसो वालो को सुबह इतना अवकाश कहाँ कि 'क्वालिटी' मे बैठकर समय नष्ट करे ! इसलिए 'क्वालिटी' का हाल शाम को तो हँसी और कहकहो से गूँजा करता था पर सुबह प्राय. खाली ही रहता था। उस दिन भी हाल मे शान्ति थी। कोने की मेज पर बैठी एक एंग्लो इन्डियन दम्पत्ति के अतिरिक्त हाल मे कोई न था। शैलजा और कमल दूसरे कोने मे जाकर बैठ गये।

शैलजा को रेस्ट्रां के सभी बैरे जानते थे। स्वय मैनेजर उससे परिचित था क्योकि वह वहां बहुधा जाया करती थी—कभी अकेले, कभी क[illegible]स्वर के साथ। कभी-कभी शकुन और रायबहादुर के साथ भी चली जाती थी। जैसे ही शैलजा और कमल गद्दीदार कुर्सियो पर बैठे वैसे ही मैनेजर अपने स्थान से उठकर वहाँ आ गया।

"गुड मार्निग, मिस !" शैलजा के अजीब से साथी को देखकर जो आश्चर्य उसे हो रहा था उसे छिपाने की चेष्टा करता हुआ वह बोला।

"गुड मार्निग।" शैलजा ने मृदु मुस्कान सहित कहा। "प्लीज सेन्ड केक्स, पैस्ट्री, सैन्डविचेज एन्ड काफी।"

मैनेजर ने वही से एक बैरे को आदेश दे दिया और फिर वह कमल पर

उलझन भरी दृष्टि डालकर अपने स्थान पर चला गया।

बैरा एक बड़ी प्लेट में केक्स, पैस्ट्री और सैन्डविचेज लाकर रख गया।

"खाइये।" शैलजा ने सहज स्वर में कमल से कहा।

"भूख मुझे नहीं, आपको लगी है।" कमल का रूखा उत्तर था।

शैलजा की मीन जैसी चंचल आँखों में स्थिरता आ गयी, उसके चाँद जैसे चेहरे पर उदासी की घटा छा गयी। कमल का रूखा व्यवहार उसे बुरा लगा। फिर भी अपने को संयत करके धीमे स्वर में बोली :—

"क्या आप चाहते हैं कि इन सबके सामने मैं आपको अपने हाथ से खिलाऊँ ?"

कमल उसकी ओर देखता भर रहा।

"खाइये।" कहकर उसने एक पेस्ट्री कमल के हाथ में थमा दी और फिर प्लेट में दूसरी पेस्ट्री उठाकर स्वयं खाने लगी।

कमल भी अनिच्छा से खाने लगा।

बैरा काफी और क्रीम रख गया।

शैलजा ने काफी बनाकर एक प्याली कमल के सामने खिसका दी और दूसरी अपने अधरों से लगा ली।

कमल सिर नीचा किये खाता-पीता रहा।

शैलजा कनखियों से उसकी ओर देखती रही।

"आपका गीत हम सबको बहुत पसन्द आया।" जलपान के बाद शैलजा ने अपनी उँगली में पड़ी हीरे की अंगूठी से खेलते हुये कहा।

"धन्यवाद।" कमल के स्वर में रूखापन था। "क्या यही कहने के लिए आपने कष्ट किया है ?"

कमल की बात सुनकर शैलजा हँस पड़ी।

"लगता है रूखापन आपका स्वभाव बन गया है।" शैलजा अपनी हँसी रोककर एक क्षण बाद बोली। "बात यह है कि कल की गोष्ठी में एक प्रकाशक भी थे। उन्हे आपकी रचना बहुत पसन्द आयी है। वे आपकी कविताओं का संग्रह निकालना चाहते है।"

"मैं अभी अपना कोई संग्रह प्रकाशित कराना ही नहीं चाहता।"

"यह सुनहला मौका हाथ में न खोइये। बाबू श्यामसुन्दर प्रान्त के प्रमुख प्रकाशक हैं। बड़े-बड़े साहित्यिक उन्हें अपनी कृतियाँ देने के लिए लालायित रहते हैं।" वह समझाने के ढंग से बोली।

"रहते होंगे।" कहकर कमल अधगोरी दम्पत्ति की ओर देखने लगा।

"मैं आपकी ओर से उन्हें वचन दे चुकी हूँ।" शैलजा ने कहा और वह कमल की ओर आशा भरी दृष्टि से देखने लगी।

"अपनी ओर से वचन देने के लिए मैंने कभी आपको अनुमति दी हो ऐसा मुझे स्मरण नहीं है।" कमल झुझलाकर बोला।

शैलजा तिलमिला उठी। उसे लगा कि कमल उसका जान-बूझ कर निरादर कर रहा है, अपमान कर रहा है। उसका गोरा चेहरा लाल हो उठा।

"आपने कभी अनुमति तो नहीं दी थी पर मैंने जो कुछ किया आपकी भलाई और भविष्य को ही ध्यान में रखकर किया है।"

"मेरे भविष्य का ध्यान रखने वाला भी कोई है। यह जानकर मुझे हर्ष हुआ।" कमल ने उत्तर दिया। "पर मेरे लिए क्या अच्छा और क्या बुरा है यह आपसे अधिक मैं जानता हूँ।"

"बैरा, बिल लाओ।" कहकर शैलजा अपना बैग टटोलने लगी।

कमल चुपचाप बैठा रहा।

बैरा बिल ले आया। बिल तीन रुपये ग्यारह आनेका था।

शैलजा ने पाँच रुपये का नोट प्लेट पर रख कर कहा—"बाकी तुम ले लेना।" बैरा ने प्लेट उठा ली और वह झुककर सलाम करके चला गया

"आज हम लोग बोटिंग के लिए जा रहे हैं। चलेंगे?" शैलजा ने पूछा।

"नहीं।"

"चाँदनी रात में गंगा की लहरों पर खेलना आपको अच्छा नहीं लगता? चलिये न! नये-नये भाव उत्पन्न होंगे; नयी-नयी प्रेरणायें मिलेंगी।"

शैलजा के स्वर में आग्रह था।

"प्रेरणा प्राप्त करने के लिए मेरे चारो ओर दुख, दर्द, निर्धनता, बेकारी, भूख और बीमारी ही यथेष्ट है। चाँद और चाँदनी की प्रेरणा उन कवियों को चाहिए जिनके लिए लिखना धर्म नही, फैशन है।" कमल आवेश मे आकर बोला। "मै कल्पना का नही, जीवन का गायक हूँ। मै आकाश के चाँद को नही देखता, मेरा काम धरती के उन लाखो-करोड़ो चाँदो को देखना है जिनकी चाँदनी चन्द लोगो की तिजोरियो मे बन्द है, जिनपर बेबसी के बादलो का पहरा है, जिन्हे आँसुओ का राहु दिन-रात ग्रसे रहता है। यदि आप अपने को साहित्यिक समझती है, यदि आप एक सच्चे कलाकार का धर्म पूरा करना चाहती है तो कल्पना के सपनो की गोद छोड़कर जीवन के कठोर सत्य को पहचानिये। आइये, मै आपको ऐसे प्रेरक दृश्य दिखाऊँगा जिनकी कल्पना कभी आपने स्वप्न मे भी न की होगी। फिर . फिर आपको अपने कृत्रिम जीवन से ग्लानि हो जायेगी; पिकनिके, पार्टियाँ फिर आपको निरर्थक लगने लगेगी। बोलिये, साहित्यकार का कर्त्तव्य पूरा करने का साहस है आप मे? और और यदि नही है तो लिखना बन्द कर दीजिये। व्यर्थ मे समय नष्ट करने से कोई लाभ नही है?"

बोलते-बोलते कमल हाँफने लगा।

शैलजा को कमल की बाते विचित्र सी लगी। उसकी समझ मे न आया कि काव्य का भूख, दुख, दर्द, गरीबी और बेबसी से क्या सम्बन्ध है! काव्य ललित कला है! यह आवश्यक नही कि कविता मे आँसुओ का ही राग हो! बँगले मे रहकर, कार मे घूमकर, डान्स-डिनर का आनन्द लेकर भी कविता लिखी जा सकती है। कविता के लिए वह जीवन के वे सुख-साधन क्यो छोड़े जो उसे भाग्य ने दिये है? वह समस्त साधनो का भोग करती हुई तीन-चार सालो से लिख रही है और उसके गीतो की प्रशसा प्रोफेसर इन्द्र जैसे कट्टर आलोचको ने की है! नही, कविता का काम रोना-रुलाना ही नही है, हँसना-हँसाना भी है!

शैलजा सोच रही थी और कमल ध्यान से उसके मुख की ओर देख

कर उसकी भावनाओ को पढ़ने का प्रयास कर रहा था।

"चलिये! काफी देर हो गयी है।" कहकर शैलजा खडी हो गयी।

कमल भी खडा हो गया।

दोनो द्वार की ओर बढे। दोनो ही मौन थे।

"आइये आपको घर तक छोड दूँ।" कार का द्वार खोलकर शैलजा बोली।

"धन्यवाद! मै पैदल ही चला जाऊँगा।" कमल के उत्तर मे निश्चय की दृढता थी।

"क्या कार पर बैठने से आपकी कविता को ठेस लगेगी?" शैलजा के स्वर मे व्यग्य का पुट था।

कमल ने कोई उत्तर नही दिया। वह पैदल ही फूलबाग की ओर चल दिया।

शैलजा चिढ गयी। कार पर बैठकर उसने द्वार जोर से बन्द किया और कार स्टार्ट कर दी। वह कमल की ओर दृष्टि डाले बिना ही आगे निकल गयी।

कमल की रूखी और गर्वपूर्ण बातो से शैलजा का मूड खराब हो गया था। उसकी इच्छा हुई कि कामेश्वर की मीठी और चिकनी-चुपडी बाते सुने। फलस्वरूप वह घर न जाकर कालेज गयी, परन्तु जब कामेश्वर दिखाई न दिया तब उसे बहुत निराशा हुई। झुझलाकर उसने कार घर की ओर बढा दी।

घर पहुँच कर उसने फोन उठाकर कामेश्वर का नम्बर मिलाया। दैवात् फोन कामेश्वर ने ही उठाया।

"आज कालेज क्यो नही गये?" शैलजा ने पूछा।

"और तुम क्यो नही गयी?" कामेश्वर का स्वर आया।

"यह मेरे सवाल का जवाब तो नहीं है। खैर, हाँ, बोटिंग का प्रोग्राम पक्का है न?" शैलजा ने हँसकर पूछा।

"एक दम पक्का! ठीक सात बजे मै गाडी लेकर आऊँगा। तुम तैयार

रहना।" कामेश्वर की आवाज आयी।

"मै बेचैनी से तुम्हारा इन्तजार करूँगी।"

"और तभी मै तुम्हे एक गुड न्यूज सुनाऊँगा।" कामेश्वर का मीठा स्वर आया और फिर फोन कट गया।

फोन रखकर, बैग झुलाती हुई जब शैलजा अपने कमरे की ओर बढी तब उसके मन का उल्लास उसके अधरो से निकलने वाले गीत की धीमी लय मे पूर्णतया व्यक्त हो रहा था।

× × ×

कमल को लगा कि उसके पेट मे भयकर आग जल रही है और जो कुछ उसने खाया-पिया है वह उबल कर उसके गले मे अटक रहा है। उसने बहुत बेचैनी का अनुभव किया। उसकी आँतो मे विचित्र सी ऐंठन हो रही थी। शैलजा के साथ बैठकर, उसके पैसो से खाने-पीने के लिए उसे अपने पर क्रोध आ रहा था, आत्मग्लानि की ज्वाला उसे दग्ध कर रही थी।

रामनारायण बाजार पहुँचते-पहुँचते वह थक सा गया। उसके लिए एक पग भी उठाना कठिन हो रहा था। एक एकान्त मे जाकर वह नाली के पास बैठ गया और हलक मे उँगली डाकर उसने उल्टी की। वमन करने के बाद उसने गली के नुक्कड पर लगे नगरपालिका के नल से हाथ-मुह धोया।

हाथ-मुह धोकर जब वह राममोहन के हाते की ओर बढा तब वह काफी हल्कापन अनुभव कर रहा था।

उसे लगा कि वह अब प्रसन्न और स्वस्थ है।

तेरह

बाबू श्यामसुन्दर अपने कमरे मे बेचैनी से टहल रहे थे। बारबार उनके मस्तिष्क मे यही विचार आता था कि उन्होने शादी के लिए पत्र मे विज्ञापन देकर अच्छा नही किया है। इस ढलती अवस्था मे शादी करने से लोग उन पर हँसेगे, पीठ-पीछे तरह-तरह की बाते करेगे। शायद गोमती को भी बुरा लगे। परन्तु . . परन्तु किया क्या जाये ? कामेश्वर के द्वारा अपने जीवन भर की कमाई को नष्ट होने देना भी तो ठीक नही है !

गोमती जब दूध लेकर आयी तब वे विचारमग्न होकर टहल रहे थे। दूध का गिलास मेज पर रखकर वह उनकी ओर प्रश्न भरी दृष्टि से देखने लगी।

बाबू श्यामसुन्दर ने दूध पीकर गिलास फिर मेज पर रख दिया।

"क्या बात है, भैया ? कुछ परेशान नजर आते हो।" गोमती ने धीमे स्वर मे पूछा।

"परेशान ? नही तो।" चौककर, रूखी हँसी हँसते हुये बाबू श्यामसुन्दर बोले।

"कोई बात जरूर है।" दूध का गिलास उठाकर उसने कहा। "बताओ, भैया ! क्या बात है ?"

"कुछ भी नही ! यूँही जरा कामेश्वर के बारे में सोच रहा था।"

"उसकी फिकर न करो, भैया ! मैंने उसे समझा दिया है।" गोमती ने आश्वासन दिया।

"समझा तो कई बार चुकी हो, मगर वह माने तब न।" कहकर बाबू श्यामसुन्दर फिर टहलने लगे।

"मानेगा कैसे नही ? और फिर उसे ठीक करने का एक रास्ता और भी है।"

"क्या ?"

"शादी !" गोमती ने सहज स्वर मे कहा।

शादी के नाम से बाबू श्यामसुन्दर चौक से पडे। वे फटी हुई आँखों से गोमती की ओर देखने लगे।

"हाँ ! जल्द से जल्द उसकी शादी कर दो। बस, फिर बहू अपने आप ठीक कर लेगी उसे।" कहकर गोमती हँस पडी।

तभी नौकर सुबह की डाक दे गया।

अधिकाश पत्र उनके व्यक्तिगत नाम और प्रकाशन सस्था के नाम के थे। एक लिफाफे पर पोस्ट-बाक्स का पता था।

बाबू श्यामसुन्दर को यह समझते देर न लगी कि वह पत्र उनके विज्ञापन के उत्तर मे है। पत्र खोलते समय उनके हाँथ कापने लगे। उन्हे लगा कि वे कोई बहुत भारी अपराध करने जा रहे है।

गोमती की तीव्र दृष्टि उनके मुख की ओर ही लगी थी। उसने उनके हाथो का काँपना भी देखा। उसने अनुमान लगाया कि दाल मे अवश्य कुछ काला है, परन्तु क्या बात है वह यह न समझ सकी। वास्तविकता जानने के लिए उसकी नारी-सुलभ जिज्ञासा जागरूक हो उठी।

पत्र खोलकर बाबू श्यामसुन्दर पढने लगे। पढते समय उनके मुख पर कई रग आये और गये। गोमती उन रगो का अर्थ समझने का प्रयास करती रही।

पत्र समाप्त करके बाबू श्यामसुन्दर फिर टहलने लगे। पत्र उन्होने जेब

मे रख लिया। गोमती ने समझा कि उनकी बेचैनी बढ गयी है और उस पत्र को पढ कर वे और अधिक उद्विग्न हो उठे है।

"चिट्ठी मे कोई ऐसी-वैसी बात तो नही है, भैया?" साहस करके गोमती पूछ ही बैठी।

"नही, नही तो।" कहकर वे शिथिल से आराम कुर्सी पर बैठ गये।

वे सोच रहे थे कि क्यो न गोमती को अभी सब-कुछ बता दिया जाये। उससे पत्र के बारे मे राय ली जा सकती है! पहले से ही उनके मन मे द्वन्द की आँधी चल रही थी पर उस पत्र ने उस आँधी को और भी तेज कर दिया था और उस वेग की तीव्रता मे उन्हे अपने पैर उखडने से मालूम हो रहे थे।

"मुझसे कोई बात न छिपाओ, भैया! मै देख रही हूँ, कल से परेशान हो।" कहकर गोमती उनके समीप ही बैठ गयी।

"मैने . मैने . शादी करने का निश्चय किया है।" बाबू श्यामसुन्दर बडी कठिनाई से कह सके।

गोमती को अपने कानो पर विश्वास न हुआ। वह आश्चर्य से उनकी ओर देखती रही।

"मै ठीक कह रहा हूँ, गोमती! मैने शादी के लिए समाचार-पत्र मे विज्ञापन दिया था और यह पत्र उसी के उत्तर मे आया है। मुझे मुझे तुमसे कुछ राय लेनी है इस बारे मे।"

गोमती उनकी बाते न तो ठीक से सुन ही सकी और न समझ ही सकी। उसकी सभी इन्द्रियाँ जैसे सुन्न हो गयी हो! उसके सामने तो कामेश्वर के भविष्य की बरबादी, अपनी योजनाओ के खँडहरो का ही दृश्य था। वह बेचैन हो उठी थी, परेशान हो उठी थी। उसने सोचा था कि उसका बेटा अगाध सम्पत्ति का स्वामी होकर राजसुख भोगेगा, पर यह क्या हो गया?

गोमती ने अपने को संयत रखने की लाख चेष्टा की, पर चिन्ता की रेखाये मस्तक पर खिच ही गयी। बाबू श्यामसुन्दर ने उन रेखाओ को

देखकर गोमती के मनोभावो को समझा।

"तुम चिन्ता न करो, गोमती। तुम लोगो को किसी शिकायत का मौका नही मिलेगा। जैसे अब रहती हो, वैसे ही बाद मे भी रहना!" बाबू श्यामसुन्दर समझाने के ढग मे धीमे स्वर मे बोले।

इसमे चिन्ता की क्या बात है? मै तो खुश हूँ, बहुत खुश हूं।" गोमती अपने मन के भावो को छिपाने की चेष्टा करती हुई हँसकर बोली। "मेरी इच्छा कई बार हुई कि आपसे ब्याह कर लेने के लिए कहूँ मगर डर के मारे कह न सकी! चलो, ठीक ही है! घर मे भाभी आ जायेगी तो मेरा भार हल्का हो जायेगा।"

"भार तो तब भी तुम्हारे ऊपर ही रहेगा, बल्कि और बढ ही जायेगा।" बाबू श्यामसुन्दर धीमे स्वर मे बोले। एक क्षण रूककर उन्होने फिर कहा—"मै तो चाहता था कि कोई कुलीन विधवा मिल जाती तो अच्छा था, मगर मगर जो पत्र आज आया है वह कुमारी कन्या का है।"

"विधवा तो वह खोजे जिसे क्वाँरी लडकियाँ न मिले। हाँ, क्या उमर है लडकी की?" गोमती ने प्रसन्नता प्रदर्शित करते हुए पूछा।

"अठारह साल!"

गोमती प्रसन्न हो उठी। उसका दुख कम हो गया। उसने सोचा कि अठारह साल की भोली-भाली नादान छोकरी को उँगली के इशारो पर नचाना कठिन नही होगा।

"ठीक है। ज्यादा सयानी लडकी लाना भी ठीक नही।"

"मगर लोग क्या कहेगे?" बाबू श्यामसुन्दर ने शका की।

"लोगो की क्या है? वे तो बकते ही रहते है।" गोमती ने शका का समाधान कर दिया।

"शायद तुम ठीक कहती हो गोमती।" कहकर बाबू श्यामसुन्दर गभीर हो गये।

गोमती उनकी ओर निर्निमेष दृष्टि से देखती रही।

"वैसे शायद मै इस लडकी से शादी न करता," कुछ देर बाद एक दीर्घ

नि:श्वास छोडकर बाबू श्यामसुन्दर बोले। "मगर उसका पत्र पढकर मैंने निश्चय कर लिया है कि ब्याह उसी से करूँगा। बिचारी बहुत गरीब घर की है। माँ-बाँप है नही। भाई दहेज दे नही सकता।"

"तब तो उसका उद्धार करके पुन्य के भागी जरूर बनो, भैया।" गोमती के स्वर मे आग्रह था। बाबू श्यामसुन्दर केवल 'हूँ' कहकर रह गये।

गोमती प्रसन्न-चित्त बाहर चली गयी। गरीब घर की एक नादान छोकरी को बुद्धू बनाकर अपना उल्लू सीधा करना कोई कठिन कार्य नही होगा, ऐसा उसका विश्वास था।

तभी गैलरी मे कामेश्वर का स्वर आया। बाबू श्यामसुन्दर चौक पडे।

"अभी तक कालेज नही गये, कामेश्वर ?" उन्होने ऊँचे स्वर मे पूछा।

"आज कालेज बन्द है, मामाजी।" कहकर कामेश्वर अन्दर आ गया और विनयपूर्वक सिर झुकाकर खडा हो गया।

"रोज कालेज बन्द रहता है! पढाई क्या खाक होती होगी।" बाबू श्यामसुन्दर बडबडाये।

"मामाजी!" धीमे स्वर मे कामेश्वर बोला।

"क्या है ?"

"आज शाम को मुझे बडी गाडी चाहिए।" विनीत स्वर मे कामेश्वर ने कहा।

"क्यो ?"

"कालेज के विद्यार्थी पिकनिक पर जा रहे है।"

"अच्छा! ले जाना। म छोटी गाडी से काम चला लूँगा।"

कामेश्वर प्रसन्न होकर बाहर चला गया।

बाबू श्यामसुन्दर ने जेब से वही पत्र निकाला और फिर उसे ध्यान से पढने लगे। बार-बार उनकी दृष्टि पत्र भेजने वाली के नाम पर केन्द्रित हो जाती थी। तीन अक्षरो के उस नाम के वृत मे ही सीमित उन्हे अपना

ससार लगने लगा।

वह तीन अक्षरो का नाम था—सरला।

× × ×

ललित जब मील से घर पहुँचा तब काफी थका हुआ था। जूते उतार कर वह आँगन मे पडी चारपाई पर लेट गया।

"बाबूजी! हमारे लिए क्या लाये?" पूछता हुआ मुन्ना भी उसके पास आकर बैठ गया।

"अरे, क्यो परेशान करने पहुँच गया उन्हे? इधर आ!" डाँट कर दया ने मुन्ना को बुलाया।

मुन्ना सहमकर ललित की ओर देखने लगा।

"बैठे रहो, बेटे!" कहकर ललित ने प्यार से उसके सिर पर हाथ फेरा।

तभी बाहर से किसी ने द्वार खटखटाया।

सरला कमरे मे थी, दया बरामदे के चौके मे। ललित उठकर द्वार खोलने गया।

बाहर बाबू श्यामसुन्दर को खडा देखकर ललित को आश्चर्य हुआ। बाबू श्यामसुन्दर भी ललित को देखकर सकपका गये।

"यह . यह आपका ही घर है?" बाबू श्यामसुन्दर ने आश्चर्य से पूछा।

"जी, हाँ।"

"स र ला....।"

"वह मेरी बहन है। कल आपने उसे रायबहादुर साहब के यहा देखा होगा। वह शकुन जी के साथ बैठी थी।"

"जरा मेरे साथ बाहर आइये। कुछ बाते करनी है आपसे।"

ललित घबरा गया। उसकी समझ मे नही आया कि बाबू श्यामसुन्दर क्यों आये है, उन्होने सरला का नाम क्यो लिया है और वे उससे क्या बाते करेगे। जूते पहन कर वह शकित हृदय और कम्पित पैरो से उनके

साथ चल दिया।

गली के छोर पर बाबू श्यामसुन्दर की कार खड़ी थी। वे द्वार खोलकर उसमें बैठ गये। उनका संकेत पाकर ललित भी उनके पास बैठ गया।

"तुमने मुझे कल गोष्ठी में देखा होगा। मैं कामेश्वर का मामा हूँ।" बाबू श्यामसुन्दर ने धीमे स्वर में कहा। "मैं एक उलझन में पड़ गया हूँ और उसे सुलझाने के लिए तुम्हारी राय चाहता हूँ।"

"मैं ... मैं ... क्या राय दे सकता हूँ आपको?" ललित ने कहा।

"दे सकते हो। पहले मेरी समस्या तो सुन लो। बात यह है . . ।" और फिर क्षण भर के लिए वे रुक गये मानो यह सोच रहे हों कि बात किस प्रकार शुरू की जाये। "बात यह है कि कामेश्वर की हरकतों से ऊब कर . ,"

"जी. . . .।" बीच में ही ललित के मुख से निकल गया।

"ओह! देखो, समझ में नहीं आता बात कैसे शुरू करूँ।" परेशानी के स्वर में बाबू श्यामसुन्दर बोले। "कामेश्वर मेरी विधवा बहन का पुत्र है। दोनों मेरे साथ ही रहते हैं। मैंने सोचा था कि कामेश्वर को ही कानूनी तरीके से गोद लेकर अपनी सारी सम्पत्ति उसके नाम कर दूँगा। मगर .. मगर . वह बुरी संगत में पड़ गया है। बताओ, जब वह मेरे सामने ही पैसे को पानी की तरह बहाने लगा है तब मेरे पीछे क्या करेगा।"

बाबू श्यामसुन्दर ललित के मुख की ओर देखने लगे।

ललित मौन रहा। उसकी समझ में नहीं आया कि इन सब बातों से उसका क्या सम्बन्ध है और बाबू श्यामसुन्दर उसी से राय लेने क्यों आये हैं।

"मैंने कामेश्वर को समझाने की बहुत चेष्टा की पर उसकी समझ में कुछ आता ही नहीं। वह सुरा और सुन्दरियों के पीछे पागल हो रहा है। इसीलिए मैंने विवश होकर यह निश्चय किया है कि उसे अपने उत्तराधिकार से वंचित ही रक्खूँ।"

"निश्चय तो ठीक है आपका। सच तो यह है कि सारे पापों की जड़ पैसा ही है।"

बाबू श्यामसुन्दर ने उसकी उक्ति का प्रतिवाद नही किया। वे बोले-- "अब प्रश्न यह है कि फिर अपना उत्तराधिकारी किसे बनाऊँ?"

"यदि आप चाहे तो अपनी सम्पत्ति दान कर सकते है।" ललित ने साहस करके धीमे स्वर मे सुझाव दिया।

बाबू श्यामसुन्दर ने ललित की ओर देखा और फिर एक क्षण बाद गभीर स्वर मे बोले--"तुम शायद पैसे का मूल्य नही जानते इसीलिए दान करने का सुझाव दे रहे हो! मै जानता हूँ क्योकि मैने दिन-रात एक करके पैसा कमाया है। मै वे दिन भूला नही हूँ जब मै पाई-पाई के लिए मोहताज था। नही, अपनी गाढी कमाई को मै दान नही कर सकता।"

"मै क्षमा चाहता हूँ . . .।" कहकर ललित हाथ मलने लगा।

"मेरी बात का बुरा न मानना। तुम अभी बच्चे हो। मैने दुनिया देखी है, मै ऊँच-नीच समझता हूँ। मै चाहता हूँ कि मेरे परिश्रम के फल का भोग मेरी सन्तान करे और इसीलिए मैने दूसरी शादी करने का निश्चय किया है। बोलो, मेरा निश्चय गलत तो नही है?"

ललित की समझ मे न आया कि वह क्या उत्तर दे।

"शायद तुम सोच रहे हो कि मै तुमसे यह सब क्यो पूछ रहा हूँ!"

रँगे हाथो पकड़े जाने पर चोर की जो दशा होती है वही दशा ललित की हो गयी। घबराकर बोला--"नही, नही! ऐसी बात नही है। आपका निश्चय ठीक ही है।"

"मैने दैनिक 'विश्वमित्र' मे विज्ञा... दिया था और उसके उत्तर मे मुझे एक पत्र मिला है। वह पत्र वह पत्र तुम्हारी बहन सरला का है। कहकर बाबू श्यामसुन्दर ने सन्तोष की साँस ली मानो एक भारी बोझ उनकी छाती से उतर गया हो।

ललित को चक्कर आ गया। उसे लगा, जैसे हजारो बिच्छुओ ने उसे एक साथ डस लिया है और वह उनके डको के तीव्र विष के प्रभाव से मूर्च्छित हुआ जा रहा है।

"जी. . . .।"

"मै ठीक कह रहा हूँ। यह देखो।" कहकर बाबू श्यामसुन्दर ने पत्र अपनी जेब से निकालकर ललित के हाथ पर रख दिया।

ललित बडी कठिनाई से पत्र पढ सका।

"और पत्र मे जो कुछ लिखा है उसे ध्यान म रखते हुये मैने सरला से शादी करने का निश्चय कर लिया है। मै कल ही तुम्हारा बच्ची के नाम बेंक मे दस हजार रुपये जमा कर दूँगा।

"मुझे नहीं चाहिए आपके रुपये!" ललित चीख पडा। "मै बहन को बेचने वाला नही हूँ।"

ललित ने दाँत पीसते हुये पत्र फाडकर कार के बाहर फेक दिया।

"कौन कहता है तुम बहन को बेच रहे हो!"

"दुनिया कहेगी। आपको ऐसे शब्द मुह से निकालने मे लज्जा नही आयी? आश्चर्य है! यदि आपको शादी ही करनी है तो किसी विधवा से कीजिये।" ललित आवेश के कारण काँप ने लगा।

"सोचा तो मैने भी यही था पर क्या करूँ? पत्र तुमने स्वय पढ़ लिया है। मैने सारी स्थिति तुम्हारे सामने रख दी। तुम समझदार हो, आशा है मुझे गलत न समझोगे।" सयत स्वर मे कहकर बाबू श्यामसुन्दर ने ललित के कन्धे पर हाथ रक्खा।

ललित की आँखो मे आँसू आ गये।

"रोना कायरता है हमे जीवन के कटु सत्यों का सामना हँस कर करना चाहिए। क्या . क्या तुम चाहते हो कि तुम्हारी बहन आत्म-हत्या कर ले?"

ललित फूट-फूट कर रोने लगा।

"मेरी स्वय समझ मे नही आता कि क्या करूँ! मै अपने को उस देवी के सर्वथा अयोग्य पाता हूँ जो परिवार के सुख और नन्ही भतीजी के भविष्य के लिए इतना महान् त्याग कर रही है।" कहते-कहते बाबू श्यामसुन्दर सहसा रुक गये। उनका स्वर कुछ काँप-सा गया। खास कर फिर बोले—"अच्छा, एक बात बताओ! यदि मै तुम्हे सरला की शादी किसी योग्य

वर से करने के लिए रुपये दूँ तो क्या तुम स्वीकार करोगे ?"

ललित आँसू भरी दृष्टि मे उनकी ओर देखने लगा।

"बोलो, उत्तर दो।"

"मेरा अपमान न कीजिये। मैं निर्धन अवश्य हूँ, पर भिखारी नही।" ललित ने दुखी स्वर मे कहा।

"तब क्या बहन को जीवन भर क्वाँरी रक्खोगे ? उस भावना को समझने की चेष्टा करो जिससे प्रेरित होकर सरला ने पत्र लिखा। जाओ और शान्त चित्त से इस पर सोचो। मैं मैं . . हर तरह से तैयार हूँ।"

ललित ने शिथिल हाथ से कार का द्वार खोला और नीचे उतर कर खडा हो गया।

"भाई, अगर मेरी किसी बात से तुम्हारे चित्त को दुख पहुँचा हो तो क्षमा करना।" कहकर बाबू श्यामसुन्दर ने कार का द्वार बन्द कर लिया।

ललित सिर झुकाये, भारी पैरो घर की ओर चल दिया। उसे लग रहा था कि उसके शरीर मे जीवन-शक्ति नही रह गयी है। अपनी बेबसी, अपनी सीमाओ पर उसे क्रोध आ रहा था और उस व्यवस्था के प्रति उसके हृदय मे विद्रोह की चिनगारी सुलग रही थी जो एक को बडा तथा दूसरे को छोटा बनाती है, जो मनुष्य-मनुष्य के बीच मे गहरी खाई और ऊँची दीवार का निर्माण करती है।

चौदह

सरला थी तो कमरे मे परन्तु उसके कान द्वार की ओर ही लगे थे। जैसे ही बाबू श्यामसुन्दर ने द्वार खटखटाया उसका हृदय जोर से धड़कने लगा। उसके मन ने कहा कि हो न हो ये जरूर वही है जिन्होंने शादी का विज्ञापन किया था। जब ललित उनके साथ बाहर चला गया तब तो उसकी धारणा और भी पक्की हो गयी थी। वह बेचैनी से कमरे मे टहलने लगी। उसके मानस मे भयकर प्रभजन था।

अत्यन्त आकुलता और व्यग्रता से वह ललित के लौटने की प्रतीक्षा करने लगी। दया ने उसकी आकुलता को देखा पर वह उसका कारण न समझ सकी। सरला कमरे से निकल आयी। उसका दम घुटने सा लगा था। आँगन मे आकर वह कुछ स्वस्थ हुई। दया के हाथ चौके के काम मे व्यस्त रहे पर उसकी आँखे सरला की ओर ही लगी रही।

जब ललित ने धीरे से द्वार खटखटाया तब सरला को लगा कि जैसे उसकी छाती पर किसी ने घूँसा मारा हो। वह शिथिल होकर चारपाई पर बैठ गयी।

"खोलो!" बाहर से ललित का थका सा स्वर आया।

दया ने सरला की ओर देखा।

सरला उठकर द्वार की ओर गयी और कम्पित हाथ से उसने द्वार खोल दिया।

ललित अन्दर आया। सरला को देखकर उसे रुलाई आ गयी। किसी प्रकार अपने को संयत करके वह चारपाई पर बैठ गया।

सरला जब कमरे की ओर चली तब उसे लगा जैसे उसके पैर जवाब दे रहे हैं।

"यहाँ आओ, सरला।" तभी ललित ने टूटे स्वर में पुकारा।

सरला मन्द गति से जाकर फर्श पर बैठ गयी।

"सरला, यह यह तुमने क्या किया ?" और ललित अपनी बाहों में मुंह छिपा कर बच्चों की तरह फूट-फूट कर रोने लगा।

दया घबरा कर ललित के पास पहुँची। उसने समझा कि सरला कोई ऊँच-नीच काम कर बैठी है। फर्श पर बैठकर वह सरला की पीठ पर हाथ फेरने लगी।

सरला सिर झुकाये बैठी थी मानो उसे काठ मार गया हो।

ललित की आन्तरिक पीड़ा सिसकियों के रूप में बाहर निकलती रही।

"अगर सरला कुछ ऐसा-वैसा काम कर बैठी है तो उसमें दोष उसका नहीं, तुम्हारा है। सालों से समझा रही हूँ कि उसके हाथ पीले करने की फिकर करो।" दया के धीमे स्वर में क्षोभ की झलक थी। "अब रोते हो। जवान बहन ।"

"क्या बक रही हो ?" ललित बीच में ही कड़े स्वर में बोला। "तुम लोगों का ध्यान हमेशा बुराई की ओर ही जाता है।"

ललित की डाँट से दया सहम गयी। उसने समझ लिया कि उसका विचार सही नहीं है। सरला ने कोई ऐसा-वैसा काम नहीं किया है!

"सरला, तुमने भैया की बेबसी को चुनौती देकर अच्छा नहीं किया।" ललित फिर रुद्ध कंठ से बोला।

सरला मौन रही।

दया मौन न रह सकी। पूछा—"आखिर क्या किया है सरला ने? कुछ मुझे भी तो बताओ।"

और ललित ने थके, टूटे और दुखी स्वर मे दया को सब कुछ बता दिया।

"सरला, यह क्या सूझा है तुम्हे? क्यो अपनी जान देने पर उतारू हो?" दया ने दुखी स्वर मे पूछा।

"ऐसा न कहो, भाभी!" सरला ने अवरुद्ध कठ से कहा।

"एक बूढे के साथ ब्याह करके तुम्हे सुख मिल सकेगा? क्या जान-बूझकर कुँये मे कूद रही हो?" दया ने फिर समझाया।

"मैने जो कुछ किया है सोच समझ कर किया है, भाभी! जिसे तुम कुँये मे कूदना कहती हो वही मेरे लिए जीवन है।" सरला ने धीमे किन्तु दृढ स्वर मे कहा।

"मै जानता हूँ कि तुम जो कुछ कर रही हो, हम लोगो के लिए कर रही हो। मगर मगर मै तुम्हे ऐसा नही करने दूँगा।" ललित बोला।

'मेरा निश्चय अटल है, भैया! जो रास्ता मैने चुना है उसके अतिरिक्त मेरे लिए और कोई मार्ग है ही नही।" कहकर सरला धीमी गति से कमरे मे चली गयी।

"वह हमे चिन्ता से मुक्त करने के लिए अपनी बलि दे रही है, दया। और और मुन्नी के भविष्य के लिए भी!" बोलते-बोलते ललित की आँखो मे आँसू आ गये। "यह यह सब मेरी बेबसी, मेरी गरीबी का ही फल है। अगर मै दहेज देकर उसका ब्याह करने लायक होता तो उसे ऐसा क्यो करना पडता।" और ललित सिसकने लगा।

"मै तो पहले ही कहती थी कि न हो तो शकुन से ही रुपये ले लो मगर तुम मेरी बात सुनो तब न! अब रोने-धोने से क्या होगा!" दया बोली।

शकुन का नाम सुनकर ललित मे नयी चेतना आ गयी। विद्युत-वेग से उठकर वह द्वार की ओर बढा।

"अब कहाँ जा रहे हो?" दया ने पूछा।

"शकुन को बुलाने। शायद उसके समझाने से सरला मान जाये।" धीमे स्वर मे कहकर ललित बाहर चला गया।

गली मे प्रकाश कम था, फिर भी वह तीव्र गति से आगे बढ रहा था। कई बार वह सडक पर बैठी हुई गायो से टकराते-टकराते बचा।

"गाय बाधने की जगह तो है नही मगर पालने का शौक है। सडक पर छोड देते है मानो सडक इनके बाप की हो!" वह क्रुद्ध स्वर मे बुद-बुदाया।

मुख्य सड़क पर पहुँचते ही एक रिक्शा मिल गया। वह रिक्शे पर बैठ गया। रास्ते भर वह अपने विचारो मे खोया रहा। जैसे ही रिक्शा शकुन के बंगले के फाटक पर पहुँचा वैसे ही अन्दर से एक बडी कार निकली। ललित ने देखा, उसमे कामेश्वर के साथ शैलजा बैठी है।

रिक्शे वाले को पैसे देकर वह अन्दर गया। बरामदे मे पहुँच कर वह ठिठक गया। शकुन के कमरे की ओर जाने का उसमे साहस न था।

सकेत मे चौकीदार को बुलाकर ललित बोला—"शकुन बीबी है?"

चौकीदार ने सिर हिलाया, जिसका अर्थ था—हाँ!

"जाकर कह दो कि मै मिलना चाहता हूँ।"

चौकीदार चला गया।

ललित बरामदे मे टहलता रहा।

दो मिनट बाद ही शकुन तीव्र गति से बरामदे मे आयी। ललित की बेचैनी उससे छिपी न रह सकी। उसका हृदय धडकने लगा।

"कुशल तो है?" उसने धीमे स्वर मे पूछा।

"सरला ..।" ललित आगे न बोल सका।

"क्या हुआ सरला को?" शकुन ने घबरा कर पूछा।

"उसने अपनी बलि देने का निश्चय किया है। अब तुम्ही उसे समझा सकती हो।"

"बलि देने का निश्चय?" न समझने के ढग से शकुन बोली।

"अगर तुम्हे कष्ट न हो तो मेरे साथ चली चलो। रास्ते में सब कुछ बता दूँगा।"

"शोफर, गाडी लाओ!" शकुन ने ऊँचे स्वर मे कहा और फिर वह ललित की ओर देखने लगी।

शोफर ने गाडी पोर्टिको मे लगा दी।

"तुम यही रहो। मै खुद ले जाऊँगी।" शकुन ने शोफर से कहा।

शोफर उतर कर एक ओर खडा हो गया।

शकुन और ललित गाडी मे बैठ गये। गाडी तीव्र गति से ललित के घर की ओर उड चली।

मार्ग मे ललित ने शकुन को वस्तु स्थिति से अवगत करा दिया।

"यह सब तुम्हारे झूठे अभिमान का फल है।" सुनकर शकुन बोली। "अगर तुम मुझे पहले ही सच्ची बात बता देते तो ऐसी स्थिति न आती।"

"जो हो गया सो हो गया। अब तुम उसे समझा-बुझाकर मना लो। फिर. . . फिर मै कर्ज लेकर, भीख माँगकर, जैसे भी होगा वैसे उसका ब्याह किसी अच्छी जगह कर दूँगा।" कहकर ललित अपनी आँखो के आँसू पोछने लगा।

गाडी सडक पर छोड कर दोनो तेजी से गली मे घुसे।

"जरा सँभल कर आना! रास्ते मे गाये बैठी है।" ललित ने कहा।

"मै तो ऊँची-नीची गली मे गिर जाऊँगी।" शकुन के स्वर मे शरारत थी।

बिना कुछ कहे ललित ने उसका हाथ पकड लिया।

"अब ठीक है। कोई सहारा हो तो गिरने का भय नही रहता।" कहकर शकुन हँस पड़ी।

ललित ने अपनी हँसी रोकने की लाख चेष्टा की पर रोक न सका। वह भी हँस पडा।

शकुन के साथ जब ललित घर पहुँचा तब दया ने आकर द्वार खोला। सरला कमरे मे ही थी। मुन्ना-मुन्नी सो गये थे। कमरे मे लालटेन जल रही थी और बरामदे मे दीया। आँगन मे चाँदनी छिटकी हुई थी। शकुन आँगन मे ही चारपाई पर बैठ गयी।

"सरला, देखो कौन आया है!" दया ने ऊँचे स्वर मे कहा।

सरला बाहर आ गयी। दीपक के प्रकाश मे शकुन को उसका चेहरा पाण्डु रोग के रोगी सा पीला लगा। वह आँगन मे आयी और शकुन को देखकर मुस्करा पडी।

"आओ, बैठो।" शकुन ने उसका हाथ पकडकर अपने पास बिठा लिया।

शकुन ने ललित को बाहर जाने का सकेत किया क्योकि वह जानती थी कि उसके सामने खुलकर बाते नही हो सकेगी।. ललित बाहर चला गया।

इसके पूर्व शकुन कुछ बोल सके, सरला ने कहा—"भैया ने आपको बेकार ही कष्ट दिया।"

"सरला, तुम क्षणिक भावुकता मे पडकर पागलपन कर रही हो। आवेश मे आकर जीवन भर के सुख से खिलवाड करना ठीक नही।" शकुन ने समझाते हुये कहा।

"मैने भावुकता और आवेश मे आकर ऐसा नही किया है।" सरला ने कहा। "मै विश्वास दिलाती हूँ कि मैने सोच-समझकर कदम उठाया है, और अब जो कदम उठ चुका है वह पीछे लौट नही सकता।"

"जान-बूझकर गले मे फासी का फन्दा लगा रही है यह।" तभी बीच मे दया बोल पडी।

दया की बात से सरला चिढ गयी। उसका चेहरा तमतमा गया। वह आवेश मे आकर बोली—"मैने फासी लगाकर या जहर खाकर मरने

का रास्ता नही चुना है इसीलिए तुम ऐसा कहती हो।"

सरला की बात सुनकर दया सुन्न रह गयी। चुपचाप उठकर वह चौके मे चली गयी। उसे याद आ गयी अपने मैके की बात। उसकी एक सहेली ने अपने निर्धन बाप को चिन्ता से मुक्त करने के लिए कुँये मे कूदकर जान दे दी थी। उसकी याद से वह काँप गयी। उसने सोचा—सरला ठीक ही तो कहती है! वह भी फासी लगाकर जहर खाकर, कुँये मे कूदकर जान दे सकती थी। मगर नही, उसने कायरता का रास्ता नही चुना! और दया ने अनुभव किया कि सरला ने जो मार्ग चुना है वह ठीक ही है।

"तो .. तो क्या तुम्हारा निश्चय पक्का है?" शकुन ने धीमे और उदास स्वर मे पूछा।

"हाँ! और यही वह मार्ग है जिससे सबको सुख मिलेगा। भैया-भाभी की चिन्ता और उदासी दूर होगी, छोटी मुन्नी का भविष्य बनेगा और   और मै भी सुखी बनूँगी।" सरला ने कहा।

"लेकिन तुम दोनो की अवस्था   ।"

'अवस्था की खाई मुझमे कोई अन्तर उत्पन्न नही करेगी, ऐसा मै विश्वास दिलाती हूँ। मै सच्चे मन से उनकी सेवा करूँगी।"

"सेवा और त्याग मे अन्तर होता है, सरला।" शकुन के मुँह से निकल गया।

'क्या यह भी बताने की आवश्यकता है कि मै जिन सस्कारो मे पली हूँ उनमे पत्नी का परमेश्वर पति ही है! मै उन्हे प्यार नही कर सकूँगी ऐसा सोचकर आप मेरे ही साथ नही, भैया के साथ भी अन्याय कर रही है।" सरला का स्वर सहसा अवरुद्ध हो गया।

"मुझे क्षमा करो, बहन।" कहकर शकुन ने सरला को हृदय से लगा लिया और फिर वह सिसक-सिसक कर रोने लगी।

दया ने भी अपनी धोती के मैले अचल से अपने आँसू पोछ लिए।

उसी समय ललित अन्दर आया।

शकुन सरला को छोडकर अपने आँसू पोछने लगी।

ललित ने प्रश्न भरी दृष्टि से शकुन की ओर देखा।

"सरला का निश्चय अटल है।" निश्वास छोडकर शकुन ने धीमे स्वर मे कहा। "भगवान की यही इच्छा है।"

शकुन उठकर द्वार की ओर चल दी। ललित भी साथ-साथ चल दिया।

"तुम रहने दो। मै चली जाऊँगी।" शकुन बोली।

"चलो, कार तक तो पहुँचा ही दूँ।" ललित ने कहा।

वे लोग थोडी दूर चले होगे कि उधर से आता हुआ कमल मिल गया। ललित को देखकर बोला—"मै तो तुम्हारे यहाँ ही जा रहा था।"

"अभी चलता हूँ। जरा शकुन जी को कार तक छोड दूँ।"

"ओह, शकुन जी है। नमस्कार! क्षमा कीजियेगा मै आपको पहचान न पाया था।"

कमल भी मुडकर उनके साथ चल दिया।

"हाँ भाई, हमे क्यो पहचानोगे!" शकुन ने हँसकर कहा!

"भूल के लिए क्षमा माँग चुका हूँ।" कमल ने सहज स्वर मे कहा फिर एक क्षण रुककर बोला—"आज शैलजा जी मेरे यहाँ आयी थी।"

शकुन और ललित उसकी बात सुनकर चौक पडे।

"कब?" शकुन ने पूछा।

'सबेरे। कह रही थी कि मै अपना सग्रह बाबू श्यामसुन्दर को प्रकाशित करने के लिए दे दूँ।"

"ठीक तो कह रही थी। तुम्हारा नया सग्रह बाजार मे बहुत जल्द आना चाहिए।" ललित ने कहा।

"आपने क्या उत्तर दिया शैल को?" शकुन ने पूछा।

"मैने मना कर दिया है।"

"क्यो?" ललित ने पूछा।

"वैसे ही। मै नही चाहता कि मेरा सग्रह किसी के कहने से कोई

प्रकाशक ले।" कमल ने विचित्र स्वर मे कहा।

"तुम समझ रहे हो बाबू श्यामसुन्दर शैलजा की शिफारिश से तुम्हारा सग्रह ले रहे है ?" ललित ने हसकर पूछा।

"हाँ !" कमल का सक्षिप्त उत्तर था।

बात करते-करते वे लोग सडक पर पहुँच गये थे।

"अगर आपको यहाँ और काम न हो तो चलिए मै आपको घर तक छोड दूँ ?" शकुन ने कमल से कहा। "और किराये के रूप मे आप मुझे अपना सग्रह दे दे। मै बाबू श्यामसुन्दर तक पहुँचा दूँगी।"

"सग्रह तो तुम्हे देना ही चाहिए। कहो तो मै ही आकर ले जाऊँ।" ललित ने भी जोर दिया।

"तो आप लोगो की भी राय है कि सग्रह दे दूँ ?" कमल बेबसी के स्वर मे बोला।

"अवश्य !" दोनो ने एक साथ ही उत्तर दिया।

'ठीक है।" कहकर कमल हँस पडा।

"अभी रुकेगे क्या ?" कहकर शकुन कार पर बैठ गयी।

"लगता है मेरा भाग्य खुल रहा है। सुबह-शाम मोटर पर बैठने को मिलता है।" कहकर कमल हँस पडा। फिर ललित की ओर मुड कर बोला— मै इसी विषय मे राय लेने आया था तुम्हारे पास! अब चलता हूँ।"

कमल कार का पिछला द्वार खोलकर बैठने लगा।

"वहाँ नही, आगे आइये कविराज जी !" हँसकर शकुन बोली।

कमल शकुन के पास जाकर बैठ गया।

"सग्रह की पाँडुलिपि ।"

"कल सुबह तुम्हे दे जाऊँगा।" ललित की बात बीच मे ही काटकर कमल बोला। "फिर तुम चाहे शकुन जी को देना, चाहे शैलजा जी को और चाहे बाबू श्यामसुन्दर को।"

शकुन ने कार स्टार्ट की। ललित साश्रुनयनो से शकुन की ओर

देखने लगा।

"भगवान जो करता है, अच्छा करता है।" शकुन ने धीमे स्वर मे कहा और कार आगे बढा दी।

ललित वही खडा रहा। वह आँसू भरी दृष्टि मे कार के पीछे की लाल बत्ती तब तक देखता रहा जब तक वह दिखाई देती रही। जब कार दूसरी ओर मुड गयी और उसकी बत्ती अदृश्य हो गयी तब ललित घर की ओर चला।

गली मे वह कितनी बार गायो मे टकराकर गिरा उसे ज्ञात नही।

पन्द्रह

प्रतीक्षा की एक घड़ी भी युग सी बड़ी हो जाती है। सन्ध्या की प्रतीक्षा में कामेश्वर दिन भर बेचैन रहा। एक-एक मिनट कठिनाई से कट रहा था। बार-बार वह घड़ी की ओर देखता। उसे लग रहा था कि उसकी घड़ी ही मन्द नहीं है वरन सूर्य की गति भी नित्य की अपेक्षा बहुत धीमी है। वह चहाता था कि जल्द ही सूरज पश्चिम की गोद में छिप जाये और धरती पर प्यारा अँधेरा उतरे और उस अँधेरे को चीरकर पूनम का रुपहला चाँद निकले। उसकी आतमा दिन के प्रकाश से ऊब कर रात के अँधेरे के लिए छटपटा रही थी—वह उस अँधेरे के लिए व्याकुल था जो चाँदनी का उजला परिधान पहन कर उसकी इच्छाओं की पूर्ति करने के लिए उतरने वाला था।

जैसे ही घड़ी की छोटी सुई छ और बड़ी सुई बारह पर पहुँची, वह बड़ी कार लेकर माल रोड की ओर चल दिया। वस्त्र वह चार बजे ही बदल चुका था। 'क्वालिटी' के सामने उसने कार रोक दी और फिर वह अधरों के बीच में बिना जली सिगरेट दबा कर अन्दर घुसा। वह सीधा मैनेजर के पास पहुँचा।

"हलो, मिस्टर कामेश्वर! ह्वाट कैन आई डू फार यू?" मैनेजर

ने व्यवहार कुशलता से पूछा।

"कुछ खाने-पीने का सामान गाड़ी पर पहुँचवा दीजिये।" कामेश्वर ने सिगरेट जलाकर कहा। "आज पिकनिक पर जा रहा हूँ।"

मैनेजर ने बैरा को आवश्यक आदेश दे दिया।

बैरा चला गया।

मैनेजर ने बिल बनाकर कामेश्वर के सामने रख दिया।

उसने बिल पर हस्ताक्षर कर दिये।

मैनेजर ने बिल मेज की दराज मे डाल दिया।

"मिस शैलजा तो आज सबेरे ही आ गयी थी।" मैनेजर ने सहज स्वर मे कहा।

"अच्छा!"

"हाँ! और साथ मे न जाने कहाँ से एक बन्दर पकड़ लायी थी। मै तो बड़ी मुश्किल से अपनी हँसी रोक सका।"

"बन्दर?" कामेश्वर ने उत्सुकता से प्रश्न किया।

"बन्दर ही समझिये।" मैनेजर ने हँसकर कहा। "अजीब हुलिया थी। बड़े-बड़े बाल, गन्दे कपड़े!"

कामेश्वर समझ गया कि शैलजा के साथ कमल ही था। वह बहुत कठिनाई से अपने क्रोध को दबा सका।

'बड़े आदमियो की हाबीज भी अजीब होती है।" मैनेजर ने कहना जारी रक्खा। "मै तो समझता हूँ कि मिस शैलजा किसी राह चलते भिखारी को पकड़ लायी थी।" और अपनी बात पूरी करके वह हँस पड़ा।

कामेश्वर ने उसका साथ देने की चेष्टा की पर वह हँस न सका।

तभी बैरा ने कामेश्वर को सूचना दी कि सामान कार पर रख दिया गया है।

कामेश्वर कार पर आकर बैठ गया। उसका दबा हुआ क्रोध उबल पड़ा।

"आज भर की और बात है।" वह बुदबुदाया। "कल दूध की मक्खी

की तरह अपने जीवन से निकाल कर फेंक दूंगा।"

कार स्टार्ट करके वह "कपूर एन्ड सन्स" के यहाँ पहुँचा। वहाँ से उसने ड्राईजिन का एक अद्धा लिया।

"पैराडाइज होटल" के एक एकान्त केबिन मे बैठकर जब उसने आधी मदिरा पी ली तब कही जाकर उसका क्रोध शान्त हुआ।

बची हुई मदिरा को प्यार भरी दृष्टि से देखकर उसने बोतल को चूमा। उसकी कुटिल योजना को सफल बनाने मे वह बोतल बहुत ही महत्त्वपूर्ण भाग लेने वाली थी।

बोतल कार मे छिपा कर वह शैलजा के बँगले पहुँचा। वह तैयार बैठी थी। सफेद रेशमी गरारा और कुर्त्ते पर सफेद ही ओढनी, आँखो मे काजल की पतली रेखा; चेहरे पर हल्का पाउडर; गालो और अधरो पर हल्की लाली! कामेश्वर ने देखा तो देखता ही रहा।

"तुम तो ऐसे देख रहे हो जैसे कभी देखा ही न हो।" वह खिलखिलाकर हँसती हुई बोली।

"रोज शैलजा को देखता था, आज इन्द्रलोक की अप्सरा को देख रहा हूँ।" कामेश्वर ने मुस्करा कर कहा।

"बहुत देर कर दी तुमने! मै तो समझ रही थी, नही आओगे।" कार पर बैठती हुई शैलजा बोली।

"अगर मालूम होता कि कोई मेनका प्रतीक्षा कर रही है तो चार बजे ही आ जाता।" कहकर कामेश्वर ने कार स्टार्ट कर दी।

फाटक के बाहर उन्हे रिक्शे से उतरता हुआ ललित दिखाई दिया। शैलजा कामेश्वर के और निकट आ गयी।

कार तेजी से गगा घाट की ओर बढने लगी।

मार्ग मे दोनो अधिकतर मौन रहे। शैलजा अपने विचारो मे खोई रही और कामेश्वर अपने विचारो मे।

गाडी घाट के किनारे छोडकर वे लोग सीढियाँ उतर कर नीचे पहुँचे उन्हे देखकर कई नाविक एक साथ आगे बढकर चिल्लाये—"बाबू जी,

इधर आइये !"

नाविको के उस झुड मे कामेश्वर की आँखे किसी को खोज रही थी। तब तक दूर पर उसे अपना खास नाविक दिखाई दिया। कामेश्वर को देखकर वह दौडता हुआ आया। पास आकर वह अन्य नाविको से बोला—"अलग हटो! जानते नही, बाबू जी हमारी सवारी है।"

"नाव किधर है?" कामेश्वर ने उससे पूछा।

"पास ही है, बाबू जी! इधर आइये।" कहकर वह चल दिया।

कामेश्वर शैलजा का हाथ पकड़कर उसके पीछे चल दिया।

जिस नाव पर नाविक ने बैठाया वह काफी अच्छी थी। नाव पर मोटा गद्दा बिछा था। चादर भी साफ थी। मोटे-मोटे कई तकिये भी रक्खे थे।

कामेश्वर उस नाविक का पुराना ग्राहक था और वह यह भी भली प्रकार जानता था कि बाबू जी जब कभी किसी लड़की को लेकर घूमने आते है तो उस घूमने का वास्तविक अर्थ क्या होता है।

"अबकी बहुत दिनो मे आये बाबू जी!" नाविक ने हाथ जोड़कर कहा।

"हाँ भाई! काम के मारे फुर्सत ही नही मिल पाती।" कामेश्वर ने कहा और फिर एक क्षण बाद बोला। "ऊपर कार खड़ी है। उसमे खाने-पीने का सामान रक्खा है। जाकर ले आओ।"

'अभी आया, सरकार।" कहकर नाविक चल पड़ा।

जब वह कुछ दूर चला गया तब कामेश्वर नाव से उतर कर ऊँचे स्वर मे बोला—"अरे, सुनना जरा! एक बात तो भूल ही गया।"

नाविक रुक गया।

"अभी आया।" कह कर नाविक कामेश्वर की ओर तीव्र गति से बढ़ा।

शैलजा पैर फैला कर नाव मे लेट गयी। चाँदनी रात मे, गगा की गोद मे शान्त होकर लेटना उसे बहुत अच्छा लगा। वह निर्निमेष दृष्टि से आकाश मे हँसते हुये चाँद को देखने लगी।

नाविक के पास पहुँचकर कामेश्वर धीमे स्वर में बोला—"पिछली सीट के नीचे जिनका बोतल रक्खा है। पान वाले से लैमन की बोतल लेकर खोल लेना और थोड़ी-थोड़ी जिन मिला देना। समझे ?"

"सब समझ गया, सरकार।" खीसें निपोर कर नाविक बोला।

कामेश्वर लौटकर नाव की ओर बढ़ा। आधी दूर पहुँचकर उसने ऊँचे स्वर में नाविक से फिर कहा—"लैमन वहीं से खोल लाना। नहीं तो यहाँ झंझट होगी।"

"बहुत अच्छा, सरकार।" नाविक का उत्तर आया।

जब वह नाव पर पहुँचा तब भी शैलजा लेटी हुई चाँद को देख रही थी। कामेश्वर को देखकर वह उठी नहीं, हाँ, पैर कुछ समेट लिये। कामेश्वर उसी के पास बैठ गया।

"कहीं चाँद को नजर न लग जाये!" कामेश्वर ने मुस्करा कर कहा।

"चाँद को नजर न लगे इसीलिए तो भगवान ने उसमें काला दाग लगा दिया है।" चाँद की ओर से दृष्टि हटाकर शैलजा ने कहा।

"और इसीलिए शायद तुमने भी अपने बायें गाल के नीचे काला तिल बनाया है।" शैलजा के पास खिसक कर कामेश्वर बोला।

"चाँद इतना सुन्दर है यह मुझे आज ही मालूम हुआ।" उठकर तकिये के सहारे बैठती हुई शैलजा बोली।

"आकाश के चाँद से सुन्दर धरती का चाँद है।"

गंगा के निर्मल-शान्त जल में पड़नेवाले चाँद के प्रतिबिम्ब की ओर देखती हुई शैलजा ने कामेश्वर की बात का कोई उत्तर नहीं दिया। झुककर अपना हाथ जल में डालकर उसने शान्त जल को आन्दोलित कर दिया। शशि का प्रतिबिम्ब भी डोलने लगा।

"आकाश का चाँद स्थिर है और धरती का चाँद चंचल।" शैलजा ने कामेश्वर की ओर शरारत भरी दृष्टि से देखकर कहा।

"जिसे तुम चंचल कह रही हो वह चाँद नहीं, उसकी परछाईं है। धरती का चाँद तो तुम हो।" कामेश्वर ने साहस करके शैलजा का हाथ

अपने हाथ मे लेकर कहा।

"तुम भी कवि बन रहे हो।" शैलजा केवल इतना कह सकी।

तभी नाव की ओर नाविक आता दिखाई दिया। उसके साथ एक व्यक्ति और था। कामेश्वर ने शैलजा का हाथ छोड दिया।

नाविक के हाथो मे लैमन की खुली हुई दो बोतले थी और उसके साथ वाले व्यक्ति के हाथ मे खाने का सामान। खाने का सामान नाव पर रखवाकर कामेश्वर ने बोतले अपने हाथो मे ले ली। नाविक पतवार सँभाल कर नाव मे बैठ गया। उसका साथी चला गया।

"उस पार चलूँ, सरकार?" नाविक ने पूछा।

"हाँ!" कहकर कामेश्वर भी एक तकिये के सहारे टिक गया।

नाव जल को चीरती हुई आगे बढी। जब नाव बीच धार मे पहुँची तब कामेश्वर ने नाविक को नाव रोकने का सकेत किया। नाविक ने पतवार रख दिये। नाव धारा के साथ मन्दगति से रेलवे पुल की ओर बह चली।

"कोई गीत सुनाओ।" कामेश्वर ने शैलजा से अनुरोध किया।

"गाने का मूड नही है। इच्छा होती है, नाव मे चुपचाप लेटी रहूँ और हवा का मादक सगीत सुनती रहूँ।" शैलजा ने तकिये के सहारे अधलेटी मुद्रा मे होकर कहा। वातावरण की मादकता ने उसकी भावुकता को उभार दिया था।

"और मेरी इच्छा होती है कि नाव इसी तरह जिन्दगी भर धीरे-धीरे बीच धार मे बहती रहे और हम दोनो एक दूसरे का हाथ पकडे, एक दूसरे की आँखो मे आँखे डाले बैठे रहे।" कामेश्वर ने भावुक होकर कहा।

शैलजा कुछ बोली नही।

"लो लैमन पी लो।" कहकर कामेश्वर ने एक बोतल शैलजा की ओर बढादी और दूसरी अपने मुह से लगाली।

शैलजा लैमन पीने लगी।

"न जाने कैसा टेस्ट है !" बोतल खाली करके शैलजा बोली।

"मुझे भी पसन्द नही आया !" अपनी खाली बोतल गद्दे पर रखकर कामेश्वर बोला और फिर नाविक की ओर मुड़कर कहा—"किसी नयी दूकान से ले आये हो क्या ?"

"पुरानी दूकान बन्द थी, सरकार !" नाविक ने विनम्रता से कहा।

"न जाने कब का बासी था।" कहकर कामेश्वर ने सिगरेट सुलगायी।

इसी बीच मे नाव काफी निकल आयी थी। चाँदनी मे घाट अजीब से लग रहे थे। रेलवे पुल की बत्तियाँ नाव वालो को आमत्रत कर रही थी।

"अरे, हम लोग काफी दूर आ गये।" सहसा चौककर कामेश्वर बोला। "नाव उस पार ले चलो। रेती पर बैठकर खा-पी ले।"

नाविक ने फिर पतवार सँभाले। नाव किनारे की ओर बढ चली।

जैसे ही नाव उस पार पहुँची, कामेश्वर उछलकर रेती मे उतर पडा। शैलजा का हाथ पकडकर उसने उसे भी उतार लिया। दूर-दूर तक फैली हुई उजली रेत चाँदनी मे बहुत मनोहर लग रही थी। शैलजा का मन हुआ कि वह बच्चो की तरह किलकारी भरकर रेत मे दौडे, खेले, गिरे और फिर दौडे। अपने अन्दर वह नयी स्फूर्ति का अनुभव कर रही थी। जिन अपना मादक प्रभाव दिखा रही थी।

नाविक ने नाव का गद्दा रेत पर बिछा दिया और उसी पर खाने का सामान रख दिया। कामेश्वर गद्दे पर बैठ गया। शैलजा रेत के घरौदे बनाने लगी।

"सरकार, अगर हुक्म हो तो कुछ हम भी खा-पी आये। आज सबेरे से अन्न का दाना नही गया है पेट मे।" नाविक ने गिडगिडा कर कहा।

"जाओ। मगर जल्दी आना ! हमे ज्यादा देर नही रुकना है।" कामेश्वर ने नाविक की ओर गूढ दृष्टि से देखकर कहा।

"अभी आता हूँ सरकार, पाँच मिनट मे।" सधे हुये नाविक ने अपने अभ्यस्त स्वर मे कहा और फिर वह नाव पर बैठकर पतवार चलाने लगा।

धीरे-धीरे नाव दृष्टि से ओझल हो गयी।

चाँद आकाश मे उसी तरह हँस रहा था मगर बादल का वह सफेद टुकडा जो कुछ देर पहले उससे काफी दूर था, अब उसके पास आ गया था।

"आओ, कुछ खा लो।" कामेश्वर ने केक खाते हुये कहा।

शैलजा उसके पास बैठ गयी।

"खाओ।" कामेश्वर ने एक केक उसके हाथ मे दे दिया।

"तुम खाओ। मेरा मन नही है।" कहकर शैलजा लेट गयी। "मुझे तो न जाने कैसा लग रहा है।"

"कैसा लग रहा है?" कामेश्वर ने खाने का सामान एक ओर खिसकाकर पूछा।

"तुम हँसोगे।" अँगडाई लेकर शैलजा बोली।

"नही हँसूगा। बताओ।" कहकर वह उसके बालो मे खेलने लगा।

"लगता है, मेरे पख लग गये है और मै इस चाँदनी मे उड रही हूँ।" कहकर शैलजा ने आँखे बन्द कर ली।

कामेश्वर उसके और पास आ गया।

"मन करता है, इस ठढी रेत मे जी भर कर नाचू।"

"अरे, कही ऐसा न कर बैठना! इन्द्रलोक मे खलबली मच जायेगी।" कहकर कामेश्वर ने उसका हाथ अपने हाथ मे ले लिया।

"न जाने किस जादू मे बँध गयी हूँ मै। मेरा मन मेरे बस मे नही है।" कहकर शैलजा ने अधखुले आँखो से कामेश्वर की ओर देखा।

कामेश्वर का हृदय तीव्रगति से धडक रहा था। वह समझ गया था कि मदिरा अपना रग ला रही है। उसकी इच्छा हुई कि शैलजा को अपने बाहुपाश मे कस ले परन्तु उसने अपने को सयत कर लिया। शीघ्रता करने मे बना-बनाया खेल बिगड जाने का भय था।

शैलजा आकाश की ओर मुह किये लेटी थी। उसकी चुन्नी एक ओर को सरक गयी थी। वह कभी आँखे बन्द कर लेती थी और कभी खोलकर आकाश की ओर देखने लगती थी। उसे अपनी पलके भारी

लग रही थी और उसकी इच्छा हो रही थी कि वह सो जाये।

बालो से खेलते-खेलते कामेश्वर ने साहस एकत्र कर लिया। वह शैलजा के ऊपर झुका और उसने उसके अधरो पर अपने अधर रख दिये।

उस बेसुधी की अवस्था मे भी शैलजा ने अनुभव किया कि उसके अधरो पर किसी ने दहकता हुआ अगार रख दिया है। वह शीघ्रता से उठकर बैठ गयी।

"बहुत बुरे हो तुम . . . .।" कामेश्वर की धृष्टता का विरोध वह इतना कह कर ही कर सकी।

कामेश्वर ने झपट कर उसे बाहुपाश मे कस लिया।

शैलजा जाल मे फँसी मछली की तरह छटपटाने लगी।

"यह क्या करते हो? छोडो मुझे!" अपने को मुक्त करने का निष्फल प्रयत्न करती हुई तेज स्वर मे शैलजा बोली।

कामेश्वर का बन्धन कसता ही गया।

"छोड दो मुझे! छोडो, जानवर कही के!" अपनी पूरी शक्ति लगाकर मुक्त होने की चेष्टा करती हुई शैलजा चीख कर बोली।

'इस चाँदनी रात के एकान्त मे तुम जैसी सुन्दरी को पाकर कौन जानवर नही हो जायेगा?" कामेश्वर ने भर्राये गले से कहा और फिर वह भयकर अट्टहास कर उठा।

शैलजा ने छूटने की बहुत कोशिश की पर हैवान के फौलादी चगुल मे वह छूट न सकी।

चाँद ने लजा से बादल के टुकडे मे अपना मुह छिपा लिया।

उस किनारे पर लगी नाव मे बैठे नाविक ने एक पीडा भरी चीख सुनी पर वह चुपचाप बैठा बीडी पीता रहा मानो वह सवेदनशील मनुष्य नही, जड मशीन है। चीख को सुनकर वह सहायता के लिए नही दौडा। वह तो प्रसन्न था; बहुत देर से वह उसी चीख को सुनने की आतुर प्रतीक्षा कर रहा था क्योकि चीख का अर्थ था उसके लिए दस रुपए का करारा नोट!

बहुत इत्मीनान से बीड़ी का आखिरी कश लेकर नाविक ने पतवार उठाय। वह नाव को धीरे-धीरे खे रहा था। फलस्वरूप नाव को उस पार पहुंचने मे काफा समय लग गया। उस पार पहुँच कर नाविक ने देखा कि खाने का सामान रेत मे इधर-उधर बिखरा पडा है, शैलजा बाहो मे मुह छिपाये गद्दे पर पडी है और कामेश्वर बेचैनी से नाव की प्रतीक्षा मे टहल रहा है।

"देर तो नही हो गयी, सरकार?" कह कर नाविक रेत मे उतर कर गद्दे की ओर बढा।

कामेश्वर ने शैलजा का हाथ पकड कर उठाना चाहा मगर वह स्वय उठ गयी। नाविक ने गद्दा नाव मे बिछा दिया। दोनो नाव पर बैठ गये। दोनो ही मौन थे।

नाव से उतर कर कामेश्वर ने दस रुपये का नोट नाविक के हाथ में थमा दिया।

"दिन दूनी रात चौगुनी तरक्की हो, सरकार! अब फिर कब आना होगा?" प्रसन्न होकर नाविक ने पूछा।

"कह नही सकता।" कह कर कामेश्वर आगे बढ गया।

कार के पास पहुँच कर कामेश्वर द्वार खोलकर बैठ गया। द्वार उसने शैलजा के लिए खुला रहने दिया, मगर वह उसके पास न बैठकर पीछे बैठ गयी।

द्वार बन्द करके कामेश्वर ने कार स्टार्ट की।

"क्या नाराज हो?" कामेश्वर ने कहा और फिर एक क्षण रुककर बोला—"मैने मामा जी को कमल का सग्रह प्रकाशित करने के लिए राजी कर लिया है। अब तो खुश हो न?"

शैलजा मौन रही।

"तुम नाराज हो जाओगी तो मै जिन्दा कैसे रहूँगा?" कामेश्वर उसे प्रसन्न करने के आशय से बोला।

"चुप रहो!" शैलजा क्रुद्ध स्वर मे चोट खायी नागिन की तरह

फुत्कार कर बोली। "मुझे तुमसे नफरत है। मैं तुम्हारी शक्ल भी नही देखना चाहती। तुम आदमी नही, जानवर हो।"

और फिर वह सिसकने लगी।

कामेश्वर कुछ बोला नही।

जब कार शैलजा के बॅगले मे पहुॅची तब तक शैलजा संयत हो चुकी थी। वह चुपचाप उतर कर अपने कमरे की ओर बढी।

कामेश्वर कार घुमाकर अपने घर की ओर चल दिया। वह प्रसन्न था—अपनी विजय पर!

और शैलजा अपने कमरे का द्वार अन्दर से बन्द करके आधी रात तक रोती रही। वह लुट गयी थी। उसे लग रहा था कि उसका शरीर गन्दा हो गया है, कभी न छूटने वाली कीचड मे सन गया है।

रोते-रोते ही वह सो गयी।

और फिर उसने स्वप्न देखा कि वह एक भयंकर अग्नि-कुड मे गिर गयी है। अग्नि शिखाये उसके रोम-रोम को भस्म कर रही है और वह चीख रही है, असह्य पीडा से तडफ रही है।

और सचमुच ही उसका पसीने से तर शरीर पलॅग पर उसी तरह तडफने लगा जैसे जल के बाहर मछली तड़फती है।

सोलह

दूसरे दिन जब शैलजा मोकर उठी तब उसका चेहरा नित्य की तरह फूल सा खिला हुआ नही था। उसका मन भारी था, शरीर मे थकान थी, रग-रग मे दर्द था और सिर फटा जा रहा था। नौकरानी जब चाय लेकर आयी तब रोज की तरह शैलजा ने प्याली अधरो से नही लगायी। उसने नौकरानी से चाय ले जाने के लिए कहा। वह दबे पाँव चाय का प्याला लिए बाहर चली गयी।

शैलजा ने नहा-धोकर जब जल पान किया तब वह कुछ स्वस्थ हुई। फिर भी पिछली रात की घटना वह भूल न सकी। उसकी स्मृति बार-बार उसे आकुल कर रही थी। वह रह-रह कर काप उठती; उसका हृदय कामेश्वर की नीचता के प्रति घृणा से भर उठता और वह अपने होठ काटने लगती।

कालेज जाने का समय हुआ पर वह कालेज न गयी। अपने कमरे मे जाकर लेट गयी। वह सोचने लगी कि कामेश्वर का विश्वास करके उसके साथ रात मे गगा-तट पर जाना ही उसकी भारी भूल थी और उसी भूल का महान दड उसे मिला है! सभी पुरुष अन्दर से भेडिये होते है—भूखे,

खूँख्वार भेड़िये ! और फिर उसने निश्चय किया कि वह भविष्य में कभी किसी पुरुष पर विश्वास नहीं करेगी।

वह विचारों में खोयी थी और तभी कमरे में शकुन आ गयी।

"आज भी कालेज नहीं गयी ?" शकुन ने सहज स्वर में पूछा।

शैलजा न जाने क्यों शकुन के इस प्रश्न से चिढ़ गयी। उठकर बैठती हुई बोली—"तुम मेरी फिक्र क्यों करती हो ? मेरा मन होगा, जाऊँगी, नहीं तो नहीं जाऊँगी।"

शकुन को आशा नहीं थी कि शैलजा ऐसा उत्तर देगी। वह कुर्सी पर बैठकर धीमे स्वर में बोली—"मैंने कोई बुरी बात तो नहीं कही, शैल !"

शैलजा फिर पलँग पर लेट गयी।

"क्या तबियत ठीक नहीं है ?" शकुन ने स्नेहपूर्ण स्वर में पूछा।

शैलजा मौन रही। उसने मुंह दूसरी ओर कर लिया।

शकुन ने समझा कि अवश्य कोई ऐसी बात हुई है जिससे शैलजा नाराज है। उसने सोचा कि कल रात को वह कामेश्वर के साथ घूमने गयी थी, शायद तभी कुछ आपस में अनबन हो गयी हो।

"क्या कामेश्वर ने कुछ कह दिया है ?" शकुन ने पलँग पर बैठकर सहज स्वर में पूछा।

कामेश्वर के नाम ने शैलजा के क्रोध में घी का काम किया। उसने समझा कि कामेश्वर का नाम लेकर शकुन उसकी हँसी उड़ा रही है, उसे चिढ़ा रही है। वह तिलमिला कर उठ बैठी और तीखे स्वर में बोली—"क्या मैं अपने कमरे में भी चैन से नहीं लेट सकती ?" और फिर वह तकिये में मुंह छिपाकर सिसकने लगी।

शकुन घबरा गयी। आखिर शैलजा को हो क्या गया है ?

कुछ देर बाद शैलजा का सिसकना बन्द हो गया। शकुन पलँग से उठकर आराम कुर्सी पर बैठ गयी थी। शैलजा उठकर बाथ रूम में गयी और मुँह धोकर लौटने के बाद शकुन से बोली—"मुझे माफ कर दो, सिसी !

मेरी तबियत ठीक नही है।"

"यह तो मै पहले ही समझ गयी थी।" शकुन का सीधा सा उत्तर था।

"ललित रात को क्यो आया था ?" सहसा शैलजा पूछ बैठी।

"मुझे बुलाने के लिए ?"

"क्यो ? कहाँ जाना था तुम्हे ?" शैलजा की उत्सुकता जाग गयी।

"कल तुमने सरला को देखा था न !"

"हाँ ! मगर तुमने यह नही बताया था कि वह ललित की बहन है। मुझे तो तब मालूम हुआ जब वह उसके साथ जाने लगी।" शैलजा के स्वर मे फिर रूखापन आ गया।

"ललित को जो कुछ मिलता है उससे घर का खर्च ही कठिनाई से चलता है। बिचारा दहेज देकर सरला का ब्याह कैसे कर पाता !" शकुन के स्वर मे करुणा आन्दोलित हो उठी।

"डैडी से कहकर रुपये दिलवा क्यो नही देती !" शैलजा ने व्यग्य किया।

"सोचती तो मै भी यही हूँ।" शकुन गभीरता से बोली। "खैर, यह तो बाद की बात है। हाँ, तो सरला भैया-भाभी की चिन्ता से दुखी थी। उन्हे दुख और चिन्ता से छुटकारा देने के लिए उसने. ... ।"

"सुसायड कर ली ?" बीच मे ही शैलजा आँखे फैलाकर पूछ बैठी।

"आत्म हत्या तो नही की परन्तु ।" और शकुन ने रुक रुककर धीमे और दुखी स्वर मे सारी बात शैलजा को बता दी।

शैलजा मूक भाव से सुनती रही और अन्त मे ठढी साँस लेकर धीमे स्वर मे बुद बुदायी—"पुअर सरला।"

और फिर उसकी आँखो के आगे कामेश्वर की पाशविकता का चित्र घूम गया। उसी पशु के साथ सरला को रहना पडेगा। क्या वह उसे मामी का आदर और सम्मान दे सकेगा ? क्या भोली-भाली सरला उस चिकने-चुपडे लुटेरे से अपनी रक्षा कर सकेगी ? सोचते-सोचते शैलजा का हृदय सरला के प्रति करुणा से भर गया। "बिचारी सरला !" वह फिर बुदबुदायी।

शकुन निश्चल होकर आराम कुर्सी पर आँखे बन्द किये लेटी थी। शैलजा पलँग से उठकर उसके पास आ गयी और दूसरी कुर्सी पर बैठकर धीमे स्वर मे बोली—'सिमी, यह तो अन्धेर है! इसे रोकना चाहिए।"

"मैंने सरला को समझाने की बहुत कोशिश की।" शकुन ने आँखे खोलकर उदास स्वर मे कहा, "मगर वह मानती ही नही। उसका निश्चय अटल है।"

यदि कल की दुखद घटना घटित न होती तो शायद शैलजा को सरला के दुर्भाग्य पर दुख न होकर सुख ही होता, क्योकि उसने कमल की आँखो मे उसके प्रति कोमल भावना देखी थी और फलस्वरूप वह उसे अपनी प्रतिद्वन्द्विनी मान बैठी थी। किन्तु कल की घटना ने स्थिति बदल दी थी। उसे पुरुष-जाति से घृणा हो गयी थी और इसीलिए उसके हृदय मे सरला के प्रति, जो उसी की तरह दुर्बल नारी थी, सहानुभूति का भाव उदित हुआ था।

कमरे के वातावरण मे एक अजीब सी उदासी छा गयी थी। शैलजा और शकुन आँखे बन्द किये सरला के करुण भविष्य की कल्पना मे लीन थी। सहसा शकुन को कमल की बात याद आ गयी। आँख खोलकर उसने स्वाभाविक स्वर मे शैलजा से पूछा—"तुम कल कमल के घर गयी थी?"

शैलजा ने चौककर आँखे खोल दी। वह तीखी दृष्टि से शकुन की ओर देखने लगी। उसकी समझ मे न आया कि शकुन को यह बात कैसे ज्ञात हुई।

"गयी तो थी।" शैलजा ने उत्तर दिया। "मै चाहती थी कि वह अपना सग्रह बाबू श्यामसुन्दर को दे दे। मगर वह बहुत जिद्दी है। मै उसकी सहायता करना चाहती थी और उसने समझा कि इसमे मेरा कोई स्वार्थ है। फुलिश क्रियेचर!"

शैलजा ने कमल को 'मूर्ख प्राणी' की उपाधि इस ढग से दी कि शकुन को हँसी आ गयी।

"वह यह समझता है कि तुमने बाबू श्यामसुन्दर से उसकी शिफारिश

की है।" हँसी रोककर शकुन बोली।

"मुझे क्या गरज पड़ी है किसी की शिफारिश करने की?" चिढ़े स्वर में शैलजा बोली और फिर कुर्सी से उठकर वह ड्रेसिंग टेबिल के दर्पण में अपना मुख देखने लगी।

"खैर! कल वह ललित के यहाँ आया था। हमने उसे संग्रह देने के लिए राजी कर लिया है!" शकुन ने मुस्कराकर उसे सूचित किया।

इस सूचना से शैलजा को हर्ष नहीं हुआ। इसने उसे अपनी पराजय दिखाई दी। उसका स्वाभिमान जाग उठा। उसने सोचा, जब कमल मेरी बात नहीं मानता तो मुझे क्या गरज पड़ी है उसकी सहायता करने की! वह अपने को समझता क्या है? प्रोफेसर इन्द्र ठीक ही कहते थे। कल से लेखनी पकड़ी है और अपने को महाकवि समझने लगे हैं। और जो कमल पहले उसकी दृष्टि में 'जीनियस' था वही एकदम 'ट्रैश' बन गया।

"कमल ललित को अपना संग्रह सुबह दे गया होगा। वह संग्रह यहाँ ले आयेगा। फिर तुम बाबू श्यामसुन्दर को दे देना।" शकुन कुर्सी से उठकर बोली।

"संग्रह उसने मेरे कहने से तो दिया नहीं है। मुझे क्या पड़ी है जो बाबू श्यामसुन्दर की बिनती करूँ! अब तुम जानो, तुम्हारा काम जाने।" घूमकर शैलजा ने उत्तर दिया।

शकुन उसकी ओर आश्चर्य से देखती रही। इस परिवर्तन का क रग उसको समझ में न आया। "ठीक है। मैं बाबू श्यामसुन्दर से फोन से बात कर लूँगी।" कहकर वह बाहर चली गयी।

× × ×

कमल जब पाण्डुलिपि लेकर ललित के घर पहुँचा तब ललित मोल जाने की तैयारी कर रहा था। कमल ने बाहर से आवाज दी। कमल का स्वर पहचान कर ललित ने उसे अन्दर बुला लिया। दया और सरला बरामदे में ही थी। दोनों ने हाथ जोड़कर अभिवादन किया। वह सिर झुकाकर आँगन में पड़ी चारपाई पर बैठ गया।

"सग्रह ले आये ?" ललित ने कमरे से ही पूछा।

"हाँ।" कमल ने धीमे स्वर में उत्तर दिया।

कमल ने सकेत से मुन्ना को अपने पास बुलाया। वह झिझकता हुआ उसके पास गया। कमल ने उसे अपनी गोद में बिठा लिया।

"हमें जानते हो ?" कमल ने मुन्ना से पूछा।

उसने सिर हिला दिया।

"बताओ, हम कौन हैं ?" कमल ने प्यार से पूछा।

"गाने वाले चाचा!" कहकर मुन्ना तालियाँ बजाने लगा।

उसके उत्तर में कमल खिलखिलाकर हँस पडा। दया और सरला भी मुस्कराने लगी।

"वाह भाई! मेरा मुन्ना तो बहुत होशियार है।" कमल ने उसका माथा चूम कर कहा।

उसी समय ललित कमरे से बाहर आया। उसके हाथ में झोला था। कमल को देखकर वह मुस्कराया पर कमल को उसकी वह मुस्कान आँसुओं से भी गीली लगी। उसने देखा कि ललित की आँखें लाल हैं, मानो वह रात भर सोया न हो और चेहरे पर उदासी और व्यथा के चिन्ह हैं मानो वह बहुत-बहुत थका हो।

"लाओ।" कहकर ललित ने अपना हाथ कमल के आगे फैला दिया।

कमल से सग्रह लेकर उसने उलट-पुलट कर देखा और फिर उसे सावधानी से झोले में रख लिया।

घर से निकल कर दोनों गली में आ गये। कुछ देर तक दोनों मूक रहे, पर कमल से न रहा गया। उसने पूछा—"तुम उदास क्यों हो ललित ?"

"कोई खास बात नहीं है।" ललित ने मन्द स्वर में कहा।

"आम सही।" हँसकर कमल बोला। एक क्षण बाद गभीर स्वर में कहा—"बताओ, क्या बात है ? एक दुखी दूसरे के दुख को अच्छी तरह समझ सकता है।"

"क्या बताऊँ, भाई।" कहकर ललित ने व्यथित स्वर मे सम्पूर्ण स्थिति स्पष्ट कर दी और फिर रुक कर बोला—"मुझे लगता है कि मैं एक महान अपराधी हूँ, कमल! कुछ समझ मे नही आता क्या करूँ?"

कमल सिर झुकाये मौन भाव से चलता रहा। उसका मुख आन्तरिक पीडा से विकृत हो उठा। उसे लगा कि जैसे उसके अंग-अग मे किसी ने सहस्रो सुइयाँ चुभा दी है।

"मैं तो सरला को समझा कर हार गया। शकुन की बात भी उसने नही मानी। न हो तो एक बार तुम्ही समझाओ उसे।" अत्यन्त धीमे स्वर मे ललित ने आग्रह किया।

कमल चलते-चलते रुक गया। ललित को भी रुकना पडा।

"किस मुँह से समझाऊ उसे?" कमल का स्वर बेबसी और पीडा से ओत-प्रोत था। "और क्या समझाऊँ? नही, तुम भूलते हो, मित्र! समझाने की कोई जरूरत नही है। जो हो रहा है, होने दो!"

"यह क्या कह रहे हो, कमल?"

"तुम्हे तो प्रसन्न होना चाहिए कि सरला ने आत्म हत्या का कायरता-पूर्ण मार्ग नही चुना।" आगे बढता हुआ कमल गभीर वाणी मे बोला। "उसने साहसपूर्ण कदम उठाया है और मैं उस देवी का अभिनन्दन करता हूँ।"

"तुम पागल हो, कमल!" ललित कडे स्वर मे बोला।

"अगर हम सब पागल हो जाये तो फिर कोई कष्ट ही न हो। खेद तो यही है कि हम पागल नही है।" और फिर रुक कर ललित का हाथ पकड कर आवेश मे बोला—"यही कष्ट, यही व्यथाये, यही चोटे हमे सघर्ष के प्रति जागरूक रखती है। दोस्त! आघातो को हँसकर सहो क्योकि इन्ही से क्रान्ति को बल मिलेगा। सरला जैसी देवियो के त्याग और बलिदान ही सामाजिक क्रान्ति को उभारे और फिर वर्गो की दीवारे ढहकर चूर हो जायेगी, मानवीय सम्बन्धो को छिन्न-भिन्न करने वाली अव्यवस्था की खाइयाँ पट जायेगी और मनुष्य को मनुष्य से अलग करने-

वाली दरारे मुद जायेगी। विश्वास रक्खो दोस्त, हम जो कुछ सह रहे है वह व्यर्थ नही जायेगा। नीव के इन्ही पत्थरो पर नये समाज का प्रासाद खड़ा होगा।"

बोलते-बोलते कमल के मस्तक पर पसीना आ गया और वह हाँफने लगा। माथे का पसीना कुर्ते की बाँह से पोछ कर वह फिर मन्द गति से आगे बढा। ललित मत्र-मुग्ध सा उसके पीछे चल दिया।

"अच्छा, अब मै चलता हूँ।" कहकर कमल ने ललित के कन्धे पर हाथ रख दिया।

ललित दृष्टि नीची किये खडा रहा मानो उसे काठ मार गया हो।

"यह प्रश्न केवल सरला या तुम तक ही सीमित नही है।" ललित के कन्धे को जोर से दबाते हुये कमल बोला। "यह समस्या करोडो परिवारो की है। याद रक्खो, इस आग मे जलनेवाले हमी लोग नही है, करोडो हमारे साथी है। यह आग बहुत जल्द ही विषमता की फूस को भस्म कर देगी। जितनी तीव्र आग मे हम जलेगे उतना ही उग्र हमारा विद्रोह होगा। इसलिए जलो, खूब जलो। "

और फिर कमल दार्शनिक की भाँति सिर झुकाकर मन्द गति से राममोहन के हाते की ओर चल दिया।

ललित ने अनुभव किया कि कमल ने उसे नयी दृष्टि दी है, नया प्रकाश दिया है, वस्तुस्थिति को परखने के लिए नया दृष्टिकोण दिया है।

और जब वह कमल का काव्य-सग्रह देने के लिए शकुन के बंगले की ओर चला तब उसकी गति मे दृढता थी।

सत्रह

शाम को जब ललित घर लौटा तो द्वार पर बाबू श्यामसुन्दर का नौकर उसकी प्रतीक्षा कर रहा था। उसने ललित को एक कागज दिया और कहा कि इसे भर कर लौटा दीजिये। ललित कागज लेकर अन्दर आ गया। आँगन मे पहुँच कर उसने कागज खोलकर देखा। वह 'फिक्सड डिपाजेट अकाउन्ट' खोलने के लिए सेन्ट्रल बैंक का फार्म था।

ललित ने सरला और बाबू श्यामसुन्दर के ब्याह की स्थिति से तो समझौता कर लिया था पर उसकी आत्मा यह मानने को तैयार न थी कि बाबू श्यामसुन्दर से रुपया जमा कराया जाये। वह सोचता था कि यदि उसने उनसे एक भी पैसा लिया तो मोहल्ले वाले यही कहेगे कि उसने बहन का सौदा किया है।

इसी उलझन मे पडा वह चारपाई पर बैठ गया। उसने दया को बुलाया। वह आकर फर्श पर बैठ गयी।

"सरला कमरे मे है क्या?" उसने दबे स्वर मे पूछा।

"परोस मे गयी है। क्यो, क्या बात है?" दया ने पूछा।

"बाबू श्यामसुन्दर ने बैंक का फार्म भेजा है। मै नही चाहता कि उनसे एक भी पैसा लिया जाये। तुम्हारी क्या राय है?"

"मैं क्या बताऊँ? तुम जैसा ठीक समझो करो।" दया बोली।।

"तो फार्म लौटा दूं?" ललित ने चारपाई से उठकर पूछा।

"लौटा दो।" दया ने धीमे स्वर में कहा।

उसी समय सरला आ गयी। ललित के हाथ में फार्म देखकर पूछा—"क्या बात है, भैया?"

"कुछ नहीं! बाबू श्यामसुन्दर ने मुन्नी के नाम रुपया जमा करने के लिए फार्म भेजा है। हमारा विचार है कि फार्म लौटा दें।"

"क्यों! लाइये, मैं भरे देती हूँ! मुन्नी के नाम रुपया जरूर जमा होना चाहिए।" कहकर सरला ने ललित के हाथ से फार्म ले लिया और कमरे से कलम-दावात लाकर फार्म भरने लगी।

"संरक्षक के स्थान पर आपका नाम लिखे देती हूँ, भैया?" सरला ने कहा।

"मुझे नहीं चाहिए! उनके रुपये।" कहकर ललित टहलने लगा।

"तो तुम्हारा लिखे देती हूँ, भाभी।" वह दया की ओर मुड़कर बोली।

"ना बाबा, मुझे तो इस झंझट से दूर ही रक्खो।" कहकर दया चौके में चली गयी।

सरला कठिनाई में पड़ गयी। उसकी हार्दिक इच्छा थी कि मुन्नी के नाम रुपया जमा हो। पर प्रश्न यह था कि संरक्षक के स्थान पर किसके हस्ताक्षर हों। ललित और दया राजी नहीं थे। फिर...... ?

सहसा बिजली की तरह एक विचार उसके मस्तिष्क में कौंध गया। क्यों न वही मुन्नी की संरक्षिका बन जाये। वह अठारह साल की हो चुकी है और बालिग होने के नाते बैंक भी उसके संरक्षिका बनने में कोई आपत्ति न करेगी।

संरक्षक के स्थान पर अपना नाम लिखकर उसने हस्ताक्षर कर दिये।

"पन्द्रह साल के लिए रुपया जमा कराया है, भैया! लीजिये, फार्म दे आइये।" कहकर सरला ने फार्म ललित की ओर बढ़ा दिया।

ललित ने फार्म पढ़ा और आश्चर्य से सरला की ओर देखने लगा।

× × ×

तीसरे दिन अत्यन्त सादगी से आर्य समाजी पद्धति द्वारा सरला का ब्याह बाबू श्यामसुन्दर के साथ सम्पन्न हो गया। वर पक्ष की ओर से कामेश्वर तथा बाबू श्यामसुन्दर के दो-एक घनिष्ट मित्र आये थे। वधू पक्ष की ओर से परोस की कुछ स्त्रियो के अतिरिक्त शकुन और शैलजा थी। ललित ने कमल को भी बुला लिया था।

ललित और शकुन दोनो ने ही देखा कि शैलजा और कामेश्वर एक दूसरे से दूर रहने की चेष्टा कर रहे है उन्होने बात करना तो दूर, एक दूसरे की ओर देखा तक नही। उनके उदासीन व्यवहार से ऐसा लग रहा था मानो दोनो बिल्कुल अपरिचित हो।

विवाह-संस्कार के पश्चात् विदा की करुण घडी आयी। यह समय ऐसा होता है जब पत्थरो का दिल भी पिघल जाता है। सरला जब दया के सीने मे मुह छिपा कर फूट-फूट कर रोने लगी तब सभी की आँखे भर आयी। और तो ओर, मुन्ना-मुन्नी भी रोने लगे।

"सरला भोली-भाली लडकी है।" ललित ने रुद्ध कठ से बाबू श्याम सुन्दर से कहा।" अगर उसमे भूल-चूक हो जाये तो ध्यान न दीजियेगा।"

और फिर ललित की आँखो से आँसू की बूँदे सावन की वर्षा की तरह गिरने लगी। कमल ने उसे धीरज बँधाने की चेष्टा की पर उसे समझाना तो दूर वह स्वय बच्चो की तरह रोने लगा।

दया को छोडकर सरला ललित से चिपट गयी। शकुन और दया रोती जा रही थी ओर सरला को समझाती जा रही थी। शैलजा आँगन के एक कोने मे खडी अपने आँसू पोंछ रही थी। पास-परोस की स्त्रियाँ भी अपने को सयत नही रख पा रही थी।

"भैया! सरला सिसक कर बोली। "मैने बहुत कष्ट दिये है आपको। मुझे माफ कर देना, भैया, मुझे माफ कर देना।"

"माफी मुझे माँगनी चाहिए।" ललित सिसकता हुआ बोला।

"दोषी मैं हूँ। मैं .... मैं . अपना धर्म भी पूरा न कर सका।"

और इसके बाद ललित ऐसा बिलख-बिलख कर रोया कि बाबू श्याम-सुन्दर की आँखों में भी आँसू आ गये। कामेश्वर का हाथ पकड़कर वे बाहर चले गये।

आँसू, और सिसकियों के बीच सरला की विदा हुई। सरला के जाने के बाद घर में मातम की उदासी छा गयी। एक अजीब सा सूनापन ललित के तन-मन पर छा गया। शैलजा, शकुन और कमल के जाने के बाद वह निर्जीव सा चारपाई पर लेट गया। उसे लगा, जैसे सरला के रूप में घर की आत्मा ही चली गयी है।

उस दिन उसने भोजन भी नहीं किया।

अट्ठारह

पुरुष की अपेक्षा नारी अधिक सरलता से परिस्थितियो तथा वातावरण के अनुकूल अपने को परिवर्तित कर लेती है। पुरुष यदि पाषाण है तो नारी मोम। यही कारण है कि ससुराल पहुँच कर नारी थोड़े समय मे ही वर्षो के संस्कारो को भूलकर नये संस्कारो को ग्रहण कर लेती है और नये घर मे इस प्रकार घुल मिल जाती है मानो वह वही जन्मी हो। सरला भी दो-चार दिनो मे ही गोमती से घुल-मिल गयी। अपने मृदुल और मधुर व्यवहार तथा सहनशील स्वभाव के कारण उसने नौकरो तक का मन मोह लिया।

गोमती प्रसन्न थी क्योकि सरला ने न तो घर गृहस्थी के कामो मे दखल ही दिया और न गृह स्वामिनी के रूप मे कभी अपने अधिकारो के प्रदर्शन की चेष्टा ही की। गोमती के अधिकार पूर्ववत रहे और इसीलिए वह सरला के प्रति अपनी ममता और अपने स्नेह का प्रदर्शन जी खोल कर करती रही। कामेश्वर के उत्तराधिकार से वंचित हो जाने से वह खिन्न और दुखी अवश्य थी किन्तु फिर भी आशा का सूत्र पूर्णतया नही टूटा था। "यदि सरला के सन्तान ही न हो तो।" रह रह कर यही विचार

उसके मन मे उठता था और इसी से उसके दग्ध हृदय को थोडी-बहुत शान्ति भी मिलती थी।

कामेश्वर को भी इस बात का दुख था कि वह मामाजी की अगाध सम्पत्ति का स्वामी नही बनेगा, परन्तु इस दुख की अपेक्षा मे उसका वह सुख अधिक था जो सरला को निकट पाकर उसे आन्दोलित करता था। सरला को प्रथम बार जब उसने गोष्ठी मे देखा था तभी वह उसकी दृष्टि मे गड गयी थी। अब सरला उसके निकट थी––वह बहुत निकट थी पर थी मामी के रूप मे। और यही उसका हृदय उसपर हावी हो जाता था। वह सरला को मामी के रूप मे स्वीकार न कर सका। उसकी धारणा थी कि अठारह साल की पूर्ण युवती पैंतालिस साल के अधेड को अपना प्यार न दे सकेगी और उसे विश्वास था कि वह एक दिन सरला के हृदय के एकान्त कोने मे अपना स्थान बना लेगा और फिर उसका मार्ग सीधा और साफ हो जायेगा। इसी उद्देश्य से वह अधिक से अधिक समय तक सरला के पास रहने की चेष्टा करता, जब-तब हास-परिहास भी कर बैठता मानों सरला उसकी मामी नही भाभी हो।

सरला को कामेश्वर का यह व्यवहार अच्छा न लगता। फिर भी वह इसका विरोध खुल कर न कर सकती थी। वह इतनी नादान थी कि कामेश्वर की आँखो मे तैरने वाली घोर वासना के भाव को न समझ सके। वह उससे दूर रहने की चेष्टा करने लगी, उसे उससे भय लगने लगा।

कुछ दिन बाद जब ललित विदा कराने पहुँचा तब सरला प्रसन्न हो उठी। बाबू श्यामसुन्दर ने ललित को आदर से कमरे मे बिठाया। सरला ने अन्दर से जलपान का सामान भेज दिया।

"खाइये।" बाबू श्यामसुन्दर ने हँसकर कहा।

"मै सरला से बडा हूँ। आपके यहाँ का कैसे खा सकता हूँ।" सकुचित स्वर मे ललित बोला।

बाबू श्यामसुन्दर ठहाका मारकर हँसते हुये बोले––"इन दकियानूसी ख्यालों मे क्या रक्खा है ? नाते-रिश्तेदारो के यहाँ नही खाया जायेगा तो

फिर किसके यहाँ खाया जायेगा। खाइये। बेकार का सकोच ठीक नही।"

फिर ललित विरोध न कर सका। वह खाने लगा।

"कमल की पुस्तक प्रेस मे दे दी है। महीने भर के अन्दर छप जायेगी।" बाबू श्यामसुन्दर ने जलपान के बाद ललित को बताया।

इस समाचार से ललित प्रसन्न हो उठा।

'बुरा न मानो तो एक बात कहूँ ?" दोनो हाथ मलते हुये सकोच से बाबू श्यामसुन्दर बोले।

"आपकी बात का बुरा कैसे मान सकता हूँ ?" ललित गभीर स्वर मे बोला। "कहिये, क्या कहना चाहते है।"

"तुम यह नौकरी छोड दो।' बाबू श्यामसुन्दर ने कहा।

"क्यो ?" चौककर ललित ने पूछा।

"जब घर मे ही काफी काम है तब बाहर नौकरी करने से क्या लाभ ? कामेश्वर का ध्यान काम मे है नही। मै चाहता हूँ तुम प्रेस का काम देखो।"

"यह कैसे हो सकता है ?" ललित ने विरोध किया। "नही, यह असम्भव है। आपके उपकारो के बोझ से वैसे ही बहुत दबा हूँ। अब और न दबाइये।" और ललित का गला भर आया।

बाबू श्यामसुन्दर समझ गये कि जोर देना बेकार है; ललित उनकी बात मानेगा नही। वे मौन हो गये।

कामेश्वर सरला और ललित को कार से छोडने आया। सरला मुन्ना-मुन्नी के लिए वस्त्र, फल, मिठाई और भाति-भाति के खिलौने लाई था।

सरला को देखकर मुन्ना प्रसन्नता से तालियाँ बजा-बजाकर कहने लगा—"बुआजी आ गयी! बुआजी आ गयी।"

सरला ने उसे गोद मे लेकर चूमा और फिर वह खेल-खिलौनो मे मग्न हो गया।

दया ने झपट कर सरला को सीने से लगा लिया।

सुबह शकुन सरला से मिलने आयी।

"शैलजा जी कालेज गयी क्या ?" सरला ने पूछा।

"उसे न जाने क्या हो गया है। दिन भर अपने कमरे में ही पड़ी रहती है। कहती है सिर मे दर्द रहता है। कालेज जाना भी बन्द कर दिया है।" शकुन ने बताया।

सुनकर सरला को दुख हुआ। उदास स्वर मे पूछा—'डाक्टर को दिखाया ?"

"वह दिखाने दे तब तो। कहती है, अपने आप ठीक हो जायेगा। उसकी जिद के सामने पिताजी भी कुछ नही कर सकते।"

उसके बाद सरला और शकुन काफी देर तक बाते करती रही। शकुन ने कोच-कोचकर ससुराल की बाते पूछी और सरला सकुचित और लज्जित स्वर मे उसके प्रश्नो का उत्तर देती रही।

शकुन ने सरला की बातो से निष्कर्ष निकाला कि वह ससुराल मे पूर्ण रूप से सुखी है। शकुन ने सन्तोष की साँस ली।

"कमल की किताब तो प्रेस मे चली गयी होगी ?" शकुन ने अन्त मे पूछा।

"हाँ। महीने भर मे ही छप जायेगी।" कहकर सरला कुछ रुकी और फिर धीमे स्वर मे शकुन की ओर देखकर बोली—"कमल ने बिना किसी समझौते के सग्रह दे दिया है। मै समझती हूँ उन्हे कुछ रुपया मिलना चाहिए।"

"अवश्य मिलना चाहिए। क्या तुमने उनसे कुछ बात की थी ?" शकुन ने पूछा। 'उनसे' से उसका तात्पर्य बाबू श्यामसुन्दर से था।

"अभी तो नही पर अब करूँगी।" सरला ने लजाकर कहा।

× × × ×

सरला कुछ दिन बाद फिर ससुराल चली गयी।

एक दिन अवसर देखकर वह बाबू श्यामसुन्दर से बोली—"आपने कमल से सग्रह तो ले लिया है, परन्तु उसे दिया कुछ नही।"

"और प्रकाशक तो कविता की पुस्तको पर दस प्रतिशत रायल्टी भी

मुश्किल से देते हैं। मैं उसे पन्द्रह प्रतिशत दूंगा।" बाबू श्यामसुन्दर ने उसे आश्वासन दिया।

"रायल्टी तो किताबों की बिक्री पर दी जायेगी। मैं चाहती थी .।" बोलते-बोलते सरला रुक गयी।

"क्या चाहती हो तुम?" हँसकर बाबू श्यामसुन्दर ने पूछा।

"यह तो आप जानते ही हैं कि कमल किसी मित्र के यहाँ रहता है। उसकी आर्थिक दशा ठीक नहीं है। यदि... ।" और फिर सरला अपना वाक्य पूरा न कर सकी।

"कुछ कहो तो। क्या उसे कुछ पेशगी दिलाना चाहती हो?"

सरला ने सम्मति सूचक सिर हिला दिया।

"तो इसमें सकोच की क्या बात थी? आज शाम को उसे चाय पर बुला लो। उससे मुख-पृष्ठ की डिजायन भी पसन्द करा लूंगा और रुपये भी दे दूंगा। कितना रुपया देना चाहती हो?"

"मैं क्या बताऊँ? जितना आप ठीक समझें।" सरला ने मन्द स्वर में कहा।

"चार सौ ठीक रहेगा?"

सरला ने फिर सम्मति सूचक सिर हिला दिया।

"ठीक है। आज शाम को उसे बुलाकर कह देना।" बाबू श्यामसुन्दर शेरवानी पहनने लगे।

"अगर कहें तो चाय पर भैया और शकुन को भी बुला लूं?" सरला के स्वर में सकोच मूर्तिमान हो उठा।

"इसमें पूछने की क्या बात है? जरूर बुला लो।" हँसकर बाबू श्यामसुन्दर बोले।

उनके मुक्त हास्य से वह और भी सकुचित हो उठी।

बाबू श्यामसुन्दर के जाने के बाद सरला ने शकुन को फोन किया।

"मैंने उनसे बात कर ली है। वे कमल को चार सौ रुपये पेशगी दे देंगे।" सरला ने प्रसन्न स्वर में शकुन को बताया। "आज शाम को

हमारे यहाँ चाय है। आप ठीक पाँच बजे आ जायें और मील में भैया को फोन कर दीजिये कि कमल को लेकर वे भी आ जाये।"

"मैं अभी फोन कर दूँगी।" शकुन ने उत्तर दिया।

"आप भी जरूर आइयेगा।" सरला के स्वर मे हार्दिक आग्रह था।

"जरूर आऊँगी।" शकुन ने वचन दे दिया।

नियत समय पर सब लोग पहुँच गये। चाय के बाद बाबू श्यामसुन्दर कमल और ललित गोल कमरे में बैठ गये। सरला शकुन को अपने कमरे में ले गयी।

बाबू श्यामसुन्दर ने कमल और ललित को मुख-पृष्ठ की डिजायन दिखायी। चित्र नगर के प्रसिद्ध कलाकार द्वारा बनाया गया था। दोनो ने चित्र बहुत पसन्द किया।

"आपने हमें अपना सग्रह प्रकाशित करने के लिए दिया इसके लिए मै आपका आभारी हूँ, कमल जी।" कुछ देर बाद बाबू श्यामसुन्दर विनम्र स्वर मे बोले। "मैंने आपको पन्द्रह प्रतिशत रायल्टी देने का निश्चय किया है। यह है उसका एग्रीमेन्ट। इसपर हस्ताक्षर कर दीजिये।"

बाबू श्यामसुन्दर ने समझौते की दो प्रतियाँ कमल की ओर बढा दी। कमल ने दोनो पर बिना पढे ही हस्ताक्षर कर दिये। जब वह दोनो प्रतियाँ उन्हे लौटाने लगा तब बाबू श्यामसुन्दर बोले—"एक आप रख लीजिये।"

कमल ने एक प्रति अपने जेब मे रख ली।

"आपने बिना पढे ही समझौते पर हस्ताक्षर कर दिये।" हँसकर बाबू श्यामसुन्दर बोले।

"पढने की क्या आवश्यकता थी। मुझे आप पर विश्वास है।" कमल का उत्तर था।

"उसमे लिखा है कि मै आपको एडवान्स के रूप मे चार सौ रुपया दूँगा। यह रहे आपके रुपये।" कहकर उन्होंने जेब से सौ-सौ के चार नोट निकाल कर कमल की ओर बढा दिये।

कमल और ललित आश्चर्य से बाबू श्यामसुन्दर की ओर देखने लगे।

"लीजिये।" कहकर बाबू श्यामसुन्दर ने नोट कमल के हाथ मे थमा दिये।

कमल ने समझौते की प्रति जेब से निकाली। पढकर उसे फिर जेब मे रख लिया और फिर नोट बाबू श्यामसुन्दर की ओर बढा कर बोला—"मै गरीब साहित्यकार हूँ। इतना रुपया कहाँ रक्खूँगा? इन्हे आप रख लीजिये। जब आवश्यकता होगी तब ले लूँगा।"

उसी समय शकुन सरला को साथ लेकर कमरे मे आ गयी। सरला चुपचाप एक कुर्सी पर बैठ गयी। शकुन कमल के पास आकर बोली—"आयी हुई लक्ष्मी को ठुकराते है आप? नोट रख लीजिये। समय पर काम आयेंगे।"

"मै इतने रुपयो का क्या करूँगा, शकुन जी? वस्त्र और भोजन मुझे मिल ही जाता है।" कमल ने विरोध किया।

"वस्त्र और भोजन के अतिरिक्त क्या मनुष्य की और कोई आवश्यकता है ही नही? कमल जी, आप क्यो सकोच कर रहे है? यह रुपया आपको दान मे नही दिया जा रहा है। यह आपकी कमाई है; दिन की थकन और रात के जागरण का फल है, यह हृदय के रक्त की उन बूँदो का मूल्य है जिनसे आपने अपने गीत लिखे है।" शकुन आवेश से बोली।

"हृदय के रक्त की बूँदो का मूल्य कागज के इन टुकडो से नही चुकाया जा सकता। यदि ..यदि मेरे गीत पढकर एक भी निराश आत्मा को आशा की किरण मिली तो . तो मेरा मूल्य मुझे मिल जायेगा, तो तो मै दिन की थकन और रात के जागरण को सार्थक समझूँगा।" कमल भी भावावेश मे आ गया।

"वह मूल्य तो आपको मिल गया।" धीमे और गभीर स्वर मे सरला बोली। "आपके गीत ने मुझे निराशा के क्षण मे नयी प्रेरणा दी है, नया प्रकाश दिया है। फिर भी आपको रुपये लेने मे आपत्ति नही करनी चाहिए। और कुछ नही तो कम से कम आप इनसे अपने मित्र का बोझ ही कुछ हल्का कर सकते है।"

और तब कमल ने नोट जेब मे रख लिए।

सबने सन्तोप की साँस ली।

पर जब गोमती को मालूम हुआ तब उसकी नाक-भौ सिकुड गई।

"यह कुलच्छिनी घर को लुटा कर ही चैन लेगी।" वह बड़बड़ाई। "कभी पैसा देखा हो तो दाँत से पकडना भी जाने।"

और कामेश्वर की प्रतिक्रिया भी कुछ इसी प्रकार की थी।

उन्नीस

शारीरिक व्याधियो की औषधि छोटे से छोटे डाक्टर के पास मिल सकती है पर चिन्ता-रोग का उपचार कोई नही कर सकता। किसी ने सत्य ही कहा है कि चिता तो मनुष्य को मृत्यु के बाद जलाती है पर चिन्ता की भयकर ज्वाला जीवित मनुष्य को ही भस्म कर देती है। शैलजा भी इसी रोग से पीडित थी। उसके इस सन्देह की पुष्टि हो गयी थी कि उस चाँदनी रात मे चाँद पर जो काला दाग लग गया था वह निरन्तर बढ रहा है और उसे भय होने लगा था कि वह दाग जल्द ही इतना बडा हो जायेगा कि ससार की दृष्टि उस पर पडने लगेगी। उसका रक्त पाप के बीज को जीवन दे रहा था। वह स्वय पीली पडती जा रही थी। उसकी आँखे हर समय की चिन्ता और रात-रात भर के जागरण के कारण धंस गयी थी। मानसिक यत्रणा का भार असह्य हो रहा था। उसकी समझ मे नही आ रहा था कि वह क्या करे, क्या न करे। कोई ऐसी अन्तरग सहेली भी तो नही थी जिससे वह मन की बात कहकर व्यथा कम कर सकती या उससे कोई परामर्श ले सकती। मन-ही-मन वह घुली जा रही थी। उसका तन उस ज्वालामुखी की लपटो मे झुलसा जा रहा था, जो उसके पेट मे धधक रहा था।

काफी सोच-विचार के बाद एक ही रास्ता उसे दिखाई दिया। यदि कामेश्वर उससे तत्काल शादी कर ले तो वह कलक से बच सकती है। कामेश्वर से बात करने के विचार से वह एक दिन कालेज गयी। कामेश्वर उसे देखकर आश्चर्य मे पड गया।

'तबियत तो ठीक है?" उसने उखडे स्वर मे पूछा।

"ठीक ही है। जरा मेरे साथ आओ। मुझे तुमसे कुछ बाते करनी है।" वह कामेश्वर का हाथ पकडकर कार तक ले गयी।

कामेश्वर पहले तो झिझका, पर बाद मे बैठ गया। शैलजा कार ग्रीन पार्क मे ले गयी। एक एकान्त स्थान पर उसने कार रोक दी।

"तुमने मेरे सामने जो प्रपोजल रक्खा था मैने उस पर सोच लिया है। कई दिनो से तुमसे मिलने का इरादा कर रही थी, पर तबियत ढीली होने की वजह से आ न सकी।" शैलजा ने कामेश्वर का हाथ अपने हाथ मे लेकर प्यार भरे स्वर मे कहा। "मुझे तुम्हारा प्रपोजल मजूर है।"

कामेश्वर ने धीरे से अपना हाथ उसके हाथो से खीच लिया। वह शैलजा की ओर व्यग्य भरी मुस्कान से देखने लगा।

"डियर! मै तुम्हारे बिना एक पल भी नही रह सकती। आई लव यू, डियर, आई लव यू! हम लोग कल ही सिविल मैरिज कर लेगे।" शैलजा आतुर स्वर मे बोली और उसने कामेश्वर का हाथ फिर अपने हाथ मे ले लिया।

"ऐसी जल्दी, क्या है?" कामेश्वर टालने के स्वर मे बोला। "पहले हम ग्रेजुयेट तो हो ले।"

"उसमे तो अभी महीनो की देर है। मेरे लिए एक-एक मिनट भारी है। डोन्ट यू सी? आई लव यू सो मच!" शैलजा की व्यग्रता बढती जा रही थी।

"उस दिन तो तुमने कहा था कि तुम मुझसे घृणा करती हो।"

"घृणा प्यार का ही दूसरा नाम है।"

'मेरे लिए घृणा और प्यार दो विरोधी चीजे है।" कामेश्वर अपना

हाथ खीचकर बोला। "य् कैन इदर लव आर हेट अ मैन! यू कान्ट डू बोथ।"

"विश्वास करो, कामेश्वर! मुझे तुममे प्यार है, सच्चा प्यार है।" शैलजा आँखो मे आसू भर कर बोली। "यह आँसू मेरे गवाह हैं।"

"होगा। मगर अभी शकुन की शादी नही हुई है। बडी बहन क्वाँरी रहे और छोटी   ।"

"उनका क्या है?" कामेश्वर का वाक्य बीच मे ही काटकर चिढे स्वर मे शैलजा बोली—"वे ललित को प्यार करती थी। उसने उनके प्यार को ठुकरा कर दूसरी लडकी से शादी कर ली। वे अगर अब जिन्दगी भर क्वारी ही रहे तो क्या मै भी शादी न करूँ?"

"ललित बुद्धिमान मालूम होता है।" कामेश्वर ने कहा। "चतुर व्यक्ति उस लकडी से कभी भी शादी नही करता जिससे वह प्यार करता है।"

शैलजा भीत दृष्टि से उसकी ओर देखने लगी।

"ससार मे सुखी व्यक्ति वही है जिसके घर मे पत्नी है और बाहर प्रेयसी। न पत्नी प्रेयसी का स्थान ले सकती है और न प्रेयसी पत्नी का। मुझे खेद है मिस शैलजा, मै तुमसे शादी नही कर सकता। अ ग्लैमर गर्ल कैन नेवर बी अ गुड हाउस वायफ।" कामेश्वर आवश्यकता से अधिक रूखे स्वर मे बोला।

शैलजा को अपनी आशाओ का महल ढहता दिखाई दिया। भावी की कल्पना से वह काँप उठी। उसकी आँखो मे आँसू आ गये और वह दोनो हाथो मे मुह छिपाकर सिसकने लगी।

कामेश्वर सिगरेट सुलगा कर धुये के गोले बनाने लगा।

"तब तुम्हारा प्यार क्या धोखा था? मीठी-मीठी बातो मे बहकाकर मुझे कही का न रखा!" सिसक कर शैलजा ने कहा।

"हम दोनो एक दूसरे को छलने की कोशिश कर रहे थे। जीत मेरी हुई। इसमे दुखी होने की क्या बात है? मै न सही, कमल ही सही।"

कामेश्वर ने व्यग्य मे कहा। कमल के प्रति पनपने वाली घृणा उसके स्वर मे साकार हो उठी।

"इन बातो से अच्छा तो यही है कि मेरा गला घोट दो। क्या मुह लेकर जिन्दा रहूँ अब।" कहकर वह फिर बिलख-बिलख कर रोने लगी।

शैलजा सिसकती रही।

कामेश्वर सोचने लगा कि मामा की सम्पत्ति से तो अब कानी कौडी की आशा है नही। क्यो न शैलजा से शादी करके रायबहादुर की सम्पत्ति का स्वामी बन जाऊँ! शैलजा सुन्दर है, पढी-लिखी है और सबसे बडी बात यह है कि बडे बाप की बेटी है। इससे अच्छी लडकी और कहाँ मिलेगी? तभी उसके हृदय ने शका की। शैलजा स्वच्छन्द तितली है। उसे बन्दी बनाकर नही रक्खा जा सकता। वह अच्छी पत्नी नही बन सकती कभी नही बन सकती।

"कामेश्वर, अगर तुम मुझसे शादी नही करोगे तो मै जहर खा लूँगी।" उसके कन्धे पर अपना सिर टिकाकर रुद्ध कठ से शैलजा बोली। "तुम्हे मुझसे शादी करनी ही पडेगी। मै मै तुम्हारे बच्चे . का . मॉ ।" शैलजा आगे न कह सकी। वह फूट फूटकर रोने लगी और उसने अपना चेहरा अपनी बाहो मे छिपा लिया।

कामेश्वर को पसीना आ गया। शैलजा के प्यार और शादी की उतावली का कारण उसकी समझ मे आ गया। ओह! पाप के कलक से बचने के लिए मुझे फॉसा जा रहा था!

"यह क्या बक रही हो तुम?" कामेश्वर कडे स्वर मे बोला। 'न जाने किसका पाप मेरे सिर मढना चाहती हो!"

"ऐसा न कहो, कामेश्वर, ऐसा न कहो!" बिलख कर शैलजा बोली। "भगवान की सौगन्ध! तुम्हारे सिवाय .।"

'जो एक पुरुष के आगे झुक सकती है वह औरो के आगे भी झुक सकती है।" कामेश्वर कार से उतर कर बोला। "शादी करना तो दूर, मै तुम जैसी लूज लडकी से बात करना भी नही चाहता।" और कामेश्वर

ने जोर से कार का द्वार बन्द कर दिया।

शैलजा को लगा कि कामेश्वर ने उसके गाल पर जोर से तमाचा मार दिया है। दर्द से तिलमिलाकर वह चीख कर बोली—'प्यार का ढोंग दिखाकर मेरे शरीर मे खेलना ही तुम्हारा उद्देश्य था! तुम मनुष्य के वेश मे जगली जानवर हो।"

"डोन्ट बी एन्ग्री, मिस! बीस्ट्स आर आलवेज आफ्टर ब्यूटी।" कहकर कामेश्वर विजयपूर्ण अट्टहास कर उठा। "और हाँ, तुम्हे जहर खाने की जरूरत नही है। तुम तो बडे बाप की बेटी हो। किसी भी लेडी डाक्टर के पास चली जाना। एवरी थिंग विल बी ओ० के०।"

और फिर कामेश्वर शैलजा की ओर देखे बिना ही तेजी से फाटक की ओर चल दिया।

शैलजा अपने दुर्भाग्य पर आँसू बहाती रही।

जब वह घर पहुँची तब निराशा, पीडा और चिन्ता मे उसका मुख मलीन था। शकुन बरामदे मे ही थी। शैलजा लडखडाती हुई अपने कमरे मे चली गयी। शकुन ने सोचा, उसकी तबियत ज्यादा खराब है। वह भी उसके कमरे की ओर गयी। कमरे म पहुँच कर उसने देखा कि शैलजा पलँग पर पडी सुबक-सुबक कर रो रही है।

शैलजा मन-ही-मन किसी आग मे जल रही है, यह शकुन से छिपा न था। उसे बिलखते देखकर उसका भी मन भर आया। वह पलँग पर बैठकर शैलजा की पीठ पर स्नेह से हाथ फेरने लगी।

शकुन के स्पर्श से शैलजा छटककर दूर हट गयी। उसने तकिये मे मुह छिपा लिया।

"क्या बात है, शैल?" शकुन ने भीगे स्वर मे पूछा।

"मै पापिन हूँ। मैने बहुत बडा पाप किया है। मुझे न छुओ, जीजी, मुझे न छुओ।" कहकर वह फिर बिलखने लगी।

शैलजा सदा शकुन को 'सिसी' कहकर ही सम्बोधित करती थी। उसके मुख से 'जीजी' सुनकर शैलजा ने चौककर उसकी ओर देखा।

हृदय का स्नेह उमड पडा और उसने शैलजा का मस्तक चूमकर साश्रु-नयनो से कहा—"शैल! तुम्हे क्या दुःख है? क्या पाप किया है तुमने? अपनी जीजी को बताओ।"

"किस मुह से बताऊँ, जीजी! मै कुल-कलकिनी हूँ। मै मै दुनिया को अपना मुह नही दिखा सकती।" शैलजा की गोद मे अपना मुख छिपाकर शैलजा सिसकती हुई बोली।

शकुन ने अपने अचल से उसके आँसू पोछे। फिर अपने हाथ से उसका मुख ऊपर उठाकर बोली—"मेरी अच्छी शैल! अपनी जीजी से कुछ न छिपाओ? क्या बात है?"

और फिर शैलजा ने रुक-रुककर रुद्धकठ से शकुन को अपने मन की व्यथा बता दी। उसके बाद वह फिर सिसक कर बोली—"अगर डैडी को मालूम हो गया तो क्या होगा? जीजी, मुझे बचाओ! मै अधी थी, पागल थी!"

शैलजा की बात सुनकर शकुन स्तब्ध रह गयी। शैलजा इतनी भारी भूल कर बैठी होगी इसकी वह कल्पना तक न करती थी। वह गभीर होकर विचारो के गहरे सागर मे डूबने-उतराने लगी।

शकुन के गभीर मौन का अर्थ शैलजा ने कुछ और ही समझा। आँखों से आँसू पोछकर धीमे स्वर मे बोली—"क्या तुम्हे भी मुझसे नफरत हो गयी, जीजी! होनी ही चाहिए! मै पापिन जो हूँ! अब . अब . आत्म घात करने के अलावा और कोई रास्ता ही नही है।"

शकुन के धैर्य का बाँध टूट गया। उसकी आँखो से आँसू की धार बहने लगी। शैलजा को सीने से लगाकर रुद्धकठ से बोली—"ऐसा न कहो शैल। तुम चिन्ता न करो। सब ठीक हो जायेगा। मगर.... मगर....तुम यह कर क्या बैठी?"

शकुन के प्रश्न का उत्तर शैलजा ने आँसुओ की मूक भाषा मे दिया।

शैलजा उसकी पीठ सहलाती रही। कुछ देर बाद धीमे स्वर मे बोली—"इस अवस्था मे अधिकतर लडकियाँ भावुकता मे पड़कर भूल

कर बैठती हूँ।" फिर रुक कर कहा—"दोषी तुम नहीं, कामेश्वर है।, उसने प्यार के पवित्र अंचल पर वासना की कालिख पोत दी है। खैर तुम निराश न हो। मैं सब कुछ ठीक कर लूँगी।"

शैलजा ने कृतज्ञता से उसकी ओर देखा।

शकुन उठ कर गैलरी में गयी जहाँ फोन रक्खा था।

× × ×

ललित के सामने खुली तो फायल पड़ी थी पर उसका ध्यान कहीं और था। वह सोच रहा था सरला के बारे में, दया के बारे में, मुन्ना-मुन्नी के बारे में! सरला के जाने के बाद घर में वैसे ही उदासी छा गयी थी। जब दया भी मैके चली गयी तब तो घर जैसे काटने को दौड़ने लगा। मील से जब वह घर जाता तब न तो मुन्ना ही आकर उससे चिपट जाता और न मुन्नी की ही किलकारी सुनाई देती। उसे लगता जैसे वह समाधि के अन्दर जीवित ही दबा दिया गया है।

वह अपने विचारों में डूबा था। फायल मेज पर खुली पड़ी थी। जब चपरासी ने सामने आकर सलाम किया तब भी उसका ध्यान न टूटा।

"हुजूर, आपका फोन है।" चपरासी ने विनम्र स्वर में कहा।

"हूँ! क्या कहा?" चौंक कर ललित बोला।

"आपका फोन है।" कहकर चपरासी चला गया।

ललित उठकर फोन के पास गया। चोंगा उठाकर उसने कहा—"हलो! मैं ललित बोल रहा हूँ।"

"मैं शकुन बोल रही हूँ।" उधर से आवाज आयी।

"वह तो मैं स्वर से ही पहचान गया। कहिये, क्या आज्ञा है?" ललित चिढ़ाते हुये बोला।

"तुमसे बहुत जरूरी काम है। शाम को मील से सीधे यहीं आना।"

"जो आज्ञा। और कुछ?"

"और बातें यहीं होंगी। मैंने बाबू जी से कह दिया है। तुम उन्हीं के साथ कार पर चले आना।" शकुन का संगीतमय स्वर आया।

"कार न होती तब भी सिर के बल चलकर आता" ललित ने हँसकर कहा और फिर चोगा रख दिया।

अपने स्थान पर बैठकर ललित सोचने लगा कि ऐसा कौन सा आवश्यक काम आ गया है जो शकुन ने बुलाया है। वह ध्यान दौड़ाता रहा, पर काफी सिर खपाने के बाद भी उसकी समझ में कुछ न आया।

जब रायबहादुर के अर्दली ने आकर सलाम की तब उसकी विचार-धारा भंग हुई।

"क्या है?" उसने दृष्टि उठाकर पूछा।

"साहब जा रहे हैं। उन्होंने आपको सलाम भेजा है।" अर्दली ने कहा।

"ओह! मैं तो भूल ही गया था।" कहकर ललित ने अपना झोला उठाया और वह तेजी में चल दिया।

मार्ग में रायबहादुर ने मुस्कराकर कहा—"मैंने इसी महीने से तुम्हारे वेतन में बीस रुपये बढ़ा दिये हैं।"

"मेनी मेनी थैंक्स सर।" प्रसन्न होकर ललित ने अपनी कृतज्ञता प्रकट की।

"थैंक्स शकुन को देना।" कहकर रायबहादुर हँस पड़े।

ललित को यह समझते देर न लगी कि शकुन ने ही रायबहादुर से कहकर उसका वेतन बढ़वाया है।

कार जब कोठी पर पहुँची तब शकुन बरामदे में टहल रही थी। जैसे ही कार पोर्टिको में जाकर रुकी वैसे ही शकुन ने आकर द्वार खोल दिया।

"क्या बात है, बेटी? आज बहुत सेवा कर रही हो!" कार से उतर कर रायबहादुर हँसते हुये बोले।

शकुन लजा गयी।

"जाइये, बाबूजी! आप समझते हैं कि मैं स्वार्थिन हूँ।" रूठकर शकुन बोली।

"अरे, मैं तो हँस रहा था! पगली कहीं की।" कहकर रायबहादुर

अपने निजी कक्ष की ओर बढ गये।

"पहले तो मैं हुजूर को धन्यवाद देता हूँ।" कार से उतर कर ललित बोला। "क्योंकि हुजूर ने मेरी तनख्वाह बढवा दी है।"

"मैं कौन होती हूँ बढवाने वाली। धन्यवाद देना है तो बाबूजी को दो।" कृत्रिम गभीरता से शकुन बोली और वह बरामदे मे पडी आराम कुर्सी पर बैठ गयी।

"उन्होंने हुजूर को धन्यवाद देने के लिये कहा है।" शकुन के पास पहुचकर ललित बोला। "खैर, हाँ, हुजूर ने किस लिए याद फरमाया है?"

"तुम्हे मेरे साथ बम्बई चलना है।" कहकर शकुन खडी हो गयी।

ललित समझा, शकुन परिहास कर रही है। हंसकर बोला—"बस बम्बई! मै तो समझा था विलायत चलना होगा।"

"मै हंसी नही कर रही हूं, ललित! शीघ्र ही चलेगे।" शकुन ने गभीर स्वर मे कहा।

"कब?" ललित ने भी गभीरता से पूछा।

"कल। तुम जरा यही बैठो। मै अभी बाबूजी से बात किये लेती हूं।" कहकर वह रायबहादुर के कमरे की ओर चल दी।

ललित बरामदे मे टहलता रहा और सामने की क्यारियो मे खिले रग-बिरगे फूलो को देखता रहा।

शकुन रायबहादुर के पास जाकर लाड भरे स्वर मे बोली—"बाबूजी! हमारा यहा मन नही लगता।"

"तुमसे कहता हू कि सुबह-शाम घूम आया करो, मगर तुम सुनती ही नही।" रायबहादुर स्नेह सिक्त स्वर मे बोले।

"कहा घूम आया करू बाबूजी?" शकुन ठुनक कर बोली। "कानपुर मे घूमने की कोई जगह है भी। हर तरफ धूल और धुआ।"

"गर्मियो मे काश्मीर या मसूरी चली जाना।"

"गर्मी तो अभी दूर है। तो तब तक यहाँ मेरा दम घुट जायेगा।" और शकुन की मुख मुद्रा देखकर रायबहादुर को भय हुआ कि सचमुच

ही उसका दम घुटा जा रहा है।

"तो फिर . ।" घबराहट के मारे उनका वाक्य अधूरा ही रह गया।

"मैं बम्बई जाऊँगी, बाबूजी! शैल की भी तबियत ठीक नही रहती है। उसका भी मन बहल जायेगा।"

प्राणो सी प्रिय पुत्री के आग्रह को टालने का साहस रायबहादुर मे मे न था। वे शकुन के सिर पर स्नेह से हाथ फेरते हुए बोले—"चली जाना, बेटी!" फिर रुककर झिझकते हुए कहा—"मगर जाओगी किसके साथ? मुझे तो ...।"

"आप उसकी चिन्ता न करे, बाबूजी।" रायबहादुर के वाक्य को बीच मे ही काट कर शकुन बोली। "हम लोग ललित के साथ चली जायेगी मैने उससे बात कर ली है।"

"अच्छा, तो इसीलिए उसे बुलाया था।" जोर से हँसकर रायबहादुर बोले। "कब जा रही हो?"

"कल रात की गाडी से।"

"मगर इतनी जल्दी सीटे रिजर्व कैसे हो सकेगी? दो-चार दिन बाद चली जाना।" रायबहादुर ने धीमे स्वर मे सुझाव दिया।

"आप बस हाँ कह दीजिये। बाकी सब मै कर लूगी, बाबूजी।" शकुन ने दुलार भरे मीठे स्वर मे कहा।

"अच्छा बाबा, चली जाना! बस, अब तो खुश हो?"

और किलकारियाँ भरती हुई शकुन ललित के पास आ गयी। उसकी प्रसन्नता देखकर ही ललित समझ गया कि रायबहादुर ने आज्ञा दे दी है।

"मैने बाबूजी को राजी कर लिया है। कल रात की गाडी से चलना है। तुम तैयारी कर रखना।" प्रसन्न स्वर मे शकुन बोली।

"मुझे क्या तैयारी करनी है? जो दो-चार फटे-पुराने कपडे है उन्हे एक झोले मे डाल लूँगा।" हँसकर ललित बोला।

"कपडो की चिन्ता न करो। बम्बई मे सिले-सिलाये कपड़े बहुत

मिलते हैं।" खिलखिलाकर हँसती हुई शकुन बोली।

"अच्छा, अब चलता हूँ। सोचता हूं, जरा सरला से मिल आऊँ।" कहकर ललित अपना झोला लटकाये चल दिया।

शकुन ने फोन उठाकर 'इन्क्वायरी' से बात की। जब उसे ज्ञात हुआ कि कल रात की गाड़ी में तीन सीटें रिजर्व हो सकती हैं तब वह हर्ष से झूम उठी।

ड्रायवर को रुपये देकर तथा प्रथम श्रेणी के तीन टिकट लाने और सीटें सुरक्षित करवाने का आदेश देकर वह शैलजा को सूचित करने के लिये उसके कमरे में गयी।

शैलजा ने अनुभव किया कि उसकी साँस की घुटन बहुत कुछ कम हो गयी है। आनन्द विभोर होकर वह शकुन के गले से लिपट गयी।

रात को सरला का फोन आया।

"भैया को बम्बई ले जा रही हो?" उसने शरारत के स्वर में पूछा।

"हाँ! मगर तुम चिन्ता न करना। उन्हे हमारे साथ कोई कष्ट न होगा।" शकुन ने भी मजाक मे कहा।

"जब आपके साथ जा रहे हैं तब चिन्ता कैसी?" सरला का स्वर आया। "उन्हे आपके हाथों में सौंपकर मैं एकदम निश्चिन्त हूँ।" और फिर सरला की हँसी की आवाज शकुन के कानों में गूंज गयी।

काश! शकुन की आँखों की लाज और चेहरे की लाली को सरला देख पाती!

"शायद आप मेरी बात का बुरा मान गयी है।" जब शकुन कुछ देर मौन रही तब सरला ने कहा।

इस बार शकुन मौन न रह सकी। हँसकर बोली—"जब तुम्हे मुझ पर इतना विश्वास है तब भला तुम्हारी बात का बुरा कैसे मान सकती हूँ।'

"अच्छा, अगर आप मुह मीठा करायें तो एक शुभ समाचार सुनाऊँ!" सरला का स्वर आया।

"क्या समाचार है ?" शकुन ने उत्सुकता से पूछा।

"कमल का संग्रह छप गया है।"

"सच ?" शकुन ने प्रसन्नता से पूछा।

"हाँ ! एक प्रति मैंने भैया को दे दी है ताकि आप लोगों की यात्रा सुगम हो जाये।" सरला ने कहा और इससे पहले कि शकुन धन्यवाद दे सके उसने चोगा रख दिया।

शकुन हर्षातिरेक से फूली जा रही थी। उसने सोचा कि शैलजा को भी यह शुभ समाचार सुना दे। वह तत्काल शैलजा के कमरे में गयी। वह समझती थी कि इस समाचार से शैलजा भी प्रसन्न होगी क्योंकि बाबू श्यामसुन्दर को संग्रह देने का प्रस्ताव कमल के सामने सर्वप्रथम उसी ने रक्खा था।

किन्तु, उसकी आशा के विपरीत, जब शैलजा प्रसन्न होने के बजाय उदासीन रही तब शकुन आश्चर्य में पड़ गयी।

"मानव-हृदय भी एक विचित्र पहेली है।" उसने मन-ही-मन कहा।

बीस

कमरे की दीवार-घडी न दस बजाये।

सरला ने करवट बदली और फिर कमल का काव्य-सग्रह पढने मे लीन हो गयी। उसकी आँखों मे नीद का नाम तक न था।

पिछले दिन बूँदा-बाँदी हुई थी। अब बादल तो छट गये थे पर दिन भर तेज और सूखी हवा चलती रही थी। इसीलिए ठड बढ गयी थी। मसूरी और नैनीताल की पहाडियो पर हिमपात भी हुआ था। फलस्वरूप गलन भी काफी थी। नौकर-चाकर अपने क्वार्टरो मे दुबके पडे थे। गोमती भी खा-पीकर अपने कमरे मे चली गयी थी। कामेश्वर अभी क्लब से लौटा नही था। उसकी प्रतीक्षा करते-करते महराजिन चौके मे ही चूल्हे की गर्मी पाकर ऊँघ गयी थी। बाबू श्यामसुन्दर आवश्यक कार्य से लखनऊ गये हुये थे।

सरला कमल की पुस्तक कई बार पढ चुकी थी। उसे उसके गीतों से शक्ति मिलती थी, प्रेरणा मिलती थी। उस रात को भी वह जब-खा-पीकर अपने कमरे मे गयी तब एकान्त घडियो को काटने के लिए उसने कमल की पुस्तक उठा ली।

साढे दस बजे उसे कामेश्वर की आवाज सुनाई दी। वह भारी स्वर

मे महराजिन से कह रहा था—"मुझे भूख नही है। तुम सोओ जाकर।"

कामेश्वर महीने मे बीस दिन रात का भोजन बाहर ही करता था। सरला उसके स्वभाव से परिचित हो चुकी थी। उसने कामेश्वर की बात पर कोई विशेष ध्यान नही दिया। वह फिर पढने मे तल्लीन हो गयी।

कुछ देर बाद जब कामेश्वर ने उसके कमरे का द्वार थपथपाया तब उसकी तल्लीनता भग हुई।

"कौन है ?" उसने चौककर पूछा।

"मे हूँ कामेश्वर। जरा दरवाजा खोलिये।" कामेश्वर ने भर्राये स्वर मे बाहर से कहा। सरला को उसका स्वर विचित्र सा लगा।

"क्या काम है ?" पुस्तक मेज पर रखकर पलँग से उठते हुये पूछा।

"खोलिये तो !" कामेश्वर के स्वर मे तेजी आ गयी।

सरला के मन मे आया कि सुबह बात करने के लिए कह दे, किन्तु फिर सोचा न जाने क्या काम हो ! वह धीरे-धीरे द्वार की ओर बढी। तभी उसके मन ने कहा—कामेश्वर नीच प्रकृति का आदमी है। इतनी रात को उसे कमरे मे आने देना ठीक नही। न जाने क्या धृष्टता कर बेठे। चलते-चलते उसके पैर रुक गये।

"जल्दी खोलिये। बहुत जरूरी काम है।" बाहर से कामेश्वर ने उतावली के साथ कहा और फिर उसने द्वार पर दस्तक दी।

सरला की बुद्धि ने कहा—अपनी कायरता दिखाना ठीक नही। क्या तुम अपनी रक्षा स्वय नही कर सकती ? और फिर घर मे और लोग तो है ही। एक ऊँची आवाज ही सब को बुलाने के लिए काफी होगी।

और तब सरला ने काँपते हाथ से द्वार खोल दिया।

कामेश्वर अन्दर आकर कुर्सी पर बैठ गया।

उसके कमरे मे आते ही सरला को अजीब सी दुर्गन्ध लगी। उसने नाक मे साडी का अचल लगाकर खडे-खडे ही पूछा—"क्या काम है ?"

"बताता हूँ। ऐसी जल्दी भी क्या है। आप बैठ तो जाइये।" कहकर कामेश्वर ने सिगरेट सुलगायी।

कामेश्वर मदिरा-पान करके आया था, पर उसने इतनी नही पी थी कि होश-हवास न हो। उसकी आँखो के डोरे लाल थे और चेहरा भी तमतमा रहा था।

मदिरा की दुर्गन्ध और धूँएँ के कारण सरला का दम घुटने लगा। वह जरा तेज स्वर मे बोली—"बताओ, क्या काम है ! मुझे नीद लगी है।"

"मेरी आँखो की नीद मुझसे रूठ गयी है।" कहकर कामेश्वर उठा और उसने कमरे का द्वार अन्दर से बन्द कर लिया।

सरला का दिल जोर से धड़कने लगा। वह सिहर कर द्वार की ओर बढती हुई बोली—"द्वार क्यो बन्द कर दिया ?"

कामेश्वर द्वार और उसके बीच मे आ गया। हँसकर बोला—"ठडी हवा चल रही है। आप क्या डर गयी ?"

सरला वास्तव मे डर गयी थी। पर अपने भय को छिपाने की चेष्टा करती हुई बोली—"मै क्यो डरूँगी ! कमरे मे धूआ भर रहा है इसीलिये ।"

"यह लीजिये। सिगरेट बुझाये देता हूँ।" कहकर कामेश्वर ने सिगरेट बुझा कर बाहर फेंक दी। और फिर सीने पर हाथ रखकर बोला। "काश ! इसी तरह मेरे दिल की आग भी बुझ सकती।"

सरला काँप कर पीछे हट गयी। उस भयकर शीत मे भी उसके पसीना आ गया। भय के कारण उसका कठ सूख गया।

"न जाने क्यो मै कभी भी आपको मामी के रूप मे न देख सका।" कामेश्वर आगे बढ कर बोला। "और न जाने क्या सोचकर आपने एक अधेड से शादी की।"

सरला का भय क्रोध मे परिवर्तित हो गया। उसकी आँखे लाल हो गयी, चेहरा तमतमा गया और नथुने फड़कने लगे वह दाँतो से होठ काटती हुई तेज स्वर मे बोली—"निकल जाओ मेरे कमरे से अभी। मै नही जानती थी तुम इतने नीच हो।"

"आप तो नाराज हो गयी।" कामेश्वर कोमल स्वर मे बोला। "मै तो आपकी भलाई चाहने वाला हूँ। बुढ़ापे के साथ रहकर जवानी भी

बूढी हो जाती है। जवानी के फूल को खिलने के लिए जवानी का ही खून चाहिए !"

अपनी बात पूरी करके कामेश्वर आगे बढा।

"अगर एक कदम भी आगे बढाया तो अच्छा नही होगा। निकल जाओ यहाँ से। नही तो मै अभी चीखती हूँ।" कहकर सरला ने चीखने के लिए मुह खोला।

कामेश्वर डर कर पीछे हट गया। उसे विश्वास हो गया कि यदि वह कमरे के बाहर तुरन्त नही गया तो सरला सचमुच ही सबको इकट्ठा कर लेगी।

"जाता हूं।" द्वार की ओर बढकर वह धीमे स्वर मे बोला। "मगर एक बार फिर सोच लीजिये। जवानी बार-बार नही आती।"

"तुम जानवर से भी गये बीते हो। तुम्हे यह तक मालूम नही कि मामी मां के समान होती है।" सरला ने कठोर स्वर मे कहा। "भलाई इसी मे है कि फौरन यहाँ से चले जाओ। अगर फिर कभी ऐसी धृष्टता की तो अच्छा न होगा।"

कामेश्वर समझ गया कि सरला साधारण मिट्टी की नही है, उसमे फौलाद की दृढता है। यहाँ दाल गलना मुश्किल ही नही असम्भव है। वह द्वार खोलने के लिए चुपचाप आगे बढा।

द्वार खोलकर वह घूमकर खडा हो गया और धीमे स्वर मे बोला—"आज की सभ्यता सिर्फ ऊपरी अच्छाई की माँग करती है। आप बाहर से अच्छी होने के साथ-साथ अन्दर से भी अच्छी बनने की कोशिश करती है। यही आपकी भूल है। मुझे आपके हाल पर तरस आता है। आपने तो भाई के लिए इतना बडा त्याग किया और वह मालिको की बेटियो के साथ गुलछर्रे उडाता फिरता है।"

"क्या बक रहे हो ?" सरला फुकार कर बोली।

"सत्य कडुवा होता ही है। और अगर मै आपको उन लोगो के बम्बई जाने का सही कारण बता दूँ तब तो शायद आपको चक्कर आ

जाए। बताऊँ ?" कामेश्वर कुटिल स्वर में बोला।

"मैं कुछ नहीं सुनना चाहती।" सरला ने चीखकर कहा।

"मगर मैं तो बताना अपना धर्म समझता हूँ।" कामेश्वर आगे बढ़कर धीमे स्वर में बोला। "वे लोग शैलजा का गर्भपात कराने गये हैं। समझी ? अबारशन ! ए, बी, ओ, आर, टी, आई, ओ, एन !" और कामेश्वर तेजी से बाहर चला गया।

सरला ने दौड़कर अन्दर से द्वार बन्द कर लिया।

फिर वह न तो पुस्तक ही पढ़ सकी और न सो ही सकी। रात भर वह पलँग पर करवटें बदलती रही और रह-रहकर कामेश्वर के अन्तिम शब्द उसके कानों में गूँजते रहे। और वह बार-बार यह कहकर अपने मन को समझाने की चेष्टा करती रही कि यह असत्य है, यह असम्भव है, कामेश्वर झूठ बोलता है !

× × ×

सुबह जब कामेश्वर सो ही रहा था तभी गोमती चाय लेकर उसके कमरे में पहुँच गयी। चाय की ट्रे मेज पर रखकर उसने कामेश्वर को जगाया।

कामेश्वर ने आँखें खोलकर एक बार गोमती की ओर देखा और फिर करवट बदल कर सो गया। गोमती झुँझला गयी। उसने रजाई हटाकर तेज स्वर में कहा—"नौ बज गये हैं, तेरी नींद अभी तक पूरी नहीं हुई ?"

रजाई हट जाने पर वह उठकर बैठ गया। आँखें मल कर लाड से बोला—"क्या है, माँ ! तुम तो मुझे सोने भी नहीं देती।"

"हाथ-मुह धोकर चाय पी ले।" गोमती ने आदेश दिया।

कामेश्वर ने उसकी आज्ञा का पालन किया।

जब गोमती चाय की ट्रे लेकर जाने लगी तब कामेश्वर धीमे स्वर में बोला—"बैठ जाओ, माँ ! मुझे तुमसे जरूरी बात करनी है।"

ट्रे मेज पर रखकर गोमती कामेश्वर के पास ही बैठ गयी।

"माँ, मुझे तो सरला का चरित्र अच्छा नहीं लगता" कहकर कामेश्वर

ने घृणा से मुह बिगाड लिया।

"क्या बात है ?" कामेश्वर के पास खिसककर गोमती ने उत्सुकता से पूछा।

"यह शक तो मुझे पहले ही था कि कमल और उनके बीच मे कोई बात है। मगर कल कल तो मुझे एकदम निश्चय हो गया।"

कामेश्वर की बात ने गोमती की जिज्ञासा जगा दी। वह तो यह चाहती ही थी कि सरला के विरुद्ध बाबू श्यामसुन्दर के कान भरने के लिए कोई मसाला मिले। उसने दबे स्वर मे कामेश्वर से पूछा—"क्या बात हुई, कुछ बता तो।"

"क्लब से लौटकर कल रात को मै उनके कमरे मे गया तो देखा वे कमल की किताब अपने सीने से लगाये बैठी लेटी है और धीमे स्वर मे कुछ बुदबुदा रही है।" कामेश्वर ने सिर झुका कर कहा।

"तू क्यो गया था उनके कमरे मे ?" गोमती ने कामेश्वर की ओर गूढ दृष्टि मे देखकर पूछा।

"तुम तो बाल की खाल निकालती हो माँ।" कामेश्वर रूठकर बोला। एक क्षण रुककर फिर अत्यन्त धीमे स्वर मे कहा—"मुझे देखकर वे उठ बैठी। उन्होने कमरे का दरवाजा अन्दर से बन्द कर लिया। फिर . फिर उन्होने मुझसे ऐसी बाते की जिन्हे मै अपने मुह से नही कह सकता, माँ। मेरा तो दम घटने लगा। बडी मुश्किल से जान बचा कर भाग पाया। म उन्हे माँ के रूप मे देखता था और वे वे मुझसे अनचित ।" और फिर कामेश्वर ने निश्वास छोडकर अपना वाक्य अपूर्ण ही छोड दिया।

गोमती की आँखे हर्ष से चमक उठी। विश्वास के स्वर मे बोली—"मै तो पहले दिन ही समझ गयी थी कि वह कुलटा है। उसने पैसे के लिए भैया से ब्याह किया है। आने दो लखनऊ से भैया को। एक-एक बात न कहूँ तो मेरा नाम गोमती नही।" और फिर गोमती चाय की ट्रे उठाकर तेजी से बाहर चली गयी।

कामेश्वर के अधरो पर कुटिल मुस्कान खेल गयी।

गोमती उत्सुकता से बाबू श्यामसुन्दर के लौटन की प्रतीक्षा करती रही और जैसे ही दोपहर को वे आये, वह उनका हाथ पकड़कर अपने कमरे में ले गयी। सरला ने देखा, पर वह कुछ समझ न सकी।

गोमती ने अन्दर पहुँच कर द्वार अन्दर से बन्द कर लिया।

"क्या बात है ?" बाबू श्यामसुन्दर परेशानी से बोले।

"भैया! अब तो मुझे इस जजाल से मुक्त कर दो।" आँखो मे आँसू भर कर गोमती बोली। "मुझसे अब इस घर मे नही रहा जायेगा। मुझे काशी भेज दो, भैया।"

बाबू श्यामसुन्दर समझे शायद सरला से कुछ कहा-सुनी हो गयी होगा इसीलिए गोमती खिन्न और दुखी है। वे धीमे स्वर मे बोले--"क्या बात हुई ? क्या क्या सरला ने कुछ कह दिया है ?"

ओर गोमती उत्तर देने के बजाय फूट-फूटकर रोने लगी।

बाबू श्यामसुन्दर घबरा गये। समझाते हुये बोले--"मै सरला को समझा दूँगा। रोना बन्द करो।"

"मै अपने लिए नही, आपके लिए रो रही हूँ।" गोमती सिसक कर बोली। "भैया! न जाने किस कुघड़ी मे आप उसे ब्याह कर लाये। वह एक दिन कुल के नाम पर बट्टा लगा देगी।"

बाबू श्यामसुन्दर की छाती पर जोर का मुक्का पड़ा। वे फटी आँखो से गोमती की ओर देखने लगे।

गोमती ने समझ लिया कि चोट ठीक जगह पर हुई है। "भैया! सरला कुलटा है, पापिन है। उसे आपसे नही, आपके पैसे से प्यार है।" गोमती ने फिर कठोर आघात किया।

इस आघात से बाबू श्यामसुन्दर तिलमिला उठे। वे चीखकर बोले--"गोमती! यह क्या कह रही हो तुम ?"

"अभी आपको विश्वास नही होता मगर जब एक दिन रुपया-पैसा लेकर किसी के साथ भाग जायेगी तब आप समझेगे कि गोमती ठीक कहती

थी। मालूम है कल उसने क्या किया?" कहकर गोमती ने अजीब दृष्टि से बाबू श्यामसुन्दर की ओर देखा और फिर घृणा से बोली—"कामेश्वर के साथ मुँह काला करना चाहती थी। जो अपने भान्जे के साथ ।"

"चुप रहो।" बाबू श्यामसुन्दर गरज कर बोले। "मैं जानता हूँ तुम लोग उसे क्यों बदनाम करने पर तुले हो। मगर मुझे सरला पर विश्वास है, पूरा विश्वास है।"

बाबू श्यामसुन्दर ने झटके के साथ द्वार खोला और वे बाहर चले गये गोमती अवाक होकर खुले हुये द्वार की ओर देखती रही।

"उसका जादू पूरी तरह चढ़ गया है।" गोमती बुदबुदायी।

बाबू श्यामसुन्दर जिस विश्वास के साथ गोमती के कमरे से बाहर निकले वह स्थिर न रह सका। दिन भर वे बेचैन रहे। गोमती का स्वर उनके कानों में गूँजता रहा; सरला और कामेश्वर के चित्र उनकी आँखों के सामने घूमते रहे। उनकी दृढ़ता धीरे-धीरे कम होने लगी। उन्हें याद आया—वे एक दिन सरला के साथ माल रोड पर जा रहे थे। पास से दो विद्यार्थी निकले। एक ने कहा—"खूसट को छोकरी तो बढ़िया मिली है।" दूसरे ने उत्तर दिया—"अबे चुप! उसकी बेटी मालूम होती है।" बाबू श्यामसुन्दर के कानों में दूसरे विद्यार्थी की आवाज फिर गूँजने लगी। उस दिन उसकी बात पर वे मन-ही-मन हँसे थे पर अब वे कुछ और ही सोच रहे थे। सचमुच सरला और उनका क्या जोड़ है? कहाँ अठारह साल की युवती और कहाँ पैंतालीस साल का प्रौढ़! वह तो उनकी पुत्री या पुत्रवधू की अवस्था की है! उसको पत्नी बनाकर जीवन की सबसे बड़ी भूल की है, उसके साथ भयकर अन्याय किया है। माना, वह उन्हें सच्चे मन से प्यार करती है, गोमती का लाँछन भी झूठा है पर इससे क्या होता है? यौवन और बुढ़ापे का क्या साथ है? एक सुबह का उदय होता हुआ रवि तो दूसरा शाम का अस्त होता हुआ सूरज!

और रात को जब वे घर पहुँचे तब सरला को लगा कि वे काफी थके

हुये हैं। वे ठीक से भोजन भी न कर सके।

खा-पीकर सरला जब कमरे मे पहुँची तब उसने देखा कि बाबू श्याम-सुन्दर पलँग पर लेटे हुये निर्निमेप दृष्टि मे छत की ओर देख रहे हैं।

"तबियत ठीक नही है क्या।" बाबू श्यामसुन्दर के पास बैठकर उनके मस्तक पर हाथ फेरती हुई सरला ने मीठे स्वर मे पूछा।

"हाँ, हाँ, बहुत थक गया हूँ। बत्ती बुझा दो मुझे नीद आ रही है।" बाबू श्यामसुन्दर ने जमुहाई लेकर कहा। फिर मुह दीवार की ओर करके उन्होने आँखे बन्द कर ली।

सरला बत्ती बुझाकर जब अपने पलँग पर लेटी तब वह भी बेचैन थी। वह आँसू भरी आँखो मे उस अंधेरे मे भी पतिको करवटे बदलते देखती रही। वह सोच रही थी, गोमती ही उनकी परेशानी का कारण है। जब वे लखनऊ मे आये थे तब तो प्रसन्न थे। गोमती से बात होने के बाद से ही वे गभीर है उदास है, चिन्तित हैं। न जाने क्या कह दिया है गोमती ने ?

फिर उसने सोचा कि रात को कामेश्वर ने जो धृष्टता की है उसमे उन्हे अवगत करा देना चाहिये, नही तो सम्भव है उसका साहस बढता जाये। तभी उसकी बुद्धी ने शका की—कही ऐसा न हो कि वे समझे कि मै झूठी शिकायत कर रही हूँ जिससे घर मे फूट पड जाये। उसके मन ने कहा—वे ऐसा कभी नही सोच सकते। उन्हे मझ पर विश्वास है, पूरा विश्वास है।

"मुझे सरला पर विश्वास है, पूरा विश्वास है। गोमती झूठी है, कामेश्वर झूठा है, सब झूठे है।" उसे बाबू श्यामसुन्दर का धीमा स्वर सुनाई दिया। विद्युत-वेग से उठकर उसने बत्ती जला दी। बाबू श्यामसुन्दर पसीने से तर थे। उनकी आखे बन्द थी और वे सोते-सोते बडबडा रहे थे।

अपने प्रति पति का दृढ विश्वास देखकर सरला का हृदय गर्व और हर्ष से भर गया। वह बाबू श्यामसुन्दर के पैरो के पास बैठ गयी भावावेश मे आकर उसने उनके चरणो पर अपना मस्तक नवा दिया और उसकी आँखो से हर्ष के आसू बहने लगे।

बाबू श्यामसुन्दर ने चौक कर आँखे खोल दी। सरला को अपने पैरो

पर सिर रखकर रोते देख वे उठकर बैठ गये।

"अरे, रो क्यो रही हो? क्या. . . . क्या तुम्हे कुछ कष्ट पहुँचा है!" बाबू श्यामसुन्दर ने सरला का मुह ऊपर उठाकर पूछा।

सरला ने उनके पैर कसकर छाती से लगा लिये और वह फूट फूट कर रोती रही।

बाबू श्यामसुन्दर धीरे से अपने पैर खीचने की चेष्टा करते हुये बोले—"तुम्हे क्या हो गया है, सरला?"

"भगवान से प्रार्थना कर रही हूँ कि इन्ही चरणो की छाया मे मेरे प्राण निकले।" सरला ने पैरो को आँखो से लगाकर सिसकते हुये कहा।

बाबू श्यामसुन्दर ने सरला का हाथ पकडकर अपने निकट खीच लिया। अपने हाथ से उसके आँसू पोछे और फिर आर्द्र कठ से बोले—"सच बताना, सरला, तुम्हे यहाँ कोई कष्ट तो नही है? जो जो कुछ तुमने अपने भाई के लिए किया है उसपर कभी पछताने का अवसर तो नही आया है?"

"नही!" सरला ने दृढता से कहा।" विश्वास करिये, मैने जो कुछ किया है उसपर मुझे गर्व है। हाँ, अगर आपको मुझसे कोई शिकायत हो तो बता दीजिये।"

'नही, मुझे तुमसे कोई शिकायत नही है।" बाबू श्यामसुन्दर ने प्यार भरे कठ से कहा।

"आपको न हो, पर मै अपने को अपराधिनी मानती हूँ।" सरला गभीर स्वर मे बोली। "मैने आपको अधकार मे रखकर भारी अपराध किया है।"

बाबू श्यामसुन्दर के हृदय के कोने से आवाज आयी—तब क्या गोमती सच कहती थी? क्या . . .

"मुझे आपको पहले ही बता देना चाहिए था। बात यह है कि . कि मुझे कामेश्वर का चरित्र अच्छा नही लगता।" तभी सरला बोल पडी।

"मुझे पहले से ही मालूम है। अगर वही ठीक होता तो. . . तो . ।"

और वे प्रयत्न करके भी अपनी बात पूरी न कर सके।

"पहले भी कई बार उसने मुझसे हँसी-मजाक करने की चेष्टा की पर मैं टालती रही। मगर कल . कल रात को उसका साहस सीमा को पार कर गया। मेरे कमरे में आकर उसने . ।" सरला ने बाबू श्यामसुन्दर को पूरी बात बता दी। हाँ, कामेश्वर ने शैलजा पर जो लाछन लगाया था उसे उसने गुप्त ही रक्खा।

"ओह! उसकी नीचता यहाँ तक बढ़ गयी है! अब समझ में आया।" बाबू श्यामसुन्दर ने धीमे और गंभीर स्वर में कहा। एक क्षण रुककर वे फिर बोले—"जानती हो, गोमती ने मुझसे क्या कहा? उसने तस्वीर का रुख ही बदल दिया। वह तुम्हे दोषी बता रही थी, तुम्हारे चरित्र पर लाछन लगा रही थी।"

"तभी आप चिन्तित थे। शायद आपको मुझ पर सन्देह हो गया था।" सरला ने बाबू श्यामसुन्दर की ओर देखकर कहा।

"नही! मैंने गोमती से कहा कि मुझे सरला पर विश्वास है, पूरा विश्वास है।" बाबू श्यामसुन्दर ने प्यार से सरला की पीठ पर हाथ फेरते हुये कहा।

"यही आप अभी सपने मे भी कह रहे थे।" कहकर सरला मुस्करा पड़ी।

"अगर तुम पहले ही बता देती कि कामेश्वर तुमसे धृष्टता करता है तो मैंने कभी का उसे घर से निकाल दिया होता। कोई बात नही! कल से गोमती और कामेश्वर के लिए इस घर मे जगह नही रहेगी।" बाबू श्यामसुन्दर के स्वर मे निश्चय की दृढ़ता थी।

"इसीलिए तो मै कहना नही चाहती थी। मै नही चाहती कि लोग मुझे परिवार मे फूट डालने और कलह करवाने का कलक लगाये।" दुखी स्वर मे सरला बोली।

"और इस घर मे रहकर वे लोग न जाने कब क्या कलक लगा बैठे। नही, उनका यहाँ रहना ठीक नही है। अब सो जाओ! मै भी अब चैन से सो सकूँगा।" कहकर बाबू श्यामसुन्दर ने स्वय बत्ती बुझा दी।

इक्कीस

बम्बई पहुँचकर शकुन, शैलजा और ललित मैरिन ड्राइव पर स्थित एक प्रसिद्ध होटल में ठहरे। जो फ्लैट उन्होंने किराये पर लिया उसमें दो सोने के कमरे, एक गोल कमरा तथा शौचालय और स्नानगृह था। कमरे खुले हुये और हवादार थे। गोल कमरे की खिडकी से समुद्र की चचल तरगो का मनोहर दृश्य दिखाई देता था। फर्श पर कीमती कालीन बिछे थे, फरनीचर भी कलात्मक था और कमरे में रेडियो और फोन भी लगा था। ललित तो होटल की शान-शौकत देखकर दग रह गया।

बम्बई की जलवायु भी ललित को बहुत पसन्द आयी। वहाँ कानपुर की तरह भयकर सर्दी न थी। दिन मे एक स्वेटर और रात मे एक कम्बल ही काफी था। ललित बम्बई पहली बार ही गया था, इसलिए वहाँ की हर चीज उसके लिए नयी थी।

शैलजा को होटल मे छोडकर शकुन ललित को लेकर नीचे आयी। टैक्सी पर वे एक ऐसी दूकान पर पहुँचे जहा सिले-सिलाये कपडे बिकते थे। शकुन ने दूकानदार से ललित के नाप की छ. कमीजे और छ पतलूनें देने के लिए कहा।

"यह क्या कर रही हो तुम ? मुझे नही चाहिए कपडे !" ललित ने

धीमे स्वर मे विरोध किया।

"तुम चुप रहो। यह बम्बई है। यहाँ वही मनुष्य समझा जाता है जो अच्छे कपड़े पहनता है।" शकुन मन्द स्वर मे बोली। "अगर अच्छे कपड़े नही पहनोगे तो होटल वाले ।"

"समझेंगे कि मैं नौकर हूँ। ठीक तो है।"

"मगर यहाँ तुम हमारे नौकर नही, साथी हो।" शकुन ने जल्दी मे कहा।

दूकानदार ने मर्सरायज्ड पापलेन की छ कमीजें काउन्टर पर रखकर पूछा—"पतलूनें समर की दूँ या मक्खनजीन की?"

शकुन ने सोचा मक्खनजीन की अपेक्षा समर की पतलूनें ही ठीक रहेंगी। उनकी क्रीज भी खराब नही होगी और वे गन्दी भी नही होगी। उसने दूकानदार से कहा—"समर की ही निकाल दीजिये। ओर हाँ, चार ही काफी होंगी।"

एक क्षण बाद ही पतलूनें भी काउन्टर पर आ गयी। दूकानदार विनम्रता से ललित की ओर मुड़कर बोला— अन्दर ड्रेसिंग रूम है। आप एक शर्ट और पेन्ट ट्राई कर ले।"

ललित एक कमीज और पतलून लेकर अन्दर चला गया।

"कितना हुआ?" शकुन ने अपना पर्स खोलते हुये पूछा।

दूकानदार ने बिल बनाकर सामने रख दिया। शकुन ने रुपये दे दिये।

ललित जब बाहर आया तो वह नयी कमीज और पतलून पहने था। फिटिंग इतनी अच्छी थी कि कोई भी यह नही कह सकता था कि यह वस्त्र सिले सिलाये लिए गए है। ललित ने पुरानी कमीज और पतलून काउन्टर पर रखकर शकुन से पूछा—"ठीक है?"

"एकदम फिट है। अब यही पहने रहो।" कहकर शकुन वस्त्रो का बंडल उठाने लगी, परन्तु तभी ललित ने मुस्कराते हुये आगे बढ़कर बन्डल उठा लिया।

शकुन ने देखा कि नये वस्त्रो पर ललित के पुराने जूते फब नही रहे है।

उसने ललित के लिए नये जूते भी ले लिये।

टैक्सी जब होटल की ओर चली तब शकुन ने हँसकर कहा—"अब मालूम होता है कि आदमी हो।"

"और अभी तक क्या जानवर था?" ललित ने कृत्रिम रोष और गभीरता से पूछा।

"शी ! आदमी को क्रोध नही करना चाहिए।"

और फिर दोनो खिलखिला कर हँस पड़े।

शैलजा ने जब ललित को नये वस्त्रो मे देखा तब वह मुस्करा कर बोली—"तुमने तो ललित का काया-कल्प ही कर दिया, जीजी।"

साधारणतया ललित शैलजा की बात का उत्तर नही देता था क्योकि वह उससे डरता था। पर उस दिन वह प्रसन्न मुद्रा मे था और उसकी अभ्यस्त दृष्टि ने यह भी देख लिया था कि शैलजा के स्वभाव मे पहले सी गर्मी नही रही है। इसलिए, इससे पहले कि शकुन कुछ कहे, वह बोल पडा—"केवल काया-कल्प ही नही, मन का कल्प भी कर दिया है।"

शैलजा खिलखिला कर हँस पडी। ललित ने उसका साथ दिया। बिचारी शकुन सकुचित होकर दूसरे कमरे मे भाग गयी।

रात को भोजन के उपरान्त शैलजा तो सोने के कमरे मे चली गयी परन्तु शकुन और ललित गोल कमरे मे ही बैठे रहे। खिडकी खुली हुई थी और समुद्री हवा के ठडे झोके ललित को बहुत भले लग रहे थे। रेडियो से कोई नाटक प्रसारित हो रहा था। ललित आँखे बन्द किये नाटक को ध्यान से सुन रहा था।

"जीजी, रेडियो बन्द कर दो। मुझे नीद लगी है।" दूसरे कमरे शैलजा का स्वर आया।

शकुन ने रेडियो बन्द कर दिया ललित ने आखे खोल दी। "आओ बालकनी मे बैठ कर समुद्र को देखे।" शकुन ने उठकर कहा।

दोनों बालकनी मे कुर्सियाँ डाल कर बैठ गये। उस चाँदनी रात में ललित को समुद्र का दृश्य अत्यन्त रोमाचकारी लगा।

"ललित, तुम जानते हो मुझे तुमपर पूरा भरोसा है शकुन ने ललित की ओर देखे बिना ही धीमे स्वर मे कहा। मुझे विश्वास है तुम मुसीबत मे हमारी सहायता करोगे।"

शकुन की अटपटी बात सुनकर ललित ने अपनी दृष्टि समुद्र की लहरों से हटाकर शकुन के चेहरे पर जमा दी और फिर कृत्रिम गंभीरता से पूछा—"कौन सी मुसीबत आ पडी है तुम पर?"

"मै बम्बई क्यो आयी हूँ, जानते हो?" शकुन ने अपनी दृष्टि समुद्र की ओर ही रक्खी।

"मन बहलाने और पैसा बहाने के लिए।"

"नही, यह बात नही है।" इस बार शकुन ने अपनी दृष्टि ललित की ओर करके कहा।" हम मुसीबत मे फँस गयी है और उससे छुटकारा पाने के लिये हमे तुम्हारी मदद की जरूरत है। मदद करोगे न?"

"अगर विश्वास न था तो मुझे लायी ही क्यो?" ललित ने अपनी आँखे समुद्र की ओर करके पूछा।

"तुम ठीक कहते हो! मुझे तुम पर पूरा विश्वास था तभी तो तुम्हे लायी हूँ। बात यह है ..! ओह, कैसे कहूँ, कुछ समझ मे नही आता!" शकुन परेशानी के स्वर मे बोली। "ललित, शैलजा बहुत भारी भूल कर बैठी है। नही, इसमे दोष उसका नही है, दोष कामेश्वर का है। पुरुष के पाप का फल नारी को भोगना पड रहा है।"

शकुन की बात सुनकर ललित हडबडा गया। वह धीमे स्वर मे बोला—"यह क्या कह रही हो तुम?"

"ललित, अगर यह बात खुल गयी तो हमारे वश और नाम पर धब्बा लग जायेगा। इसीलिए मै उसे यहाँ ले आयी हूँ।" अपनी कुर्सी ललित की कुर्सी के निकट खीचकर शकुन बोली। "यहाँ उसका अबारशन . ।"

"लेकिन... लेकिन यह तो पाप है .. ।" ललित बीच मे ही बोला।

"एक पाप को छिपाने के लिए दूसरा पाप करना ही पडेगा। और कोई चारा ही नही है। हमारी प्रतिष्ठा, हमारा सामाजिक मान दाँव पर है।"

शकुन व्यग्रता से बोली।

"प्रतिष्ठा सामाजिक मान।" ललित व्यग्य से बोला। "अगर पहले ही इनका ध्यान रक्खा होता तो ।"

"बहस करने से काम नही चलेगा। तुम्हे मदद करनी ही पडेगी, मेरे लिए।" शकुन का स्वर अवरुद्ध हो गया।

ललित कुछ देर तक शकुन की ओर देखता रहा और फिर धीमे स्वर मे बोला— 'जो कुछ करूगा, तुम्हारे लिए ही करूँगा। शैलजा जैसी गर्वीली लड़की ।"

"उसका गर्व चूर-चूर हो गया है, ललित।" शकुन बीच मे ही बोली। उसे इस समय क्रोध नही, दया चाहिए; घृणा नही, सहानुभूति चाहिए। अगर तुमने मेरी मदद न की तो वह जहर खा लेगी।

"बोलो, क्या करना है मुझे ?" कुछ देर मौन रह कर ललित ने मन्द स्वर मे पूछा।

"अभिनय।" कहकर शकुन ने अपनी योजना उसे बता दी।

"परन्तु.. ।" पूरी बात सुनकर ललित ने शका की।

"तुम वचन दे चुके हो।" शकुन ने मुस्करा कर कहा।

× × ×

दूसरे दिन सुबह जब सब लोग चाय पी चुके तब वेटर ने सूचित किया कि टैक्सी आ गयी है। सूचना देकर वेटर चला गया।

"जाओ, ललित!" शकुन ने कहा और फिर शैलजा की ओर मुडकर बोली, 'मैने ललित को समझा दिया है। जाओ। सब ठीक हो जायेगा।"

शैलजा पानी-पानी हो गयी। जिस ललित का उसने सदा अपमान किया, जिसे उसने कभी नौकर के अतिरिक्त और कुछ नही समझा, उसी ललित के सामने उसकी दृष्टि झुक गयी।

"जीजी, तुम नही ।" शैलजा ने मन्द स्वर में कहा।

"मेरा जाना ठीक नही। तुम जाओ ललित के साथ। घबराओ मत। चलो, नीचे तक छोड आऊँ तुम लोगो को।" कहकर शकुन ने शैलजा

का हाथ पकड़ लिया।

पिछली सीट पर शैलजा और ललित बैठ गये। टैक्सी चल दी। शकुन फिर कमरे में आ गयी।

"आपको जीजी ने सब कुछ....।" जब टैक्सी कुछ दूर निकल गयी तब शैलजा ने रुँआसे स्वर में कहा, पर वह अपना वाक्य पूरा न कर पायी।

ललित ने धीरे से सिर हिला दिया।

"आपको मुझसे नफरत हो गयी होगी।" आंखों में आंसू भरकर शैलजा बोली।

"मैं पापी से नहीं, पाप से घृणा करता हूँ।" ललित धीमे स्वर में बोला।

शैलजा सड़क की ओर देखने लगी।

टैक्सी लेडी डाक्टर मिस दमयन्ती दामले की क्लीनिक के सामने रुक गयी। ललित ने टैक्सी का मीटर देखकर पैसे दे दिये। दोनों दवाखाने में पहुँचे।

दैवात् उस समय क्लीनिक में लेडी डाक्टर तथा उसकी नर्स के अतिरिक्त और कोई न था। ललित ने मन-ही-मन भगवान को धन्यवाद दिया।

"डाक्टर, मुझे आपसे कुछ राय लेनी है।" ललित ने शैलजा को अपने पास बिठाकर कहा।

"वेल! माई कन्सल्टेशन फी इज टेन रुपीज।" लेडी डाक्टर ने ललित को सूचित किया और फिर उसने नर्स की ओर देखा। नर्स दूसरे कमरे में चली गयी।

"ठीक है। लेकिन कन्सल्टेशन के अलावा मुझे आपसे और भी काम लेना है।" ललित मुस्कराकर बोला, "आप तो जानती हैं कि हमारे देश को आजकल फेमिली प्लेनिंग की कितनी जरूरत है।"

"यस, यस! आप फेमिली प्लेनिंग के बारे में राय लेना चाहते हैं?"

"वह तो बाद की बात है, डाक्टर! अभी तो ..।" बोलते-बोलते ललित रुक गया और फिर धीमे स्वर मे बोला। "हम लोगो की शादी तीन महीने पहले हुई है। शी इज माई वायफ।"

ललित की बात सुनकर शैलजा चौक पडी। शकुन ने उसे यह तो बताया नही था कि उन्हे पति-पत्नी का अभिनय करना पडेगा। उसने ललित की ओर अजीब दृष्टि से देखा। ललित ने लेडी डाक्टर की दृष्टि बचाकर उसका हाथ दबा दिया। शैलजा उसके सकेत को समझ गयी। उसने दृष्टि झुका ली।

"यू हैव अ चार्मिग वायफ।" लेडी डाक्टर ने शैलजा और ललित को प्रसन्न करने के लिए कहा।

"थैक्स!" ललित ने उत्तर दिया। "हम सोच ही रहे थे कि किसी फेमिली प्लेनिग सेन्टर मे जाये मगर.. मगर . यू नो, मैन प्रपोजेज, गाड डिस्पोजेज।"

"ओह, समझी!" हँसकर लेडी डाक्टर बोली।

"अब आपही बताइये, इतनी जल्दी माँ-बाप बनना कहाँ तक ठीक है? मै कई दिनो से इनसे कह रहा था कि डाक्टर के यहाँ चलो, वे सब ठीक कर देगी। मगर आप तो जानती है कि मा का दिल कैसा होता है। बहुत मुश्किल से आज राजी हुई है आने के लिए। अब आप हमारी मदद कीजिये।"

"डाक्टर का काम ही मदद करना है। लेकिन आप जानते है, यह काम खतरे का है। अगर जरा भी बात लीक हुई तो आप भी थाने मे जायेगे और हमारा लायसेन्स भी कैन्सिल हो जायेगा।" लेडी डाक्टर ने आगे झुककर धीमे स्वर मे कहा।

"मै तो आपके पास बहुत आशा लेकर आया था, डाक्टर!" ललित ने उदास होकर कहा और उसके चेहरे पर भारी निराशा का भाव उभर आया।

'लेकिन फिर भी तुम्हारी मदद करना चाहती हूँ। यू आर अ यग

कपुल।" लेडी डाक्टर कुछ सोचती हुई बोली। "मै तुम्हारी मदद करूँगी। मगर... मगर मै पाँच सौ रुपया लूँगी।"

"पाँच सौ !" ललित आश्चर्य से बोला। 'दिस इज टू मच, डाक्टर।"

"सौ रुपया नर्स को देना पडेगा। यू नो, टु क्लोज हर माउथ। मुझे सिर्फ चार सौ बचेगा। ऐन्ड दिस इज नथिग फार सच अ बिग रिस्क! बोलो, तैयार हो?" लेडी डाक्टर ने उत्सुकता से पूछा।

"और कोई चारा भी नही है।" कहकर ललित ने सौ-सौ के पाँच नोट जेब से निकालकर लेडी डाक्टर की ओर बढा दिये।

लेडी डाक्टर ने रुपये लेकर अपने बैग मे रख लिये और फिर मुस्कराकर बोली—"तुम्हारी वायफ की माँग भी सूनी है और पैर भी।"

ललित काँप गया। शैलजा भी डर गयी। अगर उसे पहले ही शकुन ने बता दिया होता तो वह माँग मे सिन्दूर लगा लेती! अब क्या हो?

"हम लोग काश्मीरी ब्राह्मण है।" ललित ने स्वर को स्वाभाविक रखने की चेष्टा करते हुये उत्तर दिया। "हमारे यहाँ सिन्दूर और बिछुये का चलन नही है।"

ललित की बात सुनकर लेडी डाक्टर फिर मुस्करायी। उसने ललित की घबराहट देखकर हँसते हुये कहा—"डान्ट फियर! हमे पैसे से मतलब है।"

ललित ने उसकी बात का कोई उत्तर नही दिया।

"नर्स!" लेडी डाक्टर ने ऊँचे स्वर मे पुकारा। और जब नर्स आ गयी तब बोली—"इन्हे अन्दर ले चलो।"

नर्स शैलजा के पास आकर खडी हो गयी। शैलजा ने कातर और भीत दृष्टि से ललित की ओर देखा।

"अन्दर जाओ, शैल! घबराओ मत! डाक्टर पर भरोसा रक्खो? मै यही रहूँगा।" ललित ने शैलजा की पीठ थपथपा कर कहा।

शैलजा जब खडी हुई तब वह काँप रही थी।

"बी ब्रेव, माई गर्ल।" लेडी डाक्टर ने मीठे स्वर मे कहा। "तीन-

चार घंटे बाद तुम मजे से घर चली जाना।" फिर ललित की ओर मुड़कर बोली—"आप तब तक यही वेट करेंगे, मिस्टर . ! अरे, मैंने आपका नाम तो पूछा ही नहीं।"

"प्रकाश। और वायफ का नाम है किरण।" ललित बहुत सफाई से स्वाभाविक स्वर में झूठ बोल गया।

"लवली नेम्स।" कहकर लेडी डाक्टर शैलजा को अन्दर ले गयीं।

नर्स ने ललित की ओर मदभरी, मुस्कराती हुई आँखों से देखा और फिर वह भी अन्दर चली गयी।

ललित बेचैनी से बाहर के कमरे में प्रतीक्षा करता रहा।

और जब दोपहर के बाद ललित और शैलजा होटल पहुँचे तब थोड़ी दुर्बलता के अतिरिक्त शैलजा पूर्णतया स्वस्थ थी। शैलजा को देखकर ही शकुन समझ गयी कि उनके बम्बई आने का उद्देश्य पूरा हो गया है। वह प्रसन्न हो उठी और उसने आँखों के द्वारा ललित को धन्यवाद देकर अपनी हार्दिक कृतज्ञता जता दी।

तीन-चार दिन में शैलजा की दुर्बलता भी दूर हो गयी। उसके चेहरे पर फिर गुलाबीपन आ गया। उसकी आँखों में फिर उत्साह और उमंगों की ज्योति आ गयी।

शकुन ने सोचा कि इतनी जल्दी लौटकर जाना ठीक नहीं। जब बम्बई आये हैं तो अच्छी तरह घूम ही लिया जाये। तब तक शैलजा और भी ठीक हो जायेगी।

बम्बई में घूमने-फिरने के स्थानों की क्या कमी? वे लोग कभी चौपाटी की सैर करते, कभी जुहू-तट का आनन्द लेते; कभी हैंगिंग गार्डेन से, कभी कमलानेहरू पार्क से; बम्बई नगरी की छटा निहारते, और कभी मैरिनड्राइव पर ही चहलकदमी करते।

ललित के लिए सभी स्थान नये थे। उसे घूमने-फिरने में बहुत आनन्द आता। शैलजा के प्रति उसके हृदय में जो मैल था वह धीरे-धीरे धुल गया। वह सोचता शकुन ठीक ही कहती है। शैलजा को क्रोध और घृणा नहीं,

दया और सहानुभूति चाहिए। जिस शैलजा से वह घबराता था, उसी से वह घुल-मिल गया।

एक दिन शैलजा हँसी-हँसी मे बोली—"मैने आपको बहुत भला-बुरा कहा है। कई बार अपमान कर चुकी हूँ आपका। और आपने मुझे क्षमा कर दिया। मै तो समझती थी आप जीवन भर क्षमा नही करेगे।"

शकुन उस दिन अकेले ही घूमने चली गयी थी।

'मै यह सिद्ध करना चाहता हूँ कि पुरुष मे नारी की अपेक्षा अधिक क्षमाशीलता होती है। मै यह भूल गया हूँ कि आपने मेरे साथ क्या-क्या किया है, पर पर आपके साथ जो व्यवहार हुआ है क्या आप उसे भूल सकती है?"

ललित की बात से शैलजा का घाव हरा हो गया। उदासी की घटा उसके मुख पर छा गयी। दृष्टि फर्श पर गडाकर वह धीमे स्वर मे बोला—"शायद कभी नही।" और फिर वह उठकर दूसरे कमरे मे चली गयी।

ललित ने सोचा कि बेकार ही शैलजा के दिल को दुखाया। आत्म-ग्लानि मे उसका मन भर गया। शैलजा से क्षमा माँगने के लिए वह उसके कमरे मे गया। उसने देखा, वह पलँग पर पडी, तकिये मे मुह छिपाये सिसक सिसक कर रो रही है।

"मुझे माफ कर दीजिये।" कुर्सी पर बैठकर दुखी स्वर मे ललित बोला।

शैलजा उठकर बैठ गयी। आचल से आँसू पोछकर सिसकती हुई बोली—"आप भी पुरुष है, इसलिए नारी के मन की व्यथा नही समझ सकते। मेरे साथ जो कुछ हुआ है उसने मेरे मन मे पुरुष जाति के प्रति अविश्वास, भय और घृणा भर दी है।"

"सारी पुरुष जाति के प्रति?" ललित के स्वर मे शरारत थी।

"डैडी और आपको छोडकर।"

ललित खिखिलाकर हँस पडा। शैलजा की आँसू भरी आँखो को भी हँसना पडा।

"और कमल ?" ललित ने गूढ दृष्टि से शैलजा की ओर देखकर पूछा।

"कवि का हृदय पुरुष का नही, नारी का होता है।" शैलजा का उत्तर था।

उसी समय आ गयी शकुन। उसके हाथ मे एक साप्ताहिक पत्र की प्रति थी। आते ही वह आवेश से बोली—"प्रोफेसर इन्द्र तो कमल के जानी दुश्मन बन गये है।"

"क्या हुआ ?" ललित और शैलजा के मुख से एक साथ निकल गया।

"उसके सग्रह की आलोचना की है। सिवाय गालियो के और कुछ है ही नही। लो, पढ लो।" कहकर उसने पत्र की प्रति ललित की ओर बढा दी।

ललित जोर-जोर से पढने लगा। आलोचना काव्य की कम और व्यक्ति की अधिक थी। शैलजा और ललित को भी बुरा लगा।

"जीजी, हमे घर चलना चाहिए।" शैलजा ने गभीर होकर कहा।

"हम आज रात की गाडी से चल देगे। बिचारे कमल की क्या दशा हुई होगी आलोचना पढकर ?" शकुन बोली।

"कमल इन छोटी-छोटी बातो मे घबराने वाला नही है। मै जानता हूँ, उसने हँसकर टाल दिया होगा।" ललित ने विश्वासपूर्वक कहा।

"मुझे प्रोफेसर इन्द्र मे घृणा हो गयी है।" शैलजा ने मुह बिगाडकर कहा।

"होनी ही चाहिए। आखिर वे भी है तो पुरुष ही।" ललित ने शरारत भरे स्वर मे कहा और फिर सामान बाँधने के लिए वेटर को बुलाने के उद्देश्य से उसने कमरे मे लगी हुई बिजली की घटी का बटन दबा दिया।

बाइस

जिस जगली पशु की दाढ मे मनुष्य के रक्त की एक बूँद भी लग जाती है वह धीरे-धीरे नरभक्षी बन जाता है। फिर वह मनुष्य का शिकार केवल भूख मिटाने के लिए ही नही करता वरन् शौक के लिए भी करने लगता है। उसे मनुष्य को मारने मे अतीव आनन्द का अनुभव होने लगता है और स्थिति यहाँ तक पहुँच जाती है कि उसे मनुष्य दिखाई भर दिया कि उसने झपटकर उस पर आक्रमण कर दिया।

कामेश्वर की दशा भी एक नरभक्षी जगली जानवर की तरह ही थी। नारी के माँस का स्वाद उसकी जीभ पर चढ गया था। जब वह बाबू श्यामसुन्दर के साथ रहता था तब खर्चे की छूट थी और इसलिए वह छल और धन के बल से अपनी भूख मिटाने की चेष्टा करता रहता था। पर जब से वह गोमती के साथ अलग रहने लगा तब से स्थिति बदल गयी। बाबू श्यामसुन्दर गोमती को दो सौ रुपये मासिक देते थे। कामेश्वर को जेब खर्च के लिए केवल पन्द्रह रुपये मिल पाते थे। पन्द्रह रुपयो मे वह न तो बोतल मे बन्द आग से अपनी प्यास बुझा सकता था और न इतने साधन ही जुटा सकता था कि नारी के माँस से अपनी भूख मिटा सके। जो लड़कियाँ उससे प्यार का दावा करती थी, वे आँखे फेरने लगी।

जिन नर्सों को उसने पिक्चर दिखाये थे, अमूल्य उपहार दिये थे और जिनका वह 'डार्लिंग' था वे ही उससे कतराने लगीं। कामेश्वर के हृदय पर इन बातों का बहुत दुखद प्रभाव पड़ा। वह अर्ध विक्षिप्त सा हो गया।

एक दिन वह घर में अकेला ही था। गोमती फूल बाग में होनेवाले कीर्तन में सम्मिलित होने गयी थी। लेटा-लेटा कामेश्वर अपने अतीत और वर्त्तमान के विषय में सोच रहा था। उसी समय किसी ने बाहर से द्वार खटखटाया। कामेश्वर ने उठकर द्वार खोल दिया। महरी एक साँवली सी युवती के साथ अन्दर आ गयी।

"आज बहुत जल्दी आ गयी।" कामेश्वर ने महरी से कहा।

"हाँ बाबू, आज एक ज्योनार माँ जाये का है। याही से जल्दी है। हम दूसर घर माँ काम करै जाइत है। हमार बिटिया इहाँ कर दिहै।" कहकर महरी बाहर चली गयी।

महरी की बेटी नल के नीचे बैठकर बर्तन माँजने लगी।

कामेश्वर कमरे में आ गया। उसका दिल बेचैन हो रहा था। उसकी प्यास जाग गयी थी, भूख अँगड़ाई ले रही थी। महरी की लड़की थी तो साँवली, पर जवान थी और शरीर की गठन भी अच्छी थी। कामेश्वर का शरीर काँपने लगा, उसकी आँखों से वासना की जलती चिनगारियाँ निकलने लगीं।

"अरे, दरवाजा बन्द कर दे। तू बर्तन माँजती रहेगी और कोई घुसकर सामान ले जायेगा।" कामेश्वर ने अन्दर से ही ऊँचे स्वरमें कहा।

कामेश्वर ने द्वार बन्द होने और कुंडी लगने की आवाज सुनी। उसके हृदय की गति बहुत तेज हो गयी।

"एक गिलास पानी दे जा।" कामेश्वर ने भर्राये स्वर में कहा और फिर वह पलँग पर बैठ गया।

एक क्षण बाद ही लड़की जल लेकर आ गयी। दृष्टि नीची करके उसने गिलास मेज पर रख दिया और फिर जाने लगी।

"तुझे यह भी नही मालूम कि पानी हाथ मे देना चाहिए।" कामेश्वर बोला।

वह बिचारी लौट आयी और उसने गिलास उठाकर कमेश्वर की ओर बढ़ा दिया।

कामेश्वर ने गिलास न लेकर उसका हाथ पकड़ लिया। गिलास छूटकर फर्श पर गिर पड़ा और पानी से फर्श भीग गया।

भूखे मकड़े के जाल मे फँसकर यदि मक्खी निकल जाये तो संसार का आठवाँ आश्चर्य होगा।

भूखे पुरुष से दुर्बलनारी भी अपनी रक्षा न कर सकी और जब पुरुष ने नारी के हाथ मे जबरदती दो रुपये का लाल नोट ठूँस दिया तब वह समझा कि नारी अपने अस्पमान की बात भूल जायेगी, अपने लुटने की व्यथा अपने तक ही सीमित रक्खेगी।

पर ऐसा हुआ नही। कामेश्वर शायद यह नही जानता था कि छोटे लोगो की इज्जत पर डाका डालने का युग अब नही रहा है। लड़की ने लपने लुटने की करुण कहानी सिसक-सिसक कर अपनी माँ से कही। माँ की आँखो से अगार निकलने लगे। हम गरीब है इससे क्या? हमारी भी इज्जत है, आबरू है! और फिर वह अपनी अभागिन बेटी को लेकर पुलिस चौकी पहुँची। रिपोर्ट दर्ज कर ली गयी।

लड़की की डाक्टरी जाँच हुई और जब जाँच मे यह सिद्ध हो गया कि उसके साथ बलात्कार हुआ है तब पुलिस कामेश्वर को बन्दी बनाने के लिये चल दी।

जिस समय पुलिस कामेश्वर को बन्दी करके लिये जा रही थी उसी समय गोमती फूलबाग से वापस आ गयी। कामेश्वर को पुलिस की हिरासत मे देखकर चीखती हुई बोली—"कहाँ लिये जा रहे हो मेरे बेटे को? क्या किया है उसने?"

"महरी की बेटी के साथ मुह काला किया है।" एक सिपाही ने कड़े स्वर मे कहा।

गोमती ने साश्रु नयनो से कामेश्वर की ओर देखा। उसने दृष्टि झुका ली। माँ से दृष्टि मिलाने का साहस उस समय बेटे मे नही था।

पुलिस कामेश्वर को लेकर चली गयी।

गोमती ने घर का ताला बन्द किया और फिर रिक्शा करके बाबू श्यामसुन्दर के बँगले की ओर चल दी।

बाबू श्यामसुन्दर लेटे हुये थे। सरला उन्ही के पास बैठी थी। वह उन्हे प्रोफेसर इन्द्र की आलोचना पढकर सुना रही थी। गोमती को देखकर बाबू श्यामसुन्दर उठकर बैठ गये। गोमती की घबराहट सरला से भी छिपी न रही क्योकि वह बुरी तरह हाँफ रही थी और आँखों मे आँसू की बूदे थी।

"क्या बात है ?" बाबू श्यामसुन्दर ने घबरा कर पूछा।

"भैया, कामेश्वर को पुलिस ले गयी है। उसे छुडा लो, भैया, उसे छुडा लो।" गोमती रोती हुई बोली।

"पुलिस ले गयी है ?" बाबू श्यामसुन्दर की त्योरी चढ़ गयी। "क्यो ?"

"क्या कहूँ, भैया ! मै तो इस कपूत से तग आ गयी हूँ। अगर होते ही मर गया होता तो अच्छा था।" कहकर गोमती फिर सिसकने लगी।

"कुछ बताइये तो ! क्या बात हुई ?" सरला ने व्यग्रता से पूछा।

"मै तो फूल बाग गयी थी। उसने महरी की लडकी....।" और गोमती अपना वाक्य अधूरा छोडकर सुबकती रही।

बाबू श्यामसुन्दर चिन्तित हो उठे। सरला गभीर हो गयी।

"जैसा किया है वैसा भोगे।" बाबू श्यामसुन्दर के स्वर मे घृणा थी। "वह आदमी नही, जानवर है। मै कुछ नही कर सकता।"

गोमती दहाड मारकर रोने लगी।

सरला का नारी-हृदय पिघल गया। वह धीमे स्वर मे बोली—"कामेश्वर अच्छा है या बुरा, पर है तो अपना ही। आप अभी जाकर उसे छुडा लाइये।"

"नही मै कुछ नही कर सकता। पापी को पाप की सजा मिलनी ही चाहिए।" बाबू श्यामसुन्दर दृढ स्वर मे बोले।

"मगर इसमे बदनामी आपकी भी होगी।" सरला ने समझाते हुये कहा। "समाचार-पत्र वाले साथ मे आपका नाम भी सानेगे।"

बाबू श्यामसुन्दर को सरला की बात ठीक जँची। अखबार को तो मसाला चाहिए। वे उन पर छीटाकशी करने मे कभी नही चूकेगे। बाबू श्यामसुन्दर ने सरला की ओर देखा। उनका विरोध ढीला पड गया था।

"देर न कीजिये। अभी कामेश्वर पुलिस चौकी मे ही होगा।" कहकर सरला ने बाबू श्यामसुन्दर की ओर आग्रह भरी दृष्टि डाली।

बाबू श्यामसुन्दर ने वस्त्र बदले। नोटो की एक मोटी गड्डी जेब मे डालकर वे कार पर बैठकर रवाना हो गये।

उनके जाने के बाद गोमती कृतज्ञ स्वर मे बोली—"भाभी! मै तुम्हारा उपकार सदा याद रक्खूगी।"

सरला ने ऊँचे स्वर मे महराजिन से चाय दे जाने के लिए कहा।

"मुझसे चाय-वाय नही पी जायेगी, भाभी।"

"आप घबराये नही। सब ठीक हो जायेगा।" सरला ने सान्त्वना देते हुये कहा।

"मेरा तो भाग्य ही खोटा है। आज वे होते तो......।" गोमती की आँखो मे स्वर्गीय पति की स्मृति आँसू बनकर छा गयी। "एक लडका है वह भी कपूत निकला।"

गोमती रोने लगी और सरला उसे समझाती रही।

× × ×

बाबू श्यामसुन्दर की कार जब पुलिस चौकी के सामने रुकी तब एक सिपाही ने आगे बढकर द्वार खोला। बाबू श्यामसुन्दर उतर पडे।

"हुजूर, कैसे तकलीफ की?" सिपाही ने आदर से पूछा।

"ऐसे ही इन्सपेक्टर साहब से मिलने चला आया।" कहकर वे आगे बढ गये।

पुलिस इन्सपेक्टर ने उन्हे आदर से कुर्सी दी और कष्ट करने का कारण पूछा।

"क्या बताऊँ, भाई।" बाबू श्यामसुन्दर निश्वास छोड़कर बोले। "कामेश्वर के बारे में बात करने आया हूँ। वह मेरा भान्जा है।"

'अच्छा! मुझे मालूम नहीं था वरना रिपोर्ट ही दर्ज न करता। मगर वह तो दूसरे घर मे रहता है।" इन्सपेक्टर ने गूढ दृष्टि बाबू श्यामसुन्दर की ओर डालकर कहा।

"कुछ दिन पहले हमारे साथ ही रहता था। खैर, मै चहाता हूँ वह बे दाग छूट जाये।" कहकर उन्हो ने नोटो की गड्डी मेज पर रख दी।

इन्सपेक्टर ने ललचायी आँखो से गड्डी की ओर देखा और फिर हाथ मलकर बोला—"मै तो आप लोगो का सेवक हूँ। आप कामेश्वर को ले जाइये। मैं डाक्टर को भी साथ लूँगा और यहाँ की रिपोर्ट भी नष्ट कर दूँगा।"

"बहुत बहुत धन्यवाद! मगर केस यही दब जाना चाहिए।"

"आप विश्वास रक्खे।" कहकर इन्सपेक्टर ने नोटो की गड्डी जेब में रख ली। और फिर ऊँचे स्वर मे कहा—"कामेश्वर बाबू को ले आओ।"

"अगर महरी ने चिल्ल पो मचायी तो ।"

"आप किसी बात की फिक्र न करे। उस माली को मै ठीक कर दूँगा।" इन्सपेक्टर ने निश्चय पूर्वक कहा।

कुछ देर बाद जब कार पुलिस चौकी से रवाना हुई तो बाबू श्यामसुन्दर के साथ कामेश्वर भी बैठा था। वह बहुत लज्जित मालूम होता था। उसकी दृष्टि झुकी हुई थी और आँखो मे आँसू की बूँदे थी।

"मै तो चाहता था कि तुम्हे अपने कर्मो का फल मिले, पर सरला के जोर देने पर आना पड़ा।" बाबू श्यामसुन्दर ने बहुत धीमे स्वर मे कहा।

कामेश्वर ने न तो दृष्टि ही उठायी और न कुछ बोला ही।

बाबू श्यामसुन्दर ने कार पोर्टिको मे रोक दी। वे नीचे उतर कर

कामेश्वर से बोले—"अन्दर गोमती तुम्हारी राह देख रही है। आओ मेरे साथ।"

कामेश्वर उतर कर उनके साथ चल दिया। कमरे में पहुँचते ही उसकी दृष्टि सरला पर पड़ी। दौड़कर उसने सरला के पैर पकड़ लिये और आँखों से आँसू की धार बहाता हुआ बोला—"मामीजी, आप देवी हैं। मैं पापी हूँ, जानवर हूँ। मुझे क्षमा नहीं, दंड दीजिये, कठोर से कठोर दंड दीजिये।"

उसका हाथ पकड़ कर सरला ने उसे अपने पास बिठाया। वह ममता भरे स्वर में बोली—"तुम्हें अपने किये पर प्रायश्चित हो रहा है, यही क्या कम है? बीती बातों को भूल जाओ, भाई। अब आदमी बनने की कोशिश करो।"

"मैंने आप पर झूठा लाँछन लगाया। मैं आपको मुह दिखाने लायक नहीं हूँ।" कहकर कामेश्वर दोनों हाथों से मुह छिपाकर रोने लगा।

बाबू श्यामसुन्दर दूसरे कमरे में चले गये।

"चलो बेटा, घर चलो।" गोमती ने उठकर भीगे स्वर में कहा।

कामेश्वर उठकर खड़ा हो गया। उसने झुक कर सरला के पैर छुये और फिर दुखी स्वर में बोला—"शैलजा के बारे में आपसे जो कुछ मैंने कहा था वह भी झूठ था, मामी जी। मैं आप लोगों की क्षमा का नहीं, घृणा का पात्र हूँ।"

कामेश्वर अपनी बात पूरी करके तेजी से बाहर निकल गया। गोमती उसके पीछे चल दी।

सरला उठकर बाबू श्यामसुन्दर के पास गयी। उसे देखकर वे बोले—"कामेश्वर गया? मैं तो डरता था कि कहीं तुम उसे फिर यहीं न बुला लो।"

"मैं आपसे यही कहने आयी हूँ। वह अपने किये पर पछता रहा है। अब उन लोगों को यहीं बुला लीजिये।" सरला मीठे और अनुरोध भरे स्वर में बोली।

"साँप को दूध पिलाना ठीक नही। वह अपना स्वभाव नही छोड़ सकता।" बाबू श्यामसुन्दर ने विरोध किया।

सरला उदास हो गयी।

दूसरे दिन सुबह गोमती फिर आयी। वह घबरायी हुई थी। उसने बाबू श्यामसुन्दर को बताया कि कामेश्वर उसके आभूषण और रुपये लेकर कही चला गया है।

"उसका यहाँ से चला जाना ही ठीक था। कही जाकर वह नया जीवन शुरू करेगा।" बाबू श्यामसुन्दर सन्तोष की साँस लेकर बोले।

"हाय, मै तो लुट गयी, भैया!" गोमती बिलख कर बोली।

"अब तुम्हे अलग रहने की जरूरत नही है, गोमती। नौकरो को ले जाकर अपना सामान यही उठवा लाओ।" बाबू श्यामसुन्दर ने कहा।

"भैया, अब मै यहाँ रहकर क्या करूँगी? मुझे काशी भेज दो। बाबा विश्वनाथ के चरणो मे पडी रहूँगी।" गोमती ने आँखो के आँसू पोछते हुये कहा।

"जैसी तुम्हारी इच्छा। मै काशी मे रहने का प्रबन्ध कर दूँगा।" कहकर बाबू श्यामसुन्दर बाहर चले गये।

सरला बाबू श्याममुन्दर और गोमती की बाते मौन रहकर सुन रही थी। जब बाबू श्याममुन्दर चले गये तब वह गोमती का हाथ पकड कर बोली—"आप मुझे ऐसे समय मे छोडकर जा रही है जब मुझे आपकी सबसे ज्यादा जरूरत है।"

गोमती पहले तो सरला की बात समझ न सकी। उसने गूढ दृष्टि सरला के मुख पर डाली और फिर उसके पेट की ओर देखकर बोली—"क्या कुछ...।"

सरला ने लजाकर सिर झुका लिया।

"तब तो मै अभी नही जाऊँगी।" गोमती प्रसन्न होकर बोली। "मै जाती हूँ अपना सामान लाने। लेकिन भाभी, एक शर्त है!"

गोमती ने उठकर मुस्कराते हुये सरला की ओर देखा।

"क्या?" धीमे स्वर मे सरला ने पूछा।

"मुझे भतीजी नहीं, भतीजा चाहिए।" कहकर गोमती बाहर चली गयी।

सरला के कपोलो पर किसी अदृश्य तूलिका ने गुलाबी रग पोत दिया।

तेइस

बम्बई मे प्रस्थान करने से पहले शकुन ने तार द्वारा रायबहादुर को अपने पहुचने की सूचना दे दी थी। जब वे लोग कानपुर पहुचे तब स्टेशन के बाहर कार उनकी प्रतीक्षा कर रही थी।

रास्ते मे शकुन ने कहा—"क्यो न पहले कमल के घर ही चला जाये!"

ललित को शकुन का प्रस्ताव पसन्द आया। वह भी कमल से मिलने के लिए आकुल हो रहा था। उसने ड्रायवर को आदेश दिया कि कार राममोहन के हाते की ओर ले चले! कुछ देर बाद ही कार राममोहन के हाते के फाटक के सामने पहुच कर रुक गयी।

शकुन और ललित कार से उतर पडे। शैलजा अन्दर ही बैठी रही।

"तुम नही चलोगी, शैल?" शकुन ने पूछा।

"मैं यही बैठी हू। तुम हो आओ।" शैलजा बोली।

"आओ भी।" ललित ने आग्रह किया।

शैलजा कार से उतर पडी। तीनो फाटक के अन्दर घुसे।

कमल के मकान के सामने पहुचकर ललित ने आवाज दी। अन्दर से एक अधेड व्यक्ति बाहर आया।

"कमल जी है क्या?" ललित ने पूछा।

"कौन कमल जी ?" अधेड़ व्यक्ति ने प्रश्न किया।

"आपके यहाँ रहते थे न ! कवि हैं।" ललित ने आगे बढ़कर कहा।

"हम लोग तो इस मकान मे इसी हफ्ते आये हैं।" कहकर वह व्यक्ति अन्दर जाने लगा।

"सुनिये तो। पहले वाले किरायेदार कहाँ गये ?" शकुन ने अधीरता से पूछा।

"उनका तबादला हो गया। वे बरेली चले गये हैं।" कहकर उस व्यक्ति ने द्वार अन्दर से बन्द कर लिया।

निराश होकर तीनो कार पर आकर बैठ गये। कार न्यू सिविल लायन्स की ओर चल दी।

"कमल अपने मित्र के साथ बरेली तो जा नही सकता।" मार्ग मे ललित बोला।

"कुछ समझ मे नही आता। सामान घर छोड़कर सरला के पास चलेगे। शायद उन लोगो को पता हो।" शकुन बोली।

शैलजा ने वार्ता मे कोई भाग नही लिया।

शकुन और शैलजा को देखकर रायबहादुर प्रसन्न हो उठे। उनके बिना उन्हे घर सूना सा लगता था। आनन्द विभोर होकर बोले—"आ गयी तुम लोग ! मेरा तो मन ही नही लगता था।"

नौकरो ने कार से सामान उतारा।

"कामेश्वर को तो बाबू श्यामसुन्दर ने अलग कर दिया है।" राय बहादुर ने ललित की ओर मुड़कर कहा।

"अच्छा ! क्या बात हुई ?" ललित ने आश्चर्य से पूछा।

"यह तो मालूम नही।" कहकर वे शैलजा की ओर मुड़कर बोले—"अब तबियत तो ठीक रहती है, बेटी ?"

"हाँ, बाबू जी।" शैलजा धीमे स्वर मे बोली।

"वाह ! डैडी से बाबू जी बन गया।" ठहाका मारकर रायबहादुर बोले।

"बाबू जी, हमे अभी बाबू श्यामसुन्दर के यहाँ जाना है।" शकुन ने कार की ओर बढकर कहा।

"सफर की थकान होगी। आराम करो अब। कल चली जाना।" रायबहादुर ने समझाते हुये कहा।

"बहुत जरूरी काम है, बाबू जी।" कहकर शकुन ड्रायवर के स्थान पर बैठ गयी। "आओ, ललित! तुम भी चलोगी, शैल?"

ललित पिछली सीट पर बैठ गया। शैलजा शकुन के पास बैठ गयी। कार तेजी से सरला के बगले की ओर चल दी।

सरला उन लोगो को देखकर प्रसन्न हो उठी। बाबू श्यामसुन्दर भी मुस्करा कर उनका स्वागत करने के लिए आगे बढ आये।

"बम्बई से कब आये भैया?" सरला ने पूछा।

"अभी-अभी आ रहे है। बम्बई मे हमने प्रोफेसर इन्द्र की आलोचना पढ़ी थी। सोचा, पहले कमल से ही मिलते चले। मगर वहाँ जाकर मालूम हुआ कि उसके मित्र का तबादला बरेली हो गया है। उस मकान मे नये किरायेदार आ गये है। कमल का कही पता नही है।" ललित ने चन्तित स्वर मे कहा।

ललित की सूचना ने सरला और बाबू श्यामसुन्दर को चिन्ता मे डाल दिया। सरला व्यग्रता से बोली—"हमे तो कोई सूचना ही नही मिली।"

"क्या कमल यहाँ नही आया।" ललित ने आकुल स्वर मे पूछा।

"यहाँ तो नही आये। न जाने कहाँ होगे, क्या खाते-पीते होगे, कहाँ सोते होगे? कुछ समझ मे नही आता!" सरला व्यथित स्वर में बोली। वह सोचने लगी कि कमल सकोच के कारण यहाँ नही आया। इस भयकर शीत मे न जाने कहाँ रहता होगा। अगर कही उसे कुछ हो गया....। और आग वह न सोच सकी। उसका हृदय भर आया।

"अगर आपको कष्ट न हो तो चलिए और कवियो से पूछे। शायद कुछ पता लग जाये।" ललित ने बाबू श्यामसुन्दर से कहा।

बाबू श्यामसुन्दर सहर्ष तैयार हो गये। वे दोनो कमल की खोज मे चल दिये। शैलजा और शकुन सरला के पास रुक गयी।

"बम्बई की यात्रा कैसी रही ?" सरला ने शकुन से पूछा।

"ठीक ही रही।" शकुन ने उदास स्वर मे कहा।

"कहाँ-कहाँ घूमी कुछ मुझे भी बताइये।"

शकुन उसे बम्बई के दर्शनीय स्थानों के विषय मे बताने लगी।

"आप चुपचाप बैठी है।" बीच मे ही सरला ने शैलजा से कहा। "कुछ आप भी बोलिये।"

"मै क्या बोलूँ ? यहाँ तो टू इज अ कम्पनी थ्रिी इज अ क्राउड। मुझे कमल जी का सग्रह दे दीजिये, और फिर आप लोग मजे से बाते कीजिये।" हसकर शैलजा बोली।

सरला ने उसे सग्रह दे दिया। वह पढने मे लीन हो गयी। शकुन और सरला फिर बातो मे खो गयी।

शकुन ने न तो कामेश्वर के बारे मे कुछ पूछा और न सरला ने ही उसके बारे मे कोई बात चलायी। वे बम्बई के बारे मे बाते करती रही; प्रोफेसर इन्द्र की कडी आलोचना की बुराई करती रही।

प्रोफेसर इन्द्र का नाम शैलजा के कान मे जैसे ही पडा, वह मुडकर बोली—"मै कल ही प्रोफेसर इन्द्र को आलोचना का उत्तर लिखूँगी। मुझे इस सग्रह की कविताए बहुत अच्छी लग रही है।"

"गीत लिखना छोडकर आलोचनाए लिखना शुरू करोगी ?" सरला ने हसकर पूछा।

"क्या कवि आलोचक नही बन सकता ?" कहकर वह फिर पढने मे लग गयी।

जब ललित और बाबू श्यामसुन्दर लौटकर आये तब उनके चेहरे देखकर ही शकुन और सरला समझ गयी कि कमल का कोई पता नही लग सका है। फिर भी सरला ने ललित से पूछा—"कोई पता चला, भैया ?"

"नही।" ललित ने थके हुये स्वर मे कहा। "तीन-चार दिन पहले अखिलेश जी से उसकी भेट हुई थी. ।"

"कौन अखिलेश जी ?" शकुन ने उतावले स्वर मे पूछा।

"जिन्होने गोष्ठी मे ब्रज भाषा के छन्द सुनाये थे। उन्हे कमल बाजार मे मिला था। उन्होने कमल को बताया कि उनकी पत्नी काफी दिनो से क्षयरोग से पीडित है। कमल ने उन्हे दो सौ रुपये दिये। अखिलेश जी ने मना किया पर उसने जबरदस्ती रुपये उनकी जेब मे डाल दिये। उसके बाद वह कहाँ गया, कुछ मालूम नही।" ललित के स्वर मे पीडा उभर आयी।

और उसके बाद वातावरण मे घोर उदासी छा गयी। सब चुपचाप बैठे रहे।

कुछ देर बाद शकुन ने जाने की आज्ञा मागी। सरला ने भोजन करके जाने के लिए कहा, पर शकुन ने फिर कभी भोजन करने का वचन देकर विदा ली। शैलजा और शकुन चली गयी। ललित को सरला ने भोजन के लिए रोक लिया।

शकुन और शैलजा जब घर पहुँची तब उन्होने प्रोफेसर इन्द्र को रायबहादुर के साथ बाते करते हुये पाया। उन दोनो को देखकर वे प्रसन्न होकर बोले—"आओ, आओ! बम्बई घूम आयी ? मेरी आलोचना पढी ? कैसी धज्जियाँ उडायी है कमल की ?"

शकुन ने तो अपने को सयत रक्खा पर शैलजा उबल पडी। वह व्यग्य से बोली—"आप उसे आलोचना कहते है ? व्यक्तिगत आक्षेप और गालियो के अलावा और क्या है उसमे ? मै आपकी उस आलोचना का उत्तर दूँगी और आप की ही भाषा और शैली का प्रयोग करूँगी जिससे आपको भी पता लग जाये कि उसका स्वाद पढने वाले को कैसा लगता है।" और फिर वह तेजी से अपने कमरे की ओर चल दी।

"बहुत क्रुद्ध मालूम होती है शैलजा।" प्रोफेसर इन्द्र बेशर्मी से बोले।

"कई दिनो से कमल लापता है।" शकुन ने धीमे स्वर मे कहा।

"तो यह बात है।" प्रोफ़ेसर इन्द्र भयंकर अट्टहास करके बोले। मेरी आलोचना पढ़कर मुँह दिखाने की हिम्मत नहीं रही। भाग गया। कानपुर से। अभी तो शुरुआत है। हर हफ्ते एक लेख लिखूँगा। उसके विरुद्ध।" और वे फिर अट्टहास कर उठे।

शैलजा को लगा कि उसके कानों के पर्दे फट जायेंगे। वह तेजी से अपने कमरे की ओर दौड़ी।

"राक्षस . ।" वह कमरे में पहुँचकर बड़बड़ाई।

चौबीस

कमल का अग-अग टूट रहा था। वह बहुत थका हुआ था। तीन दिन से पेट मे अन्न का एक दाना भी नही गया था। आँते सूखी जा रही थी। पैर काँप रहे थे और आँखो के सामने अँधेरा छा रहा था। वह मन्द गति से नल के पास गया। पानी पीने के बाद वह तीसरे दर्जे के मुसाफिर खाने की एक खाली बेच पर बैठ गया।

मुसाफिरखाने मे काफी चहल-पहल थी। पर उसे लग रहा था कि वह अकेला है, एकदम अकेला है। ससार मे उसका कोई नही—कोई नही। आँखे बन्द करके वह बेच पर लेट गया।

बाबू श्यामसुन्दर ने जो चार सौ रुपये उसे दिये थे वे उसने अपने मित्रो को दे दिये थे। जब मित्र कानपुर छोडकर बरेली जाने लगा तब उसने उसके हाथ पर दो सौ रुपये रख दिये थे। कुछ दिन पहले एक पत्रिका से दस रुपये आये थे जिनमे से सात रुपये तो खर्च हो गये थे पर शेष तीन उसके पास थे। उसने सोचा था कि दो सौ तीन रुपयो मे तीन-चार महीने कट जायेगे।

जब उसका मित्र चला गया तब कमल एकदम निराधार रह गया था। कही सोने तक की सुविधा न थी। और उस समय उसे ललित का

ध्यान आया था। पर जब वह उसके यहाँ गया तब घर मे ताला बन्द था। परोसी से उसे यह भी ज्ञात हुआ था कि ललित बम्बई गया है। निराश होकर वह लौट आया था और उसे इसी मुसाफिर खाने की बेन्चपर अपना पुराना ओवरकोट ओढकर वह रात काटनी पडी थी।

और आज वह भूखा था—तीन दिन का भूखा। दो सौ रुपये उसने अखिलेश को दे दिये थे। वह उसे एक दिन सडक पर मिल गया था। उसकी पत्नी क्षय रोग मे घुल रही थी। उसने अनुभव किया था कि अखिलेश की आवश्यकता उसकी आवश्यकता से बडी है—बहुत बडी है। और इसी प्रकार उसने एक नगे भिखारी को ओवरकोट दे दिया था। अब उसकी जेब भी खाली थी और राते भी ठिठुर कर काटनी पडती थी।

कमल उठकर बैठ गया। मुसाफिरखाने मे बैठे और लेटे हुये यात्रियों पर उसने उदास दृष्टि डाली। उसे लगा कि उसी की तरह सब भूखे है—नगे है। वह फिर बेच पर लेट गया।

कमल के वस्त्र बहुत गन्दे हो गये थे। टूटी चप्पल धूल से सनी थी। बढी हुई दाढी और रूखे बाल, कीचड भरी आँखे और फटे हुये ओठ देखकर यही अनुमान होता था कि वह कोई भिखारी है।

कमल को लगा, कोई उसे लकडी से कोच रहा है। उसने आँखे खोलकर देखा। एक भारी-भरकम शरीर वाला यात्री उसे अपनी छडी से जगाने की कोशिश कर रहा था।

"क्या है?" उठकर बैठते हुये कमल ने पूछा।

"उधर जमीन पर लेटो।" वह यात्री कडे स्वर मे बोला। "बेच मुसाफिरो के लिए है, भिखमगो के लिए नही।"

कमल का शरीर क्रोध से काँपने लगा। उसकी इच्छा हुई कि वह उस असभ्य यात्री की तोद मे एक मुक्का मार कर कहे कि भिखारी मै नही, तू है! मगर फिर उसने अपने क्रोध को दाब लिया। बेच के कोने मे खिसक-कर दुर्बल और विनम्र स्वर मे बोला—"बिगडते क्यो हो, भाई? काफी जगह है। आप भी बैठ जाइये।"

उस यात्री ने कमल के गन्दे वस्त्रो की ओर दृष्टि डालकर फिर अपने स्वच्छ वस्त्रो की ओर देखा। कमल के पास बैठना उसने पसन्द न किया वह मुह बनाकर व्यग्य से बोला—"मै तुम्हारे पास बैठूगा। जल्दी नीचे उतरो नही तो अभी बुलाता हूँ पुलिस को।"

पुलिस बुलाने की धमकी सुनकर कमल भडक उठा। उसने तेज स्वर मे कहा—"जाओ बुला लाओ पुलिस को। मुझे चोर-उचक्का समझ रक्खा है क्या ? मै इसी बेच पर बैठूगा।"

कमल पैर फैलाकर बैठ गया। आस-पास बैठे हुये यात्री हँस पडे।

कमल की बात और यात्रियो की हँसी से चिढकर वह हाँफता हुआ चाय के स्टॉल की ओर गया और वहाँ खडे हुये सिपाही को बुला लाया।

"यह मुझे बेच पर नही बैठने देता।" वह छडी से कमल की ओर सकेत करके सिपाही से बोला—"मुझे गाली देता है।"

"क्यो बे, बेच से उतरता है या नही ?" सिपाही कडककर बोला। "साले दुनिया भर के लुच्चे-लफगे यही इकट्ठा होते है। जा, भाग यहाँ से नही तो खाल उधेड दूँगा।"

कमल का रक्त खौल उठा। खडा होकर बोला—"मुह सँभाल कर बात करो।"

"अच्छा बच्चू, होश ठिकाने नही है क्या ?" सिपाही आगे बढकर बोला। "कई दिनो से तुम्हे यहाँ देख रहा हूँ। कितनी जेबे साफ की है अब तक ?"

"मै जेब काटने वाला नही, शरीफ आदमी हूँ।" कमल तेज स्वर मे बोला।

"वह तो जनाब की हुलिया ही बता रही है।" ठहाका मारकर हँसता हुआ सिपाही बोला। आस-पास के यात्री भी हँस पडे।

मोटा यात्री बेच पर बैठ गया। वह सिपाही से बोला—"आओ जमादार जी ! जरा पान-तमाखू खा लो। दिन भर खडे-खडे थक जाते होगे।"

सिपाही भी बेच पर बैठ गया। कमल उसी प्रकार खडा रहा।

"अबे जाता है या नहीं।" सिपाही कड़कर बोला। "आज से यहाँ आया तो खैर नहीं है। यह मुसाफिर खाना है। चोर-उचक्कों का अड्डा नहीं।"

अपमान की तिलमिलाहट कमल की आँखों में आँसू ले आयी। वह भूख भूल गया, शीत भूल गया। उसे याद रही अपमान की आग—दहकती हुई गर्म ज्वाला।

धीरे-धीरे वह मुसाफिरखाने के बाहर आ गया। मोटे यात्री और सिपाही का अट्टहास उसके कानों में गूँज रहा था। वह चलता रहा, चलता रहा। उसे मालूम न था कि वह कहाँ जा रहा है, किधर जा रहा है।

और जब एक पालतू कुत्ता भौंकता हुआ उसकी ओर झपटा तब उसे होश आया।

उसने देखा, वह सरला के बँगले के फाटक पर खड़ा है।

और फिर उसे लगा कि फाटक घूम रहा है, बंगला घूम रहा है, जमीन घूम रही है। हल्की सी झलक उसे पास आती हुई सरला की दिखाई दी और फिर अंधकार गहन अंधकार !

पच्चीस

कमल का कोई समाचार न मिलने से सरला बहुत चिन्तित थी। वह रात को न तो ठीक से भोजन ही कर सकी थी और न सो ही सकी थी। उसकी व्याकुलता प्रतिपल बढ़ती जा रही थी। वह बेचैनी से काश्मीरी शाल ओढ़े बरामदे में टहल रही थी। तरह-तरह के विचार उसके मस्तिष्क में उठ रहे थे।

सहसा जोर से कुत्ता भौंका। उसकी विचार-धारा भंग हो गयी। चौंककर उसने फाटक की ओर देखा। मलीन वस्त्र पहने क्लान्त कमल को देखकर वह तेजी से फाटक की ओर बढ़ी। उसे देखकर कुत्ता मौन हो गया। तभी उसने देखा कि कमल झूम रहा है। वह जोर से दौड़ी और इससे पहले कि कमल अचेत होकर भूमि पर गिरे, उसने उसे सँभाल लिया। कमल का शिथिल शरीर सरला का सहारा पाकर गिरने से बच गया।

सरला की तेज पुकार सुनकर नौकर दौड़े आये।

"इन्हें सँभालकर उठा लो।" वह नौकरों से बोली। "देखो, चोट न लगे। अरे जल्दी करो।"

नौकरों ने कमल को उठाकर सरला के पलँग पर लिटा दिया। सरला ने रजाई उढ़ा दी। फिर वह गोमती को कमल के पास छोड़कर डाक्टर

को फोन करने गयी। डाक्टर के बाद उसने बाबू श्यामसुन्दर और शकुन को भी सूचना दे दी।

सरला जब कमरे मे पहुँची तब भी कमल मूछित पडा था। उसने गोमती से रुद्धकठ मे कहा—"इन्हे क्या हो गया है ? मेरा . मेरा दिल बैठा जा रहा है।"

"घबराओ मत, भाभी ! कमजोरी के मारे अचेत हो गया है। अभी ठीक हो जायेगा। मै अभी आती हूँ गरम दूध लेकर।" कहकर गोमती उठकर बाहर चली गयी।

सरला पलँग के पास कुर्सी डालकर बैठ गयी। लाख रोकने की चेष्टा करने पर भी उसकी आँखे भीग गयी।

तभी कमल ने कराह कर धीरे-धीरे आँखे खोली। वह आश्चर्य से चारो ओर देखने लगा। फिर उसकी दृष्टि सरला के चेहरे पर जम गयी। सरला की रोती हुई आँखे हँस पडी।

"मै . मै कहाँ, हूँ ?" उठकर बैठने की चेष्टा करता हुआ कमल दुर्बल स्वर मे बोला।

"अरे, उठिये मत !" सरला ने उठकर उसे लिटाते हुये कहा। "आप अपने ही घर मे है।"

"पानी !"

"पानी नही मिलेगा। यह लो गरम दूध।" कहती हुई गोमती आ गयी। उसने सहारा देकर कमल को बिठाया और दूध का गिलास उसके मुह से लगा दिया।

दूध पीकर कमल फिर लेट गया। उसकी दुर्बलता कुछ कम हुई! शरीर मे गर्मी का सचार हुआ। उसने धीमे स्वर मे कहा—"मै यहाँ कैसे आ गया ?"

गोमती गिलास लेकर चली गयी।

"आप फाटक पर खडे थे। तभी आपको मूर्च्छा आ गयी। मै आपको यहाँ ले आयी।" सरला ने उत्तर दिया।

कमल मुस्कराया। धीरे-धीरे उसे सब कुछ याद आने लगा। मुसाफिर खाना, मोटा यात्री, सिपाही, और फिर भौंकता हुआ कुत्ता!

"मैं भिखारी नहीं हूँ; चोर नहीं हूँ; मैं शरीफ आदमी हूँ।" कमल मन्द स्वर में बड़बड़ाया।

सरला की समझ में उसकी बात न आयी। वह परेशानी में उसकी ओर देखने लगी।

"सेठ मुझे भिखमगा समझता है, सिपाही चोर समझता है; कुत्ता लफंगा समझता है। मगर मैं शरीफ आदमी हूँ। हूँ न?" कहकर कमल ने सरला की ओर देखा। उसकी आँखों में आँसू थे।

सरला के हृदय में एक तूफान सा उठा। उसकी आँखों में आँसू आ गये।

उसी समय डाक्टर की कार पोर्टिको में आकर रुकी। एक क्षण बाद ही गोमती के साथ डाक्टर ने कमरे में प्रवेश किया।

"क्या होश आ गया?" कमल को आँखें खोले देखकर डाक्टर ने पूछा।

सरला ने सिर हिला दिया।

डाक्टर जब नाड़ी देखने लगा तब कमल विरोध के स्वर में बोला—"मैं ठीक हूँ, एकदम ठीक हूँ। मुझे कुछ नहीं हुआ है।"

"आप चुपचाप लेटे रहिये।" डाक्टर ने कहा और नाड़ी, पेट और सीने की जाँच करके बोला—"कमजोरी काफी है। हजरत कई दिनों के भूखे मालूम होते हैं। ठंड का भी असर है। बहुत सावधानी की जरूरत है।"

उसके बाद उसने पेन्सिलिन का एक इंजेक्शन दिया। फिर गोमती को बाहर ले जाकर कहा—"इनको गर्म दूध और ब्राँडी दीजिये। सीने की सिकाई करती रहिये। सुबह फिर आऊँगा।"

डाक्टर चला गया। गोमती रसोई घर में चली गयी।

"यह क्या किया आपने?" सरला सिसकती हुई कमल से बोली। "आप यहाँ क्यों नहीं आये? भूखे रहकर ठंड खाने की क्या जरूरत थी?"

कमल ने कोई उत्तर न दिया। उसकी आँखो की कोरो से दो आँसू निकलकर तकिये पर लुढक गये।

"आप मुझे गैर समझते है। क्या . क्या मै आपकी कोई नही? क्या आप अपने मित्र की बहन को पराया समझते है?" और फिर सरला दुखी हो कर फूट-फूट कर रोने लगी।

"रोओ मत, सरला! मै कहता हूँ रोओ मत!" कमल टूटे और दुखी स्वर मे बोला। "मै इस योग्य नही कि मेरे लिए कोई रोये। रोने के लिए तो मै बना हूं। रोना मेरे भाग्य मे है—अपनी माँ के लिए, पिता के लिए और उन सबके लिए जो दुखी है; दीन है, दरिद्र है, अभागे है।" बोलते-बोलते उसकी आँखो से आँसुओ की अविरल धार बहने लगी।

सरला ने अपनी साडी के अचल से उसके आँसू पोछते हुये कहा—"आँसू व्यर्थ नही जायेगे। हर आँसू क्रान्ति के बीज को सीचेगा।"

सरला का वाक्य समाप्त भी न हो पाया था कि कमरे मे बाबू श्यामसुन्दर आ गये। उनके पीछे ही ललित, शकुन और शैलजा ने भी प्रवेश किया। गोमती भी रबर के थैले मे गर्म पानी भरकर ले आयी। थैला कमल के सीने पर रखकर गोमती ने रजाई ठीक से उढा दी। फिर वह चली गयी।

उन सबको देखकर कमल ने उठने की फिर चेष्टा की मगर सरला ने उठने नही दिया।

"कहाँ गायब हो गये थे?" ललित ने पास बैठकर धीमे स्वर मे पूछा।

"तुम बम्बई से कब आये?" कमल का प्रश्न था।

"कल आया हूँ। मगर तुम्हे. . ।"

"तुम्हारे घर गया था। ताला बन्द था। फिर मुसाफिरखाने को घर बनाया। आज सिपाही ने चोर कहकर निकाल दिया।"

"और तब आपको यहाँ आने का होश आया।" हँसकर बाबू श्याम-सुन्दर बोले। "अगर पहले ही आ गये होते तो यह दशा क्यो होती?"

"मै यहाँ होश मे नही, बेहोशी मे आया हूँ। होश तो तब आया जब कुत्ता भौका।" कमल रुक-रुक कर धीमे स्वर मे बोला—"आदमी तो

आदमी, जानवर भी मुझसे घृणा करते हैं।"

"भौकने वाले कुत्ते ही होते हैं, आदमी नहीं। प्रोफेसर इन्द्र का भौकना आपने सुना ही होगा।" इस बार शैलजा बोली।

कमल मुस्कराया। एक क्षण बाद धीमे स्वर में बोला—"उनका मैंने लेख पढ़ा था! वे विद्वान हैं पर उनका दृष्टिकोण गलत है। समय की गति को वे नहीं पहचानते।"

"मैंने उनके लेख का उत्तर लिखा है। कल 'विश्वमित्र' में छप जायेगा।" शैलजा ने कहा। "और मैंने अपने लेख में उन्हीं की भाषा और शैली का प्रयोग किया है।"

उसकी बात सुनकर सभी मुस्करा पड़े। शैलजा समझती थी कि कमल भी प्रसन्न होगा। पर वह व्यथित होकर बोला—"यह तो बुरी बात है। ऐसा नहीं होना चाहिए। अगर आप भी भौंकेंगी तो . . ।"

और कमल की बात सुनकर शैलजा रो पड़ी। "कितने महान हैं आप ? काश ! प्रोफेसर इन्द्र यह जान सकते।" वह आर्द्र स्वर में बोली। "मैं अभी फोन किये देती हूँ। लेख नहीं छपेगा।"

कमल ने सन्तोष की साँस ली। शैलजा बाहर चली गयी।

"मुझे तो शायद पहचाना नहीं होगा ?" शकुन शरारत से बोली।

"जिस दिन आपको न पहचानूँ उस दिन समझूँगा कि अपने आपको भूल गया।" कमल ने मुस्करा कर कहा।

'अब आराम करने दो।" कहती हुई गोमती आयी। उसके हाथ में दूध का गिलास था। दूध में दस बूँदे ब्रांडी की भी डाल दी थीं। कमल के पास जाकर उसे उठाती हुई स्नेह से बोली—"लो बेटा, दूध पी लो।"

"अभी तो पिया है।" कमल ने अनिच्छा प्रकट की।

"पी लो, बेटा !" कहकर उसने गिलास उसके मुह से लगा दिया।

कमल ने दूध पी लिया।

"अब सो जाओ।" कहकर गोमती ने रजाई ठीक की और फिर सब की ओर मुड़कर बोली—"बाहर आओ सब लोग।"

सब बाहर चले गये।

कमल थका तो था ही। उसकी आँखें झपने लगी। पाँच मिनट बाद ही उसे गहरी नींद आ गयी।

× × ×

धीरे-धीरे कमल का स्वास्थ्य सुधरने लगा।

प्रोफेसर इन्द्र कमल के विरुद्ध जहर उगलते रहे, उनकी लेखनी निन्दा की आग बरसाती रही। उनकी आलोचनाओं ने हिन्दी-ससार का ध्यान कमल के काव्य-सग्रह की ओर आकृष्ट कर दिया: आलोचक गण दो वर्गों में बंट गये। दकियानूसी आलोचकों ने उसके सग्रह को पागल के प्रलाप की सज्ञा दी, नयी मान्यताओं में आस्था रखने वाले आलोचकों ने उसे पिछले दस वर्षों में प्रकाशित होने वाले काव्य-सग्रह में सर्वश्रेष्ठ कहा।

कमल निन्दा से न तो दुखी हुआ और न प्रशसा में फूला। वह एक तटस्थ पाठक की तरह सबकी आलोचनायें पढ़ता रहा।

एक दिन वह सरला से बोला—"मुझे कब तक बीमार बनाये रहोगी? अब मैं अच्छा हो गया हूँ। मुझे जाने दो।"

"कहाँ जायेंगे?" सरला ने मन्द स्वर में पूछा।

"दुनिया बहुत बडी है।"

"यह घर दुनिया के बाहर है क्या! आप अब कही नहीं जा सकते।' सरला ने दृढ़ता से कहा।

लेटे-लेटे मैं ऊब गया हूँ।"

"आप लान में टहल सकते हैं।"

"मैं जाना चाहता हूँ।" कमल का स्वर रूखा था।

"क्यो? क्या यहाँ कोई असुविधा है?" सरला ने दुखी स्वर में पूछा।

"मैं असुविधाओं का आदी हूँ। यहाँ हर सुविधा है। इसीलिए मुझे लगता है।" कमल अपनी दृष्टि दीवार की ओर करके बोला। फिर

रुककर धीमे स्वर मे कहा—"सच बात तो यह है कि मैं बिना कुछ किये तुम्हारी करुणा का अनुचित लाभ उठाना नही चाहता। मुझे जाना ही चाहिए।"

"अगर आप यहाँ अपना अधिकार नही समझते तो . तो . आप जा सकते हैं। मैं नही रोकूगी। मैं होती ही कौन हूँ रोकने वाली?" सरला अवरुद्ध कठ से बोली। उसकी आँखो मे आँसू आ गये। वह उठकर तेजी से बाहर चली गयी।

कमल सोच मे पड गया। सरला के दिल को दुखाने की कठोरता उसमे न थी। फिर भी कब तक इस प्रकार उसके यहाँ टुकडे तोडता रहे। अब वह स्वस्थ है; परिश्रम कर सकता है। नही, उसे जाना ही चाहिए, जाना ही चाहिए!

उठकर उसने वे वस्त्र उतार दिये जो सरला ने उसे दिये थे। अपने गन्दे और फटे वस्त्र पहन कर उसने चप्पल पहनी और बँगले से बाहर चला गया।

और जब चौकीदार ने सरला को सूचना दी कि कमल बाबू चले गये है तब वह चुपचाप अपने कमरे मे जाकर लेट गयी। उसकी आँखो से आँसू बहते रहे।

आकाश बादलो से घिरा था। अचानक पानी बरसने लगा मानो बादल भी सरला के प्रति सहानुभूति दिखा रहे हो। हवा मे भी तेजी आ गयी। सरला ठड से थरथर काँपने लगी। उसने रजाई ओढ ली।

घटे भर बाद ही कमल लौट आया। उसके वस्त्र भीगे थे और वह शीत के कारण पीपल के पत्ते की तरह काँप रहा था।

"मैंने जाने की कोशिश की, मगर मै जा न सका। मै लौट आया हूँ, सरला।" उसने कम्पित स्वर मे कठिनाई से कहा।

सरला विद्युत वेग से उठकर बैठ गयी। कमल को भीगा देखकर वह घबरा गयी।

"आप जल्दी मे वस्त्र बदल लीजिये। मै गर्म दूध और ब्राडी लाती

हूँ।" कहकर सरला तेजी से बाहर चली गयी।

गोमती के साथ जब वह लौटकर आयी तब कमल वस्त्र बदल कर पलंग पर रजाई ओढे लेटा था। फिर भी वह काँप रहा था।

सरला ने उसे उठाकर दूध पिलाया। खाली गिलास मेज पर रखकर उसने पूछा—"अब भी ठंड लग रही है ?"

कमल ने सिर हिलाया।

सरला ने रजाई के ऊपर दो कम्बल डाल दिये। कमल फिर भी काँपता रहा। घबरा कर सरला ने उसके मस्तक को छूकर देखा। माथा गर्म तवे की तरह जल रहा था।

"अरे, आपको तो बुखार है।" कहकर वह डाक्टर को फोन करने चली गयी।

गोमती कमल के पास उदास होकर बैठी रही।

डाक्टर आया और देख-भाल कर उसने सरला को एक ओर ले जाकर कहा—"डबल निमोनिया का अटैक है। आपने इन्हे भीगने क्यो दिया ?"

सरला क्या उत्तर देती। बिचारी सिसकने लगी।

"घबराने की बात नही है। मै इंजेक्शन देता हूँ। पेन्सिलिन के इंजेक्शन बराबर लगेंगे।" कहकर डाक्टर इंजेक्शन देने की तैयारी करने लगा।

बाबू श्यामसुन्दर जब घर आये तब कमल की दशा देखकर घबरा गये। कमल का ज्वर बढता जा रहा था। उन्होने शकुन को फोन किया।

ज्वर की तेजी मे कमल बकने लगा। रह रह कर वह चौक पडता और चीखकर कहता—"मै चोर नही हूँ। मै शरीफ आदमी हूँ—शरीफ आदमी हूँ।"

शकुन भी शैलजा और ललित को लेकर आ गयी। कमल ने आँखे खोलकर सबको देखा पर पहचान किसी को न पाया।

"मुझे नही पहचानते ?" शकुन कमल के पास बैठकर मीठे स्वर मे बोली।

"तुम ...? कौन हो तुम ? मुझे लेने आयी हो ? मगर मैं नहीं जाऊँगा। कभी नही जाऊँगा।" कमल बुदबुदाया।

शकुन कमरे के कोने मे जाकर रोने लगी। सरला उसे समझाने गयी पर समझाते-समझाते स्वय रोने लगी।

डाक्टर ने तीसरी सुई लगायी।

"तुम मुझे पकडने आये हो ? मगर मैं चोर नही हूँ। देखो, अब तो मेरे कपडे गन्दे नही है। अब तो मुझे शरीफ आदमी समझते हो ?" कमल ने डाक्टर का हाथ पकड कर कहा।

डाक्टर ने सम्मति सूचक सिर हिला दिया।

कमल ने आँखे बन्द कर ली।

सरला और शकुन उसके पास आ गयी।

दीवार पर लगी घडी की सुइयाँ आगे खिसकती रही।

और जब शकुन और शैलजा नही लौटी तो रायबहादुर भी बाबू श्यामसुन्दर के यहाँ पहुँच गये।

कमल ने आँखे खोलकर सबकी ओर देखा। उसकी दृष्टि सरला की ओर टिक गयी। वह थके स्वर मे बोला—"मै यही रहूँगा। यह मेरा घर है। कोई बुलाने आये तो मना कर देना।"

सरला उसके मस्तक पर हाथ फेरने लगी। न जाने क्यो कमल की आँखो मे आँसू आ गये।

सहसा कमल चीखकर बोला—"देखो, मेरा सपना पूरा हो रहा है। वह देखो, दीवारे गिर रही है ! खाइयाँ पट रही है !! और मुद रही है दरारे !!! मैं जा रहा हूँ। मुझे रोको मत, मुझे कोई मत रोको।"

और कमल ने रजाई-कम्बल फेककर उठने की कोशिश की। डाक्टर ने उसे फिर लिटा दिया।

डाक्टर भी परेशान था। वह फिर सुई लगाने की तैयारी करने लगा।

"मैं अब तक अपने को छलता रहा। मैंने घृणा से प्यार किया और प्यार से घृणा।" कहकर कमल रोने लगा।

उसे रोता देखकर सभी की आँखों में आंसू आ गये।

"तुम लोग क्यों रोते हो। रोना मेरा काम है। मगर अब मैं भी हँसूंगा। मेरी माँ मुझे बुला रही है। अरे, उधर देखो। वह खड़ी है उस कोने में।" और इससे पहले की डाक्टर उसकी बाँह में इंजेक्शन लगा सके, कमल का शरीर शिथिल पड़ गया।

हवा का एक झोंका आया और जीवन-शिखा कांपकर बुझ गयी।

घर में कोहराम मच गया।

और दूसरे दिन जब कमल की अर्थी उठी तो प्रोफेसर इन्द्र ने सबसे पहले अपना कन्धा आगे बढ़ा दिया। शायद वे अपने पाप का प्रायश्चित इस प्रकार करना चाहते थे।

'रामनाम सत्य है' की ध्वनि पास से दूर होती गयी।

सरला, शकुन, शैलजा और गोमती की सिसकियां हवा में गूँजती रहीं, गूंज रही हैं और शायद तब तक गूंजती रहेंगी जब तक कमल का सपना पूरा नहीं होता, जब तक दीवार नहीं टूटती, खाइयाँ नहीं पटतीं और मुंदती नहीं दरारें।

इति